TEXT FLY
WITHIN THE
BOOK ONLY

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_186139

UNIVERSAL
LIBRARY

OUP—67—11-1-68—5,000

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No H398·8 T83G Accession No P. G. H1366

Author त्रिपाठी, रामनरेश रचना

Title ग्रामसाहित्य भाग - 1 1951

This book should be returned on or before the date last marked below

ग्राम-साहित्य

पहला भाग

[सोहर, अन्नप्राशन, मुण्डन, जनेऊ, नहछू और विवाह के गीत]

सम्पादक
रामनरेश त्रिपाठी

प्रकाशक
हिन्दी मन्दिर, प्रयाग

मिलने का पता
हिन्दी मन्दिर (शाखा)
सुलतानपुर (अवध)

पहला संस्करण | जनवरी १९४१ | मूल्य चार रुपये

प्रकाशक
बसंतकुमार
हिन्दी मन्दिर (शाखा)
सुलतानपुर (अवध)

लोकमान्य प्रेस, दरियागंज, देहली में मुद्रित।

भूमिका

ग्राम-साहित्य इतना विशाल है कि उसके सामने शिक्षितों का साहित्य दाल में नमक के बराबर भी नहीं। यह कंठस्थ-साहित्य देश के सब प्रान्तों, भाषाओं और छोटी-छोटी बोलियों में भी अपरम्पार भरा हुआ है।

मैंने सन् १९२५ से इसका संग्रह शुरू किया था और उसमें से कुछ चुने हुए ग्राम-गीत शिक्षितों के सामने नमूने के तौर पर रखने के लिये कविता-कौमुदी के पाँचवें भाग में पुस्तकाकार प्रकाशित भी कराया था। सन् १९४२ से मैंने लेखन और प्रकाशन-कार्य से छुट्टी लेली थी, इससे उक्त पुस्तक भी अप्राप्य हो गई थी। इधर ग्राम-साहित्य की ओर जनता की अभिरुचि दिनोंदिन बढ़ रही है, इससे मेरे मित्रों का आग्रह था कि मैं ग्राम-साहित्य का जो कुछ संग्रह मेरे पास है, उसे जनता के लिये सुलभ कर दूं। अपने साहित्यिक कार्यों में मैं स्वयं भी इस काम को ज्यादा महत्त्व देता हूँ, इससे मैं फिर इस ओर प्रवृत्त हुआ हूँ।

ग्राम-गीत (कविता-कौमुदी, पाँचवाँ भाग) के मैंने दो भाग कर दिये। दोनों की भूमिका भी बढ़ा दी। शेष भाग संग्रह में से नये बढ़ा दिये।

आशा है, इनसे ग्राम-साहित्य से रुचि रखनेवाले सज्जनों को प्रसन्नता प्राप्त होगी और साहित्यकारों को लोकोपकारी साहित्य के सृजन में प्रोत्साहन मिलेगा।

बसन्त-निवास
सुलतानपुर (अवध)

विषय-सूची

विषय	पृ० सं०
गीत-यात्रा	१
ग्राम-साहित्य की रूप-रेखा	३७
सोहर	७८
अन्न-प्राशन	२२३
मुण्डन	२२५
जनेऊ के गीत	२३०
नहछू	२५५
विवाह के गीत	२५७
अनुक्रमणिका	३७३

ग्राम-साहित्य

पहला भाग

गीत-यात्रा

एक विचित्र प्रकार की शिक्षा के प्रभाव से हम लोग अपने देश से बहुत दूर हो गये हैं। हम अपनी भाषा के थोड़े से शब्दों की परिधि में कैद है। न हम उस परिधि से बाहर जाना चाहते हैं और न वे शब्द देश के अन्तर्नाद को हमारी सीमा में प्रवेश करने देते हैं। हम अपने देश में रहते हुए भी विदेशी-जैसे हैं।

वह देश कहाँ है? जहाँ वाल्मीकि, व्यास, कालिदास और भवभूति की आत्माएँ निवास करती हैं। वह देश कौन-सा है? जिसके घर-घर में तुलसीदास बोल रहे हैं। सूरदास बालकों का रूप धरकर कहाँ खेल रहे हैं? कबीर कहाँ अपनी आत्मा निचोड़कर अमृत-रस बाँट रहे हैं?

गंगा की उज्ज्वल किन्तु चञ्चल, यमुना की श्यामल किन्तु गम्भीर अजस्र धारा के साथ जिनकी जीवन-धारा गीतों के रूप में प्रवाहित है, क्या हम उनसे दूर हुये जा रहे हैं?

अरे! ढाक के घने जङ्गल में, आम, महुवे, पीपल, इमली और नीम की घनी और शीतल छाया में, नालों के कलरव के साथ, तुलसी के चबूतरे के निकट, चमेली, माधवी, कामिनी और मालती के फूलों की सुगंध में, वंशी की ध्वनि मे, कोकिल के आलाप में, लहराती हुई पुरवा

हवा में और लहलहाते हुये खेतों के किनारे जीवन का जो प्रवाह अनादि काल से प्रवाहित है, क्या हम उस प्रवाह से अलग हो गये हैं ?

क्या हमारी एक विचित्र रहन-सहन हमें उस देश मे जाने नहीं देती ? क्या अल्पज्ञान का विशाल अभिमान उस देश की शान्ति-दायिनी ध्वनि को हमारे समीप पहुंचने नहीं देता ? क्या एक नव-निर्मित भाषा हमारे और उस देश के बीच मे लोहे की दीवार की तरह खड़ी है ? इतनी आसानी से हमे इतनी दूर कौन उठा ले गया ?

पास बैठे हैं मगर दूर नजर आते है ।

आओ, एक बार चलकर हम अपने उस पुराने देश को देखें तो सही, जो नालों के किनारे, आम के घने बागो के बीच में बसा हुआ है । जिस देश में घर-घर मे चंदन के वृक्ष और दरवाजो में चंदन के किवाड़े लगे हैं । जहाँ सब लोग सोने के थालों में भोजन करते हैं, सोने के बरतनो मे पानी पीते है । जहाँ घर-घर मे चित्रशालाएँ है । जहाँ की सब स्त्रियाँ चित्र-कला मे निपुण है और सब पुरुष चित्रो की सुन्दरता पर मुग्ध होने का हृदय रखते है । जहाँ घरों के पिछवाड़े घनी बेसवाड़ी है । आम और महुवे के पेड़ों की छाया जहाँ रास्तों को शीतल और सुखद बनाये रखती है । जहाँ प्रत्येक कंठ से गान निकलता है । जहाँ की चौपालों में राजनीति के जटिल प्रश्न एक-एक वाक्य से सुलझाये जाते हैं । जहाँ मनुष्यमात्र के जीवन का निर्दिष्ट लक्ष्य और निश्चित पथ है । जहाँ धर्म के बंधन में सब प्रकार की स्वतन्त्रता है । जहाँ प्रेम का नशा और आनन्द का उन्माद है । जहाँ के पशु-पक्षी, वृक्ष-लता, सूर्य-चन्द्र और मेघ भी मनुष्य-जीवन के सहचर हैं । जहाँ घटायें पतियों को घर बुला लाती है । जहाँ कोयलें विरहिणियों के संदेश ले जाती हैं कि 'फागुन आ गया है । जहाँ कन्याएँ अपने लिये स्वयं वर चुनती हैं । जहाँ वर अपने लिये वधू पसन्द कर सकते हैं । जहाँ विवाह वासना-तृप्ति के लिये नहीं, बल्कि लोक-सेवा

के लिये उत्तम सन्तान उत्पन्न करने की इच्छा से प्रेरित होकर किया जाता है। जहा माता के अकृत्रिम स्नेह की नदी, स्त्री के अखण्ड अनुराग की तरङ्गिणी, बहन के अपार प्रेम की सरिता और प्रकृति के शाश्वत शृङ्गार की धारा सदा प्रवाहित है।

आओ, उस देश को चलें।

क्या वह देश कहीं दूर है? नहीं, इतना समीप है, जितना समीप कोई दूसरा देश हो नहीं सकता। सिर्फ़ आँखों का चश्मा उतार डालना होगा, और एक बार अपनी आत्मा का स्मरण कर लेना होगा।

घटनायें जीवन की सीढ़ियां है। एक दिन एक घटना ने मेरे लिए उस देश का द्वार खोल दिया।

शाम हो रही थी। सूरज के डूबने मे १०-५ मिनट की देर थी। जौनपुर से बदलापुर की सड़क पर उस दिन का वही शायद आख़िरी इक्का था। इससे सड़क के किनारे बैठी हुई एक बुढ़िया को अपनी घास के लिये बड़ी ही चिन्ता थी। वह घबराई हुई आँखों से डूबते हुए सूर्य को भी देख लिया करती थी और इधर घास ले लेने के लिये इक्केवाले की खुशामद भी करती जाती थी। अंत में बुढ़िया दो आने से उतर कर चार पैसे पर कुल घास देने को राजी हो गई। पर इक्केवाले को घास की ज़रूरत ही नहीं थी। वह बातों मे ही टाल-मटोल कर रहा था।

मुझे अवकाश था; क्योंकि पहिये की कील निकल गई थी, और इक्केवान उसे दुरुस्त करने मे लगा था। मैं बुढ़िया की ओर आकर्षित हुआ। मैंने देखा—बुढ़िया की अवस्था साठ से कम न होगी। शरीर सूखकर हड्डी का ढांचा-मात्र रह गया था। चेहरे पर असंख्य झुर्रियां थीं। आँखें धुँधली हो गई थीं। बुढ़िया जो धोती पहने थी, वह सैकड़ों स्थानों पर मोटे डोरे से भद्दे तौर पर सिली हुई थी। फिर भी धोती के किनारे कई जगह से फटे थे और उनके कोने लटक रहे थे। मैं

बुढ़िया से देहाती बोली में बातें करने लगा। वह भी अपनी बोली में जवाब देने लगी। जिसका भावार्थ यह है—

मैंने पूछा—बुढ़िया, सच-सच बताओ, यह घास कितने को दोगी ?

बुढ़िया ने कहा—एक आना पैसा मिल जाता तो मेरा काम चल जाता।

मैंने पूछा—आज क्या तुम्हे एक आने पैसे की बड़ी ज़रूरत है ? बुढ़िया ने मेरी ओर कृतज्ञता से भरी हुई एक दृष्टि डाली। मानो इतना पूछकर मैंने उस पर कोई बडा उपकार किया था। वह एक साँस खींचकर कहने लगी—हाँ, इसमें से दो पैसा तो मै बनिये को देती। एक महीना हुआ उससे नमक उधार ले गई थी। कई दिन से नमक चुका है। एक पैसे का आज नमक ले जाती। मेरे एक नाती है, उसके लिये एक पैसे का गुड ले जाती। कई महीने से उसको गुड़ देने का वादा कर रक्खा है। कल शाम से ही वह गुड़गुड़ चिल्ला रहा है। आज मै बड़े तड़के यह सोच कर उठी थी कि जल्दी घास बेंचकर पैसे मिल जायँगे तो नाती के लिए गुड़ भी लेती जाऊँगी। आते वक्त मै उस से वादा कर भी आई थी। वह मेरी राह देखता खड़ा होगा। देर हो जायगी, तो वह सो जायगा।

यह कहते-कहते बुढ़िया की आँखें भर आईं। उसके मन की वेदना मैं अब समझने लगा। मैंने पूछा—बुढ़िया ! अगर यह घास तीन ही पैसे को बिकी, तब क्या-क्या खरीदोगी ?

बुढ़िया का संतोष बातों से नहीं हो सकता था। उसका मन तो नाती से किये हुए वादे में विकल था। उसने कहा—भैया ! आपको लेना तो है नहीं।

मैंने कहा—मैं तुम्हारी घास खरीद लूँगा। तुम मुझसे बातें करो।

बुढ़िया कहने लगी—तीन ही पैसे मिलेंगे, तो दो बनिये को दूँगी।

क्योंकि उसका उधार बहुत पुराना हो गया है। उसके डर से मेरी डघर की राह बन्द है। एक पैसे का गुड़ ले जाऊँगी।

मैंने पूछा—और नमक ?

बुढ़िया ने कहा—जैसे चार रोज़ से अलोना खा रही हूँ, वैसे एक रोज़ और खा लूँगी। कल फिर तड़के उठकर घास करूँगी। उससे कुछ पैसे मिल जायँगे, तो नमक ले जाऊँगी।

मैंने पूछा—आज तुमने दिन भर कुछ खाया नहीं ?

बुढ़िया ने कहा—जंगल मे खाती क्या ? पहर रात रहे उठी हूँ। तब से पहर दिन रहे तक घास करती रही हूँ। कहीं घास रह भी नहीं गई है। और बाबूजी ! अब पौरुष भी थक गया है। इतनी देर मे यही इतनी-सी घास मिली है। सोचा था कि सड़क पर आते ही वह बिक जायगी, मैं जल्दी ही घर लौट जाऊँगी और नाती को गुड़ खिलाकर तब मै पानी पीऊँगी।

मैंने पूछा—दिन मे तुमको भूख नहीं लगती ?

बुढ़िया ने कहा—लगती क्यो नहीं ? पर खाऊँ क्या ? बहुत जोर की भूख लगती है तो पानी पी लेती हूँ।

मैंने पूछा—बुढ़िया ! तुम्हारी यह धोती कितनी पुरानी है ?

बुढ़िया ने कहा—यह तीसरा बरस चल रहा है।

मैंने पूछा—नई धोती नहीं खरीदी ?

बुढ़िया ने कहा—बेटा ! कहाँ से खरीदूँ ? पहले जब शरीर मे दम था, तब कुछ काम ज्यादा करती थी और जो पैसे मिलते थे, उनमे से काट-कपट कर कुछ जमा करती जाती थी। बरस डेढ़ बरस में डेढ़-दो रुपये जमा हो जाते थे, उनसे मैं एक धोती ले लेती थी। अब खाने ही भर को नहीं अँटता, तो पैसे बचाऊँ कहाँ से ?

मैंने पूछा—तुम्हारे कै लड़के हैं ?

बुढ़िया ने कहा—एक।

मैंने पूछा—क्या वह तुमको खाने को नहीं देता ?

बुढ़िया ने कहा—वही तो अकेला घर में कमाने वाला है। वह है, उसकी स्त्री है और एक मेरा नाती है। बहू को जब से लड़का हुआ है, तब से वह बीमार ही रहती है। वह कमा सकती ही नहीं। अकेला मेरा लड़का दिन भर मजदूरी करके जो कुछ लाता है, वह उन्हीं तीनों के लिये पूरा नहीं पड़ता। मुझे कहाँ से दे? मैं जो दो-चार पैसे कमा लेती हूँ, उतने ही की रोटी मैं भी बहू से बनवा लेती हूँ। जिस दिन नहीं कमाती, उस दिन उपवास कर लेती हूँ।

मैंने पूछा—उस दिन क्या तुम्हारा बेटा खाने को नहीं पूछता?

बुढ़िया ने कहा—पूछता है। लाकर सामने रख देता है। पर बेटा! मैं उसका हिस्सा क्यों खाऊँ? मैं भी खालूँ, तो वह भूखा ही रह जायगा। फिर अगले दिन कमायेगा कैसे? वह न कमायेगा तो ये तीन प्राणी तकलीफ पायेंगे न? मैं तो बुढ़िया ठहरी। भूखी रहकर पड़े-पड़े दिन काट दूँगी।

बुढ़िया की करुण-कहानी सुन कर मैं तो डूबने-उतराने लगा। कहाँ तो काव्य के नवरसों की मिथ्या और अस्वाभाविक कल्पना! और कहाँ साक्षात् मूर्तिमान करुण रस का दर्शन! मैं निस्तब्ध हो गया।

इक्केवाला चलने की जल्दी कर रहा था। बुढ़िया को अपने नाती के लिये गुड़ की चिन्ता सता रही थी। मैंने दो आने में उसकी घास खरीद कर वहीं सड़क पर छोड़ दी और जो कुछ हो सका, सहायता-स्वरूप उसे कुछ और भी देकर अपनी राह ली।

इसी घटना के साथ मैंने पहले-पहल उस देश की सीमा में पैर रक्खा। सीमा में प्रवेश करते ही मैं सोचने लगा—अरे! क्या यही वह देश है? जहाँ के लोग सोने के बरतनों में खाते-पीते थे। यही क्या वह देश है? जहाँ घर-घर में चन्दन के वृक्ष थे। यहाँ तो सुख नाम का कोई पदार्थ कहीं दिखाई ही नहीं पड़ता।

यहाँ तो चारों ओर दुःख ही दुःख है। एक गरीब व्यक्ति बहुतसी टोकरियाँ एक लाठी से लटकाये गाँव की ओर जा रहा है। टोकरियो का जितना बोझ उसके कंधे पर है, उससे कहीं अधिक बोझ उसके मन पर कुटुम्बियों की उन लालसाओं का है जो टोकरियों की बिक्री से प्राप्त हुये पैसो से पूर्ण होगी। उस घासवाली बुढ़िया की तरह वह भी अपने पुत्र, पौत्र, स्त्री, छोटे भाई या अन्य कुटुम्बी से किसी न किसी चीज का वादा करके घर से चला है।

बहुत से किसान नाजो की गठरियाँ पीठ पर, सिर पर, कन्धे पर या काँख में लिये बाज़ार की ओर जा रहे हैं। प्रत्येक के मन मे नाज की बिक्री के पैसो से कोई न कोई चीज खरीद कर किसी न किसी को संतुष्ट करने की तरंगे उठ रही है। आज कितने पैसो की जरूरत है? और नाज की बिक्री से कितने पैसे आयेंगे? और वह किन-किन जरूरतो में व्यय होगे? किसान बार-बार इन गुत्थियो के सुलझाने मे व्यस्त है।

कितने ही घर गरीबो के है। जिनमे कोई चहल-पहल नही है। एक घर की दशा कवि के शब्दो में सुनिये। कोई व्यक्ति अपना मानसिक कष्ट इस प्रकार कह रहा है—

क्षुत्क्षामाः शिशवः शवा इव भृशं मन्दाशया बान्धवा।
लिप्ता जर्जरकर्करी जतुलवैर्नो मां तथा बाधते॥
गेहिन्या त्रुटितांशुकं घटयितुं कृत्वा सकाकु स्मितं।
कुप्यन्ती प्रतिवेशिलोकगृहिणी सूचीं यथा याचिता॥

'लड़के भूख से व्याकुल होकर मुर्दे के समान हो गये हैं। बाँधव विमुख हो गये हैं। हाँडी के मुँह पर मकड़ी ने जाला तन दिया है। ये सब मुझे उतना कष्ट नहीं देते, जितना कष्ट पड़ोसिन का यह व्यवहार देता है, कि जब अपनी फटी धोती को सीने के लिये मेरी स्त्री उससे सूई माँगती है, तब वह ताने से हँसकर क्रोध करती है।'

किसी ग़रीब के पास एक ही वस्त्र है। वह उसके विषय में कहता है—

अय पटो मे पितुरङ्गभूषणं पितामहाद्यैरुपभुक्तयौवनः।
अलङ्करिष्यत्यथपुत्र पौत्रकान् मयाऽधुना पुष्पवतेव धार्यते॥

'यह वस्त्र मेरे पिता के शरीर का भूषण रहा है। जब यह नया था, तब पितामह ने इसका उपयोग किया था। अब यह मेरे पुत्र और पौत्रों को अलंकृत करेगा। मै इसे फूल की तरह ही सँभालकर रखता हूँ।'

कोई पुरुष झंख रहा है—

अये लाजानुच्चैः पथिवचनमाकर्ण्य गृहिणी।
शिशोः कर्णौ यत्नात्सुपिहितवती दीनवदना॥
मयि क्षीणोपाये यदकृत दृशावश्रुशबले।
तदन्तःशल्यं मे त्वमिह पुनरुद्धर्तुमुचित.॥

रास्ते मे किसी ने ज़ोर से 'लावा' कहा। गृहिणी ने उदास मुख से बच्चे के कान यत्नपूर्वक बंद कर दिये! जिससे भूखा बच्चा लावा का नाम न सुन सके। नहीं तो वह माँगने लगेगा। मै निरुपाय था। यह जानकर गृहिणी की आँखें भर आईं। यही मेरे हृदय का काँटा है। हे भगवान्, तुम्हीं उसे निकालने में समर्थ हो।'

किसी घर में यह दृश्य उपस्थित है—

मा रोदीश्चिरमेहि वस्त्र रहितानद्राक्षीद्य बालानिमा—
नायातस्तव वत्स दास्यति पिता ग्रैवेयकं वाससी।
श्रुत्वैवं गृहिणी वचांसि निकटे कुड्यस्य निष्किञ्चनो।
निःश्वस्याश्रुजलप्लवप्लुतमुखः पान्थ. पुनः प्रस्थित.॥

'हे बेटा! मत रोओ। तुम्हारे पिता जब आवेंगे और तुमको वस्त्र-रहित देखेंगे तो तुमको वस्त्र और माला देंगे।' ग़रीब पति झोपड़ी

के पास खड़ा था। स्त्री का ऐसा वचन सुनकर उसने दुःख की साँस ली। आँसू से उसका मुख भीग गया और वह फिर लौट गया।'

किसी घर मे यह दृश्य उपस्थित हैं—

कंथाखण्डमिदं प्रयच्छ यदि वा स्वाङ्के गृहाणार्भकं।
रिक्तं भूतलमत्र नाथ भवत पृष्ठे पलालोच्चयः।
दम्पत्योरिति जल्पतोर्निशि यदा चोरः प्रविष्टस्तदा।
लब्धं कर्पटमन्यतस्तदुपरि क्षिप्त्वा रुदन्निर्गतः॥

'हे नाथ! गुदड़ी का एक टुकड़ा मुझे दो। या इस बालक को तुम्हीं गोद में ले लो। आपके नीचे पयाल है, यहाँ की ज़मीन खाली है।' इस प्रकार स्त्री-पुरुष रात मे बाते कर रहे थे। उसी समय वहां कोई चोर घुसा था। बाते सुनकर दूसरी जगह से चोरी करके लाये हुये वस्त्र को वह उनके ऊपर फेककर रोता हुआ घर से बाहर निकल गया।'

कहीं यह दृश्य उपस्थित है—

वृद्धोऽन्धः पतिरेष मञ्चकगतः स्थूणावशेषं गृहं।
कालोऽभ्यर्णजलागम कुशलिनी वत्सस्य वार्तापि नो।
यत्नात्संचिततैलबिन्दुघटिका भग्नेति पर्याकुला।
दृष्ट्वा गर्भभरालसां निजवधूं श्वश्रूश्चिरं रोदिति॥

'वृद्ध और अंधा पति खाट पर पड़ा है। छप्पर मे थून ही थून शेष हैं। चौमासा सिर पर है। परदेश गये हुये पुत्र का कुशल-समाचार भी नही मिल रहा है। बहुत यत्न से एक-एक बून्द करके एकत्र किये हुये तेल की कुलिहया भी फूट गई है। इस प्रकार से आकुल-व्याकुल हो कर चिन्ता करती हुई और अपनी पुत्र-वधू को गर्भ के भार से मन्द देख कर सास देर तक रोती रही।'

कोई कह रहा है—

मद्गेहे मुसलीव मूषकवधूर्मूषीव मार्जारिका।
मर्जारीव शुनी शुनीव गृहिणी वाच्यः किमन्यो जनः॥

इत्यापन्नशिशूनसून्विजहतो दृष्ट्वा तु भिल्लीरवै—
र्लूता तन्तुवितानसंवृतमुखी चुल्ली चिरं रोदिति ॥

'मेरे घर मे (आहार न मिलने से) नन्हीं चुहिया-जैसी तो मूषिका, मूषिका-जैसी बिल्ली, बिल्ली-जैसी कुतिया और कुतिया-जैसी मेरी स्त्री है। औरों की तो बात ही क्या ? इस प्रकार प्राण छोड़ते हुये बच्चो को देखकर मकड़ी के जाले से ढके हुये मुँह वाली चूल्हीं झींगुर के स्वर से रो रही है।,

कोई कह रहा है—

पीठा' कच्छपवत्तरन्ति सलिले संमार्जनी मीनवत्।
दर्वी सर्पविचेष्टितानि कुरुते संत्रासयन्ती शिशून्।
शूर्पार्धावृतमस्तका च गृहिणी भित्ति' प्रपातोन्मुखी।
रात्रौ पूर्णतड़ागसन्निभममभूद्राजन्मदीय गृहम ॥

'हे राजन्! रात मे मेरा घर जल से पूर्ण तालाब की तरह हो जाता है। उसमे पीढ़े तो कछुवो की तरह और झाड़ू मछली की तरह तैरने लगते हैं। कलछी साँप की तरह चेष्टा करके बच्चो को भयभीत करती है। स्त्री सूप से आधा सिर ढक लेती है और दीवार गिरने वाली है।'

गाँवो की फटी हुई दीवारे, एक बार पानी बरस जाने पर घंटो रोने वाले, चिथड़े जैसे छप्पर, सड़ी हुई गलियाँ, अस्थि-चर्मावशेष नर-नारी भयानक हाहाकार कर रहे हैं, जो कानो से नहीं, आँखो से सुनाई पड़ता है। यहाँ तो घर-घर में उस घासवाली बुढ़िया के जीवन से कहीं अधिक भयानक दृश्य उपस्थित है। देहात के लोग तरह-तरह की रूढ़ियो में जकड़े हुये अधःपतन की ओर जा रहे हैं। उनमे धर्म की भिन्न-भिन्न व्याख्यायें प्रचलित हैं।

मैंने उस घासवाली बुढ़िया को कुछ पैसे देकर सन्तोष लाभ किया

यहाँ तो समूचे जीवन-दान की आवश्यकता है। मैं सोचने लगा—ईश्वर ने इस देश को गरीब बनाकर शिक्षितों को अपनी मनुष्यता के विकास के लिये कितना लम्बा-चौड़ा मैदान दे दिया है। शिक्षितों को अपने गाँवों के नीरव हाहाकार को, जो जीवन-साफल्य के लिये ईश्वर की पुकार है, सुनना चाहिये।

गाँवों की दशा देखकर बार-बार मन को विक्षोभ और आँखों को जल-रेखाएँ घेर लेती थीं।

तन और मन की आँखें तो खुली ही थीं। मैंने कान भी खोल दिये। मैं गाँवों में गया। गाँवों का बाह्य सौन्दर्य बड़ा ही आकर्षक होता है। गरमी के तीन-चार महीने छोड़कर बाकी प्रायः सब महीनों में गाँवों के चारोओर हरियाली ही हरियाली दिखाई पड़ती है। तालाब और कुएँ बनवा देना और आम के बाग लगवा देना देहात में बड़े पुण्य और प्रतिष्ठा का काम समझा जाता है। जिसके पास कुछ भी धन बचता है, वह ये तीन काम अवश्य करता है। इसका परिणाम यह हुआ है कि चारोंओर आम के बाग ही बाग नज़र आते हैं। पहले इन बागों के फल भी लोगों को मुफ्त मिला करते थे। पर पैसे की आवश्यकता बढ़ जाने से अब इनके फल नीलाम होने लगे हैं। पहले ज़मींदार लोग ऊसर और जंगल गायों के लिये छोड़ देते थे। पर अब उनका ज़ाती खर्च इतना बढ़ गया है कि वे एक-एक बीता ज़मीन बेंचकर पैसे बना रहे हैं, फिर भी कर्ज़दार बने रहते हैं। ज़मींदारों ने नदी-नालों तक के पेट बेंच लिये हैं। उन्हें मनुष्यों के पेट की चिन्ता क्या है?

जैसे गाँव का बाह्य सौन्दर्य नयनाभिराम होता है वैसे ही उसके भीतर का दृश्य नरक से कम बीभत्स नहीं होता। बरसात में सारे रास्ते पानी और कीचड़ से भर जाते हैं। कई सौ वर्ष पहले बेनी कवि ने

लखनऊ का जो चित्र खींचा था, वही बरसात में आजकल प्रत्येक गाँव में प्रत्यक्ष दिखाई देता है। बेनी कवि लिख गये है—

गड़ि जात बाजी औ गयन्द गन अड़ि जात
सुतुर अकड़ि जात मुसकिल गऊ की।
दामन उठाय पाय धोखे जो धरत होत
आप गरकाप रहि जात पाग मऊ की॥
बेनी कवि कहै देखि थर थर काँपै गात
रथन के पथ ना विपद बरदऊ की।
बार बार कहत पुकार करतार तोसों
मीच है कबूल पै न कीच लखनऊ की॥

गाँव के लोग घर के पास ही घूर लगाते है। पानी बरस जाने से वह सड़ने लगता है। जगह की कमी से वे गायें, भैंसें, खेती के बैल अपने रहने के घरों ही मे बाँधते हैं। इससे हरवक्त पशुओं के गोबर और मूत की दुर्गन्ध बनी रहती है। अधिकांश लोग गरीब होते हैं, जो पुरानी और सड़ी-गली कच्ची दीवारो से घिरे हुए घर मे, चूते हुए खपरैल या फूस के छप्पर के नीचे रहते है। जब सावन मे घटा घिर आती है, तब उनके चेहरो पर घर गिरने के भय और खाने-पीने और पहनने की चीजों के भीग जाने की चिन्ता के बादल घिर आते है। जब पानी बरसने लगता है, तब उनकी आँखे चूने लगती है। बरसती हुई रात मे रात-रात भर बेचारे सो नहीं सकते। या तो किसी कोने में उकरू मुकरू बैठकर रात बिता देते है, या किसी जगह, जहाँ चूता न हो, खड़े-खड़े आँखों मे रात निकाल देते हैं और सबेरा होते ही फिर दिनभर पेट के धंधे मे लगे रहते हैं।

यह सब होते हुये भी गाँवो के हृदय में सुख का प्रकाश है। वह सुख आँख से नहीं, कान से दिखाई पड़ता है। यदि वह सुख न होता तो अनन्त दुःखों का भार गाँव के लोग कैसे उठा सकते थे? बरसात

के महीनों में गाँव में जाकर रहिये, तो देखियेगा कि जो व्यक्ति भूख की ज्वाला से जल रहा है, वह भी गा रहा है—

धै देत्यो राम—हमारे मन धिरजा।
सब के महलिया रामा दिअना बरतु हैं
हरि लेत्यो हमरो अँधेर। हमारे०॥ १॥
सब के महलिया रामा जेवना बनतु है
हरि लेत्यो हमरी भूख। हमारे०॥ २॥
सब के महलिया रामा सेजिया लगतु हैं
हमरो हरि लेत्यो नींद। हमारे०॥ ३॥

सावन की घटा जवानी की तरह उमड़ती चली आ रही है। पुरवा हवा अत्यन्त प्रिय व्यक्ति के कर-स्पर्श की भाँति सुहावनी लग रही है। ऐसे समय मे वह चरवाहा, जिसे पेट भर खाने को नही मिलता, ओढ़ने-बिछौने की तो बात ही क्या? जिसके पास आराम से सोने भर के लिए भी जगह नही—ऊँचे स्वर से बिरहे गा-गा कर संसार के समस्त सुखों को तुच्छ समझ रहा है—

मन तोरा अदहन तन तोरा चाउर, नयन मूँग कै दालि।
अपने बलम के जेंवना जेंवतिउ, बिनु लकड़ी बिनु आगि॥

× × ×

सकल चिरैया उड़ि उड़ि जैहैं, अपनी अपनी जून।
मैं तौ पापिनि परिउँ पिंजड़वा, मरउँ बिसूर बिसूर॥

× × ×

जोबन गया तो क्या हुआ रे, तन से गई बलाय।
जने जने को रूठना रे, हम से सहा न जाय॥

किसान दिनभर खेतों मे काम करके थकान से चूर शाम को घर लौट रहा है। वह गाता आ रहा है—

बेला फूलै आधी रात, गजरा मैं केके गरे डालूँ।

स्त्रियाँ खेत मे काम कर रही है। कपडे सब के मैले और फटे पुराने है। कई ऐसी होगी, जिन्हे रात मे भरपेट भोजन नही मिला होगा। कई ऐसी होगी, जिन्हे अकारण क्रोधी पति ने पीटा होगा। फिर भी वे गा रही है—

सॅवलिया रे बाहे मारै नजरिया।
मारै नजरिया जगावै पिरितिया। सॅवलिया रे॥
जैसे दूध मे पानी मिलतु है,
वैसे मिलौ तोरे साथ। सॅवलिया रे॥
जैसे अकास पै चिड़िया उड़तु है,
वैसे उड़ौ तोरे साथ। सॅवलिया रे॥

सावन मे गांव-गांव मे हिंडोले पड़ जाते है। जिन पर दिन मे और रात मे लड़कियाँ और बहुएँ झूलती और गाती है। किसी को ठीक-ठीक भोजन-वस्त्र नही मिलता। किसी की सास कर्कशा है और वह नरक-यंत्रणा भोग रही है। फिर भी सब प्रसन्न मन से गाती है—

प्रेम पिरित रस बिरवा रे तुम पिय चलेहु लगाय।
सोचन की सुधि लीजौ देखेउ मुरझि न जाय॥
प्रेम पिरित रस बिरवा॥

सावन का महीना है। बहुओ का मन नैहर के लिये तड़पने लगता है। हिंडोले के गीतो मे अपनी यह तड़प वे गा-गाकर सुना रही है—

ठाढ़ी झरोखवाँ मैं चितवउँ नैहरे से केउ नाहीं आइ।
ओहि रे मयरिया कैसन बपई जेकर ससुरे मे सावन होइ॥

कहार लोग बहुओ को पालकी या डोली मे नैहर की ओर लिये जा रहे हैं। कंधे पर बोझा है। आँखें रास्ते पर लगी हैं। डोली ढोने ही की जीविका है। आमदनी कम है। घर मे खानेवाले बहुत है। हरवक्त चिन्ता सिर पर सवार है। फिर भी वे गाते जाते है—

सोच मन काहे क करी।
मोरे मालिक सिरी भगवान ॥सोच०॥

बरसात मे मेले बहुत होते है। स्त्रियाँ झुंड की झुंड मेलों मे जाती है। दुखी-सुखी सब घरो की स्त्रियाँ साथ गाती हुई चलती हैं। मेले के गीत प्राय. शान्त और शृङ्गार-रस ही के होते है। उत्तेजक नहीं होते। स्त्रियाँ गाती चलती है—

रघुबर सँग जाब, हम न अवध माँ रहबै।
जौ रघुबर रथ पर जइहै, भुँइऐ चली जाब। हम० ॥१॥
जौ रघुबर बन फल खइहै, फोकली बिनि खाब। हम० ॥२॥
जौ रघुबर पात बिछैहै, भुइयाँ परि जाब। हम० ॥३॥

गाँवो मे कही कही मंदिर होते है, या साधु की कुटी होती है। कुछ लोग शाम को वहाँ जमा होते है। कोई संतानहीन होता है, कोई भाइयो से लड़-झगड़ कर आता है। किसी की अपनी स्त्री से नहीं पटती। कोई नितान्त दरिद्र है। पर गीत की दुनियां मे सब अपना दुःख भूल जाते है—

कुटी मे कुछ लोग गा रहे हैं। बाकी लोग बैठे सुन रहे हैं—

संतो नदी बहै इक धारा।
जैसे जल मे पुरइन उपजै जल ही में करै पसारा।
वाके पानि पात नहिं भीजै ढुरुकि परै जैसे पारा॥
जैसे सती चढ़ी सत ऊपर पिय को बचन नहिं टारा।
आप तरै औरन को तारै तारै कुल परिवारा॥
जैसे सूर चढ़े लड़ने को पग पीछे नहि टारा।
जिनकी सुरति भई लड़ने को प्रेम मगन ललकारा॥
भवसागर एक नदी बहत है लख चौरासी धारा।
धर्मी धर्मी पार उतरिगे पापी बूड़े मँझधारा॥

ऐसे गीत सुनकर बहुत से पापी पाप कम करने लगते है। बहुत

से सत्य छोड़नेवाले सँभल जाते है। बहुत सी कर्कशा स्त्रियाँ पति की आज्ञाकारिणी हो जाती है। ऐसे गीत सामाजिक जीवन के मल को धोते रहते हैं।

कोई युवक अपनी जवानी की उमंग मे है। वह अकेला गाता जा रहा है—

चितै दे मेरी ओर, करक मिटि जाय रे।
मैं चितवत तू चितवत नाहीं, नेह सिरानो जाय॥

दूर से आता हुआ पथिक थका-माँदा है। फिर भी वह गा रहा है—

झूला किन डारो रे अमरैयाँ।
रैनि अँधेरी ताल किनारे बुनिया परै पुइयाँ फुइयाँ॥

गाँवों की चौपाल मनोरंजक स्थान है। फुरसत के वक्त महल्ले के लोग चौपाल में आ बैठते है। कोई कुछ कहता है, कोई कुछ। बीच-बीच मे कहावतें भी चलती रहती है। अच्छे से अच्छे रसभरे महावरे आनन्द बढ़ाया करते है। चौपाल में घाघ और भड्डरी भी मौजूद रहते हैं। कोई कह रहा है—

लरिका ठाकुर बूढ़ दिवान।
ममिला बिगरै साँझ बिहान॥

'राजा बालक हो और उसका दीवान पुराना हो तो उन दोनो मे नहीं पटेगी।'

कोई कह रहा है—

आलस नींद किसानै नासै, चोरै नासै खाँसी।
आँखिया लीबर बेसवै नासै, बाबै नासै दासी॥

'आलस्य और नींद से किसान, खाँसी से चोर, कीचड़वाली आँखों से वेश्या और दासी की संगति से बाबा (साधू) का नाश होता है।'

कोई कह रहा है—

जबरा की मेहरारू, गाँव भर की काकी।
अबरा की मेहरारू, गाँव भर की भौजी॥

'ज़बरदस्त की स्त्री को सब काकी कहते है। पर निर्बल की स्त्री को सब भौजाई समझते हैं'।

कोई कह रहा है —

बिन बैलन खेती करै, बिन भैयन के रार।
बिन मेहरारू घर करै, चौदह साख लबार॥

'जो कोई कहे कि बैल रक्खे बिना मै खेती करता हूँ, भाइयों के सहयोग बिना मै दूसरो से लड़ाई ठानता हूँ और बिना स्त्री गृहस्थी चलाता हूँ, वह चौदह पुश्त का झूठा है।

इसी प्रकार की हज़ारों अनुभव की बाते गाँवों मे हरवक्त होती रहती हैं।

एक बार जाड़ों मे गाँव की सैर कर आइये। रात के पिछले पहर में कोल्हू और जाँत के गीत सुनकर आप का मन मुग्ध हो जायगा।

गर्मी के दिनो मे विवाह की धूम रहती है। महल्ले की स्त्रियाँ वर और कन्या के घरो पर जमा होकर विवाह के गीत गाया करती हैं।

देहात के जीवन में मुझे गीतो की प्रधानता पद-पद पर प्रतीत होने लगी। भयानक दु खो से ओत प्रोत जीवन मे ये गीत कैसे उत्पन्न हुये? जैसे कीचड़ मे कमल। मै गाँवों की यह छटा देखकर मन ही मन मुग्ध हो गया। पर गीतों के संग्रह की ओर मेरी प्रवृत्ति बहुत दिनो तक नहीं हुई थी। केवल मैं मन ही मन उसका रसानुभव किया करता था। ग्राम-गीतों के लिये ज़मीन तैयार न थी। एक घटना-विशेष ने एक दिन उसमे बीज डाल दिया। घटना इस प्रकार से संघटित हुई थी—

सन् १६२४ के आस-पास की बात है, मै जौनपुर से प्रयाग आ रहा था। एक स्टेशन पर कुछ स्त्रियाँ, जो संभवतः अहीर या चमार जाति की थीं कुछ मर्दों को, जो कलकत्ते जा रहे थे, पहुँचाने आई थीं और रो रही थी। ट्रेन स्त्रियो को रोती हुई छोड़कर चल दी। कलकत्ते

जाने वाले मर्द संयोग से थर्ड-क्लास के उसी डब्बे में आ बैठे थे, जिसमें मैं था। उनके साथ दो-तीन स्त्रियाँ भी थी, जो अपने परदेशी पतियो के साथ या पास कलकत्ते जा रही थीं। उसकी एक ही कड़ी मुझे याद है। वह यह है—

'रेलिया सवति मोर पिया लइके भागी।'

रेल की तुलना सौत से होती हुई सुनकर मै यकायक चौंक उठा। यह तो एक बिल्कुल नई उपमा है। किसी स्त्री ने ही यह गीत रचा होगा। नहीं तो, ऐसी मर्म की बात कहने की इस जमाने मे फुरसत ही किसको? क्या स्त्रियाँ भी कवितामय हृदय रखती है? मै उस कड़ी के साथ ही ये बातें सोचने लगा। कई सौ वर्ष पहले रहीम ने स्त्रियों की तरफ से एक बरवा कहा था। जिसमे सौत की तुलना हंसिनी से की गई है। उस कड़ी के सुनने के साथ ही मुझे वह बरवा याद आया था—

पिय सन अस मन मिलयूँ, जस पय पानि।
हसिनि भई सवतिया, लइ बिलगानि॥

इसमें हंस-हंसिनी के एक विशेष गुण— सो भी कवियो के कथनानुसार, पक्षी-विद्या-विशारदों के कथनानुसार नहीं—मिले हुये दूध और पानी को अलग कर देने पर लक्ष्य करके विचार बाँधा गया है। हंसिनी के इस कल्पित गुण को जानने वाले सहृदय रसिकजन ही इस बरवे को सुनकर सिर हिला सकते हैं। पर रेल तो प्रत्यक्ष सौत का सा कार्य करती है। वह पति को लेकर भाग जाती है। भागना धर्म दोनों का एक-सा है। मुझे गीत रचनेवाली के हृदय की सरसता बड़ी ही मधुर जान पड़ी। बस, इसी घटना के बाद से मैं ग्राम-गीतों की ओर आकर्षित हुआ हूँ।

इसके बाद एक दिन एक मेले में देहाती स्त्रियों के मुख से एक यह कड़ी भी सुनकर मैंने अनुभव किया कि उगे हुए अंकुर को किसी ने सींच दिया—

हम चितवत तुम चितवत नाहीं,
तोरी चितवन में मन लागो पिया।

इस गीत के भाव ने भी हृदय मे आकर्षण पैदा किया था।

एक दिन सुलतानपुर ज़िले के एक गाँव में मैं जा रहा था। एक अहीर का लड़का गोरू चराते-चराते यह बिरहा गा रहा था—

बिरहा गावउँ बाघ की नाईं दल बादल घहराय।
सुनि के गोरिया उचकि उठि धावै बिरहा क सबद ओनाय॥

जिन्हे 'ओनाय' शब्द का देहाती भाव मालूम है, वही इसका रस ले सकते है। पहले ऐसे बिरहे मैने सैकड़ों सुने होगे, पर एक भी याद नही रहा। अब जब कि मैं अलंकार, नायिकाभेद और नखसिख से परिचित हुआ, यह बिरहा मुझे बहुत सरस जान पड़ा।

एक दिन एक अहीर ने कहीं राह चलते-चलते—मुझे याद नहीं है, कहाँ—यह बिरहा गाया था—

महंगी के मारे बिरहा बिसरिगा भूलि गइ कजरी कबीर।
देखि क गोरी क मोहिनी सुरति अब उठै न करेजवा मॅ पीर॥

भूख के प्रभाव का ऐसा सच्चा और सजीव वर्णन तो शायद ही कोई कवि कर सके। भूख के मारे बिरहा बनाने या गानेवाले के कलेजे मे गोरी की मोहिनी सूरत देखकर चाहे पीर न पैदा हुई हो, पर बिरहा सुनकर ग्राम-गीतो के लिए प्रबल भूख की पीर मेरे हृदय मे अवश्य पैदा हो गई।

शेख़ सादी ने भी ऐसी ही कल्पना की थी—

चुनाँ कहतशाले शुदन दर दमिश्क।
कि यारॉं फरामोश वदंद इश्क॥

अर्थात् दमिश्क में ऐसा अकाल पड़ा कि यारों ने इश्क को भुला दिया। पर अहीर के बिरहे मे शायर की कल्पना से कहीं अधिक हृदय की सच्ची अनभूति और सरसता मुझे जान पड़ी।

सन् १९२५ मे सब से पहले जाँत के दो गीत मुझे सुलतानपुर मे मिले। मैंने उन्हे अर्थ सहित 'सरस्वती' मे प्रकाशित कराया। जिन जिन लोगों की दृष्टि से वे गीत गुज़रे, उनमे से बहुतो ने उन्हे पसंद किया और कइयों ने मुझे पत्र लिखकर अपनी प्रसन्नता प्रकट भी की। इससे मैं उत्साहित हुआ।

यही से मेरे उद्योग का श्रीगणेश समझना चाहिये।

संग्रह का काम बहुत कठिन था। इतने बडे देश में, जिसमें सैकड़ों बोलियाँ बोली जाती है, मैं अकेला कहाँ कहाँ जा सकता था? और यदि जाता भी, तो राह-ख़र्च के लिये आवश्यक धन कहाँ से आता? और बिना अपने किये चिट्ठी-पत्री और समाचार-पत्रों द्वारा संग्रह का काम हो नहीं सकता था। ये सब चिन्ता की बाते मेरे दिमाग मे घूमने लगीं।

यह काम चिट्ठी-पत्री से नही हो सकता था। इसके लिये स्वयं जाकर मिलना और प्रभावशाली लोगों का इन्फ्लुएंस डालना आवश्यक था। सम्भव है, एक एक व्यक्ति की 'हाज़िरी' मे कई-कई दिन लग जायँ। इसलिये निजी कामकाज से हाथ खींचकर, केवल इसी काम में पूरा समय लगाने की ज़रूरत महसूस हुई। ख़ैर, समय तो अपने अधीन था। पर धन कहाँ से आयेगा? ऐसी संस्थायें तो इस देश मे है नहीं, जो ऐसे आवश्यक और नये काम करनेवाले के लिये सब प्रकार की सुविधायें कर देती। पर गीतों के संग्रह का काम मै बहुत ही आवश्यक समझने लग गया था और उसके लिये ऐसी सच्ची लगन मन में जाग उठी थी कि सब कठिनाइयों के मुक़ाबले में मुझे उतर पड़ना अनिवार्य हो गया। इसलिये ईश्वर का नाम लेकर, सन् १९२६ के सितम्बर महीने से, मैंने गीत-यात्रा शुरू कर दी। पहले मैं प्रयाग और उसके आस-पास के जिलो—जौनपुर, प्रतापगढ़, रायबरेली, मिर्ज़ापुर, सुलतानपुर आदि—के देहातों मे जाने-आने लगा।

देहात में जाने से गीत-संग्रह की नई-नई कठिनाइयाँ सामने आने लगीं।

सबसे बड़ी कठिनाई स्त्रियों से गीत लेने में पड़ती थी। स्त्रियाँ गीत बोलकर लिखा ही नहीं सकतीं। बोलकर लिखाते समय उनको गीत याद ही नहीं आते। वे गाती जायँ और कोई लिखता जाय, तभी काम हो सकता है। सो भी कई स्त्रियाँ एक साथ बैठकर गावें, तभी उनके दिमाग में गीत की कड़ियाँ फूल की पंखड़ियों की तरह खुलती रहती हैं। अकेली गाने में शायद ही कोई स्त्री पूरा गीत गा सके। युवती स्त्रियो से गीत लेने मे तो और भी कठिनाई है। एक तो परदा। दूसरे पर पुरुष के सामने गाने के लिये लज्जावश उनका कण्ठ ही नही फूटता। कन्यायें तो बहुत ही कम ऐसी मिलती हैं, जो पूरा गीत जानती हों। कारण यह जान पड़ता है कि गीत याद करने का काम तो स्त्रियों का जन्म-भर के लिये है। दस-पाँच जब मिलकर गाती हैं, तब किसी को कोई कड़ी याद आ जाती है, किसी को कोई। इस तरह सबका सहारा पाकर गीत का गोवर्द्धन किसी तरह उठा लिया जाता है। कन्यायें छोटी उम्र की होने के कारण गीत की प्राइमरी क्लास मे रहती हैं, इससे पूरा नहीं जानतीं।

स्त्रियों से गीत लेने मे उनकी स्मरण-शक्तिवाली यह कठिनाई कम नहीं है। मेरे तो धैर्य्य की परीक्षा हो जाया करती थी। कभी-कभी तो एक-एक गीत के लिये पूरा एक दिन लग गया है। फिर भी शाम होने तक उसकी एक-दो कड़ियाँ संदिग्ध ही थीं। कभी-कभी एक गीत एक गाँव मे अधूरा ही प्रचलित मिलता। उसकी पूर्ति दूसरे गाँव मे होती। इस प्रकार एक-एक गीत के पीछे पड़े बिना सच्चा काम नहीं हो सकता था।

गीत संग्रह करने में मुझे जो-जो तकलीफें भोगनी पड़ी हैं, मेरा

शरीर और मन उनके लिये असमर्थ था । केवल गीतों के लिये सच्ची लगन ही मुझे उन तकलीफ़ों से पार लगाने मे समर्थ हुई है ।

ज़रा ध्यान में यह दृश्य देखिये तो—सावन का महीना है । घटा घिरी हुई है । कभी झीसे पड़ रहे हैं । कभी लहरे पर लहरे आ रहे है । पुरवा हवा के झोंके चल रहे हैं । धान के खेत मे, घुटने तक पानी मे खड़ी चमारिनें खेत मे उगे हुये घास-पात को खोंटकर—नोचकर निकाल रही हैं । वे गा भी रही हैं । शरीर तो उनका धान के खेत मे काम कर रहा है, और मन गीत की दुनिया मे है । मै धान के मेंड़ पर बैठा गीत सुनता जाता हूँ और लिखता जाता हूँ । जिन्होंने धान के मेंड़ देखे होगे, वे समझ सकते हैं कि धान के मेड़ पर बैठना तलवार की धार पर बैठने के समान है । किसानो की एक अजीब आदत होती है—वे हर साल मेड़ को काटते रहते हैं । कटते-कटते मेड इतने पतले हो जाते है कि उन पर पैर रखकर चलना कठिन हो जाता है । बैठना तो असंभव ही समझिये । धान के मेंड़ों से तो ईश्वर ही बचावे । क्योंकि तलवार की धार की तरह पतले मेंड़ के दोनो ओर के खेत लबालब पानी से भरे रहते हैं । ज़रा सी दृष्टि चूकी, या ध्यान बँटा कि धडाम से पानी और कीचड़ के अंदर । कितनी ही बार मैं इस विपत्ति को भोग चुका हूँ ।

कई बार सुबह से लेकर दोपहर तक बरसते हुये पानी मे, छाते के नीचे खड़े-खड़े मैंने चमारिनों के गीत सुने और लिखे हैं । कही बैठने की जगह ही नहीं मिली ।

जो गीत मैंने चमारिनों के घरों पर जाकर लिखे हैं, उनके लिखने में मुझे अपने मन को बड़ी कड़ी परीक्षा में बैठाना पड़ा है । ध्यान में देखिये—गाँव से बिलकुल बाहर चमार का घर है, जिसकी दीवारें लोनी से गल गई हैं । दीवारों के अन्दर के कंकड़ खोस काढ़े हैं । दीवारों में सैकड़ों दरारें, छेद, बिल और गुफाये हैं, जिनमें छिपकलियों, मकड़ियों, चींटियों, चूहों और झींगुरों के सैकड़ों परिवार निवास कर रहे हैं । दीवारों पर बीसों

स्थान से फटा हुआ, सहस्रों नेत्रोंवाला, एक सड़ा-गला छप्पर रक्खा है। एक ही घर है। उसी में खाना भी पकता है, उसी में चक्की भी है, उसी मे सैकड़ों स्थानों पर सिले हुये मैले-कुचैले कपड़े भी पड़े है। घर में छोटा बच्चा है तो एक किनारे उसका पाखाना भी पड़ा है। चमार-चमारिन को पेटके धंधे ही से फुरसत नहीं मिलती, पाखाना कौन उठाता? एक किनारे मड़ुवा, साँवाँ या धान पड़ा हुआ है। यही उनका आहार है। एक तरफ़ घास की चटाई लपेटी रक्खी है, जिसे घर के लोग जाड़ों मे ओढ़ते और बरसात मे बिछाते है। गरमी में ओढ़ने-बिछाने की ज्यादा ज़रूरत ही नहीं पड़ती। जमीन पर सो गये, आसमान ओढ़ लिया, किसी तरह रात कट गई। झोपड़ी के आस-पास सुअर और उनके छौने घूम रहे है। छौने कभी-कभी अंदर भी घुस आते हैं। घर के आस-पास खेत हैं, जो सुअर के गू से भरे हुये हैं। पानी बरस जाने से गू सड़कर जमीन पर फैल रहा है। उसकी बू से लवेंडर सूँघने वाली शहर की नाक फटी जा रही है। एक किनारे चूल्हे पर मरी हुई गाय का मांस पक रहा है। मैं उसी झोपडे के द्वार पर दीवार से पीठ टेके, रूमाल पर बैठा हुआ, एक साठ बरस की बुड्ढी चमारिन से गीत लिख रहा हूँ। बुड्ढी की धोती मे जुलाहे से अधिक सीनेवाले को मेहनत करनी पड़ी है। वह उसी धोती को कई बरस से पहन रही है और एक ही धोती होने के कारण वह धोती धो भी नहीं सकती और नहाती भी कम है। इससे उसके शरीर और धोती की बदबू नाक-भौं को सिकोड़ने के लिये काफी है। बताइये, ऐसे स्थानों से गीत-संग्रह का काम बड़े साहस का है या नहीं?

शारीरिक कष्ट का यह हाल कि गाँवों मे न धर्मशाले हैं, न सरायें। बाहर से जानेवाले लोग ठहरें तो कहाँ ठहरें? मै दोपहर-दोपहर तक धान के मेंड़ों पर या चमारों के घरों पर बैठा गीत लिखा करता था दोपहर को खेत में काम करने वालों या वालियों को छुट्टी मिलती, तो मैं भी वहाँ से उठकर गाँव के किसी ब्राह्मण या ठाकुर के द्वार पर डेरा डालता।

चना-चबैना और गुड़ ही पर दिन बिताना पड़ता था। कभी-कभी तो आलस्य और रसोई बनाने की असुविधा के कारण रात भी लाई-चने की शरण में बितानी पड़ती थी। गुड़ तो मेरा खास साथी ही था। उसे तो मैंने गत गीत-यात्रा के चार वर्षों में इतना खाया कि आज वह डायबिटीज़ के नाम से स्वास्थ्य का शत्रु बन बैठा है और उसका अंत ही नहीं दिखाई पड़ता।

अब एक समाजिक कठिनाई का ज़िक्र सुनिये—देहात के लोग बहुत बेकार रहते हैं। काम के दिनों में भी दोपहर के बाद का उनका सारा वक्त किसी चौपाल में बैठकर गप्पें हाँकने, एक दूसरे की निंदा करने और तम्बाकू खाने और पीने में जाता है। मैं भी उन्हीं में जा बैठता। पर मेल मिलता नहीं था। वे बेचारे एक मैली-सी धोती पहने नङ्ग-धड़ङ्ग बैठते थे। उनके बीच में मैं सफेद धोती-कुरता और टोपी पहनकर बैठता था। काम भी क्या? गीत-संग्रह; जो बहुत से शिक्षित कहे जानेवालों की दृष्टि में पागलपन समझा जाता है, गाँव के गँवारों की दृष्टि मे तो वह एक मज़ाक के सिवा और कुछ हुई नहीं। मेरे काम का महत्व समझना उनकी बुद्धि से बहुत दूर था। इसलिये मन मे पैदा हुये कौतूहल की पूर्ति के लिये उनको नई-नई कल्पनायें करनी पड़ती थीं। कोई कहता—बाबूजी किसी और मतलब से देहात में आये हैं। कोई कहता—अरे, यह खुफिया पुलिस का कोई दारोगा है। किसी बदमाश की टोह लेने आया है। कोई कहता—बाबू साहब औरत की तलाश में आये हैं। कोई खूब सूरत लड़की या औरत देखेंगे तो ले भागेंगे। कोई कहता—अरे! ये शहर में कोई कुसूर करके भगे हैं। देहात मे हज़रत छिपे-छिपे फिर रहे हैं। इसी प्रकार के तीरों का निशाना बनकर मैं गाँवों में रहता था।

सन् १९२६, २७, २८, के बरसात के महीनों में मैंने गाँवों में जा-जाकर निरवाही और हिंडोले के गीत और जाड़े के महीनों में जाँत और कोल्हू के गीत लिखे थे। सोहर और गर्मी के गीत—जैसे विवाह

और जनेऊ के गीतों के लिये मैं गाँवों में नहीं जा सका। गीतों के संग्रह में देर होती देखकर मैंने कुछ देहाती पढ़े-लिखे लोगों को वेतन देकर गीत जमा करने के लिये रक्खा। इनमें से अधिकांश ने मुझे खूबही ठगा। कई तो प्रयाग आकर मुझ से काफी रुपये ले गये और ऐसे बैठे कि उन्होंने फिर साँस ही डकार न ली। कइयों ने कुछ गीत भेजे और फिर गीत लिखानेवाली बुढियों को देने के लिये रुपये तलब किये, जो गीतों के लोभवश मुझे देने पड़े। पर वे रुपये गीत की सूरत में फिर कभी नहीं लौटे। इससे कितने ही गीत तो दो-दो तीन-तीन रुपये फी गीत की लागत के पड़ गये हैं।

बिहार के गीत मुझे डाक-द्वारा इतने काफ़ी मिल गये कि मुझे उधर जाने की आवश्यकता ही नहीं पड़ी। बिहार की स्त्रियों में युक्त-प्रांत की स्त्रियों से अधिक शिक्षा का प्रचार जान पड़ता है। बिहार की स्त्रियों में गीत लिख रखने की प्रथा है, जो युक्त-प्रांत में मेरे देखने में बहुत कम आई। बिहार से बहुत सी हस्त-लिखित कापियाँ मेरे पास आई थीं, जिनसे मैंने गीत नक़ल करके उन्हें वापस भेजा।

इस प्रकार उत्तर भारत में गीत-संग्रह का चक्र चलाकर मैं अन्य प्रांतों के गीतों का अध्ययन करने के लिये, ८ नवम्बर, १९२७, को प्रयाग से बम्बई के लिये चल पड़ा। बम्बई में मैंने मराठी और गुजराती लोक-गीतों की छपी पुस्तकें ख़रीदीं। कुछ व्यक्तियों से भी मिला और उनसे गीतों का तुलनात्मक ज्ञान प्राप्त किया।

१६ नवम्बर, १९२७ को मैं प्रातःकाल ९॥ बजे, नेत्रवती जहाज़ से द्वारका के लिये रवाना हुआ। मेरा इरादा द्वारका से प्रवेश कर के काठियावाड़ और गुजरात का भ्रमण करने का था। अतएव ता० १७ नवम्बर १९२७ को ९॥ बजे सवेरे मैं द्वारका पहुँचा। द्वारका और बेट द्वारका में मैं तीन दिन रहा। वहीं मैंने काठियावाड़ में दौरा करने का प्रोग्राम तैयार किया और उसके अनुसार जामनगर, राजकोट, पोरबन्दर,

सोमनाथ, जूनागढ़, गिरनार, गोंडल, मोरवी, वाँकानेर, ध्रांगध्रा, पालिताना, वढवान और लिमडी की यात्रायें कीं। यात्रा में मै अकेला था। इसलिये खाने की तकलीफ़ें और यात्रा की अन्य असुविधायें भी बहुत भोगनी पड़ीं।

मैं काम-चलाऊ गुजराती भाषा जानता हूँ। काठियावाड़ की यात्रा के मेरे अनुभव बड़े मधुर हैं। काठियावाड़ और गुजरात के लोग बड़े सहृदय होते हैं। मुझे गुजरात स्वभाव ही से प्रिय है। काठियावाड़ के दौरे मे वह प्रियता और भी बढ़ गई।

गुजरात और काठियावाड़ मे रास नाम का नाच प्राय. प्रत्येक गाँव मे,प्रत्येक पूर्णिमा की रात में होता है। संध्या के भोजनोपरांत महल्ले की स्त्रियाँ किसी स्थान विशेष पर एकत्र होकर रास नाचती हैं। गुजरात की पूर्णिमा स्त्रियो के इस आनन्दोत्सव से कैसी सुहावनी हो जाती होगी, ज़रा कल्पना कीजिये।

गर्बा एक खास तरह का गीत है। इसे गाते समय स्त्रियाँ एक गोल चक्कर में घूमती हुई हाथों से बड़ा श्रवण-सुखद ताल देती है। घूमते समय कभी आगे की तरफ झुक जाती है, कभी बगल की तरफ़ और कभी सीधी खड़ी हो जाती है। यह दृश्य बड़ा ही नयन-मनोहर होता है। गुजरात का यह सुप्रसिद्ध नृत्य देखकर और गान सुनकर मुझे बड़ा हर्ष हुआ।

काठियावाड़ की बहुत-सी सुखद स्मृतियाँ साथ लेकर मैं अजमेर आया। अजमेर में भी गीत-संग्रह के लिये कुछ मित्र तैयार करके तथा कुछ गीत प्राप्त करके मैं जोधपुर गया। जोधपुर में मेरे कितने ही पत्र-परिचित मित्र प्रत्यक्ष हुये। गीत-संग्रह के लम्बे-चौड़े वादे लेकर, और कुछ गीत प्राप्त भी करके, मैं फिर अजमेर वापस आया, और वहाँ से उदयपुर, नाथद्वारा और चित्तौरगढ़ गया। महाराणा प्रतापसिंह के साथी भीलों के गीत प्राप्त करने का प्रबन्ध किया और वहाँ की

अच्छी तरह सैर करके फिर अजमेर वापस आया। अजमेर से फिर जयपुर गया। वहाँ से सीकर, सीकर से फतहपुर (शेखावाटी), फतहपुर से पिलानी गया। पिलानी बिड़ला-परिवार का मूलस्थान है। श्रीयुक्त जुगलकिशोर जी, श्रीयुक्त घनश्यामदास जी, श्रीयुक्त रामेश्वरदास जी बिड़ला-बंधु उन दिनों वहीं थे। मैं श्रीयुक्त घनश्यामदास जी के पास ठहरा। गीत-संग्रह के लिये श्रीयुक्त घनश्यामदासजी ने मुझे पहले भी दो हजार रुपये की आर्थिक सहायता दी थी, पिलानी में भी दी। बिड़ला-बंधु चार भाई हैं। चौथे भाई श्रीयुक्त ब्रजमोहनजी उन दिनो कलकत्ते मे थे। उनसे मिलने का अवसर मुझे अगले वर्ष काश्मीर मे मिला। काश्मीर मे उन्होंने काश्मीरी गीतों के लिये मुझे आर्थिक सहायता दी थी। चारों भाइयो का मानसिक विकास बड़ाही सुन्दर हुआ है। सब को स्वदेश और हिन्दू जाति के कल्याण और शिक्षा-सदाचार की वृद्धि के लिये आन्तरिक अनुराग है। श्रीयुक्त जुगलकिशोरजी को हिन्दू-जाति की उन्नति के लिये गहरा प्रेम है। श्रीयुक्त घनश्यामदास जी को और श्रीयुत रामेश्वरदासजी को संगीत का भी शौक है। दोनो भाई सरोद अच्छा बजाना जानते भी हैं।

राजपूताने के लिये हमारा अनुमान था कि वहाँ मुझे अच्छे गीत नहीं मिलेंगे। पर वह गलत साबित हुआ और मारवाड़ ऐसे रूखे-सूखे प्रान्त में भी मुझे प्रेम और करुणरस के झरने प्रवाहित मिले। वहाँ भी ग्राम-कविता का विकास उसी उन्माद के साथ हुआ है, जैसा भारत के अन्य प्रान्तों मे। वहाँ भी बापूजी जैसे वीरो की कथाएँ देहात में उसी तरह प्रचलित हैं, जैसे युक्तप्रान्त मे आल्हा। संयोग वियोग शृङ्गार की तो बात ही अलग है, इस विषय मे तो कोई प्रान्त पिछड़ा हुआ नही है। वहाँ युक्तप्रांत के घाघ और भड्डरी की तरह राजिया, किसनिया,के लिया, ईलिया, छोटिया, दानिया, नाथिया, पुसिया, बाघजी, बीझरा, भेरिया, मोतिया और सगतिया आदि देहाती कवि हुये

हैं, जिन्होंने ग्रामीणों में नीति और सदाचार के भाव अबतक बना रक्खे हैं। मानों ये समाज के पहरेदार हैं।

राजपूताना तो कभी वीरो का प्रान्त था। इससे वीररस के भी गीत उधर खूब प्रचलित हैं। भीलों के गीत प्रायः वीररसपूर्ण हैं।

पिलानी में मैं कई दिन रहा। गीत संग्रह के काम की कुछ व्यवस्था हो जाने पर मैं वहाँ से पंजाब के लिए रवाना हो गया। और लाहौर, अमृतसर और लुधियाना होता हुआ मैं प्रयाग लौट आया।

इस लम्बी यात्रा से लौटकर मैंने युक्तप्रांत के गाँवो की यात्रा फिर शुरू की। यदि ओढ़ना-बिछौना ढोने की कोई असुविधा न हो, तो जाड़े के महीने यात्रा के लिए बड़े अच्छे होते हैं।

सन् १९२८ की मई मे मैंने गीतो के लिए काश्मीर की यात्रा की। वहाँ मैं ढाई महीने के लगभग रहा। काश्मीर के गीत काश्मीर ही की तरह सुन्दर हैं। काश्मीर मे स्व० लाला लाजपतराय ने मेरे गीत सुने थे और मेरे काम से बड़ी सहानुभूति प्रगट की थी। चमारिनों के गीत सुनकर उनके हृदय की आर्द्रता आँखो में उमड आई थी। अछूतों के लिये उनके हृदय में सचमुच बड़ा ही अनुराग था। उन्होंने एक पत्र लिखकर सब शिक्षितों और अशिक्षितो से मेरे काम मे सहायक होने की अपील की थी।

काश्मीर से लौट कर मै बीमार हो गया। फिर भी १९२८ की बरसात में मैंने गीत-यात्रा जारी रक्खी। सन् १९२६—२७—२८ में कुल मिलाकर लगभग ९-१० हज़ार मील की यात्रा मैंने पैदल और रेल से की। और गीत-संग्रह मे सब प्रकार के ख़र्च मिलाकर कुल ३८—३९ सौ रुपये ख़र्च किये। समय, धन और स्वास्थ्य तीनो को अपनी शक्ति से अधिक ख़र्च करके मैंने पाया क्या? १०-१२ हज़ार गीत और ग्राम्य जीवन के अनमोल अनुभव।

✓ ग्राम गीतो के संग्रह से देश या समाज को क्या लाभ पहुँचेगा?

यह एक प्रश्न है, जिसका उत्तर पाने के लिये बहुत से लोग लालायित होंगे।

सबसे पहला लाभ तो यह है कि हम एक कंठस्थ साहित्य को लिपिबद्ध करके उसे सुरक्षित कर लेंगे।

दूसरा लाभ इन गीतो के संग्रह से यह होगा कि हमको स्त्रियो के मस्तिष्क की महिमा देखने को मिलेगी। जिनको हमने मूर्ख समझ रखा है, उनके मस्तिष्क से ऐसे ऐसे कवित्वपूर्ण गीत निकले हैं कि उन पर हिन्दी के कितने ही कवियो की रचनाये निछावर की जा सकती है। सुप्रसिद्ध विद्वान् बाबू भगवानदास के शब्दो मे 'उनमे रस की मात्रा व्यास, वाल्मीकि, कालिदास और भवभूति से भी तथा तुलसीदास, सूरदास से भी अधिक है।' क्या यह एक आश्चर्य की बात नहीं है? अतएव ऐसी आश्चर्य की वस्तु का संग्रह क्या आवश्यक नही है?

तीसरा लाभ इन गीतो से यह होगा कि हिन्दी की प्राचीन और नवीन कविता की शैली पर इनका प्रभाव पड़ेगा। गीतों की रचना प्राकृतिक शैली पर हुई है। उनमें कल्पित नहीं, बल्कि स्वाभाविक रस का विकास हुआ है। अतएव उसका प्रभाव भी शीघ्र और स्थायी होता है। मुझे आशा है, कि गीतों का अध्ययन करके हमारे वर्तमान कवि-गण अपनी शैली मे परिवर्तन करेंगे।

चौथे, हम गीतों मे वर्णित अपने देश के भिन्न-भिन्न रस्म-रिवाजो और रहन-सहन से जानकार हो जायँगे। इस जानकारी से देश के नेता, और समाज-सुधारक सभी लाभ उठा सकते हैं।

पाँचवें, गीतों-द्वारा हम जनता को यह बता सकेंगे कि पूर्वकाल मे, जब के बने ये गीत हैं, बालविवाह की प्रथा नही प्रचलित थी। वर-कन्या अपनी पसंद के अनुसार जीवन-संगी चुनते थे। गीतो में सर्वत्र ऐसा वर्णन मिलता है। यद्यपि वर-कन्या को अब वैसे अधिकार प्राप्त नही हैं, पर गीतो मे विवाह का प्राचीन आदर्श तो कायम है। यदि

ग्राम-गीतों-द्वारा हम यह बात अपने देश के माता-पिताओं के हृदय में उतार सके, तो गीतों से यह एक बहुत बड़ा लाभ समझा जायगा।

छठें, हम गीतों में वर्णित भाई-बहन के प्रेम की वृद्धि करेंगे। पति-पत्नी के प्रेम को अधिक मधुर, चिरस्थायी और सुखमय बनायेंगे। बहू के प्रति सास की कठोरता, तथा ननद-भौजाई और देवरानी-जेठानी के झगड़े कम करेंगे। कन्याओं में सती धर्म के प्रति शाश्वत श्रद्धा की नींव डालेंगे। बहू पर होनेवाले अत्याचारों की मात्रा कम करेंगे। पति-व्रत-धर्म की महिमा का प्रचार करके हम पति-पत्नी के जीवन को अधिक विश्वसनीय और आनन्दमय बनायेंगे। नीति के वचनों का प्रचार करके हम अपढ़ और अशिक्षित जनता की बुद्धि में स्फूर्ति उत्पन्न करेंगे। पिता-पुत्र में स्वाभाविक पवित्रता, युवकों में उच्चाभिलाषा और वृद्धों में संतोष की वृद्धि करेंगे। पुरुषों को एक नारीव्रत की शिक्षा देंगे।

सातवें, हम हिन्दी-साहित्य में नये-नये महावरों, कहावतों, पहेलियों और नवीन शब्दों की वृद्धि करेंगे।

इस गीतयात्रा में यह देखकर मुझे कितनी ही बार आंतरिक वेदना हुई है कि हमारे देशवासियों की ज्ञान-पिपासा शांतसी पड़ती जाती है। दूसरी जातियों के ज्ञान प्राप्त करने की प्रवृत्ति तो कहाँ? हम अपने पूर्वजों ही का अनुभूत ज्ञान छोड़ते जा रहे हैं। पता नहीं, इस पतन की सीमा कहाँ है?

अमेरिका के लोग रेड इंडियनों में प्रवेश करके उनकी एक-एक बात के जानने में लगे हैं। योरप के लोग अफ्रीका के मनुष्य-भक्षकों तक के बीच में पहुँचकर उनके रीति-रस्म की खोज में लगे हैं। मनुष्य ही के नहीं, युरोप-अमेरिका के विद्वान् पशु-पक्षी और कीट-पतङ्ग तक के रहन-सहन और स्वभाव की खोज करने में दिन-रात लगे रहते हैं। और हम? हम अपने ही देश-वासियों से अपरिचित हैं। गीत ही को लीजिये; अंग्रेज़ी में ग्राम-गीत-साहित्य पर सैकड़ों पुस्तकें हैं।

विभिन्न जातियों के रस्म-रिवाजो की जानकारी के लिये अंग्रेज़ विद्वानों ने अपना एक-एक जीवन लगा दिया है, और अपने देश-वासियों के कल्याण के लिये अपनी मातृ-भाषा का भाण्डार भरा है। यूरोप में ग्राम-गीतों के संग्रह के लिये कितनी ही सोसाइटियाँ हैं। वहाँ ग्राम-गीतों का जमा करना एक पेशा हो गया है, और गीत जमा करनेवालों की एक जाति बन गई है। रूस ने अभी थोड़े ही दिन हुये, अपने देश के ग्राम-गीतो का एक-एक शब्द लिख लिया है। पर हम ? हम त्याग और वैराग्य का पाठ रट रहे हैं।

आटा पीसने वाली चक्की हमारे जाँत के गीतों को भी पीसती जा रही है। मदरसे किसानो, अहीरों, धोबियो और चमारो के गीतों को चुपचाप चाटते जा रहे हैं, कन्या-पाठशालाये नीरस, लयहीन, प्रभाव-रहित, निर्जीव और हृदय को स्पर्शन करनेवाली तुकबन्दियो से कन्याओ को उनके मधुर, उपदेशप्रद और लय-विशिष्ठ गोतों से दूर घसीटे जा रही हैं। और हम चुपचाप बैठे टुकुर-टुकुर ताक रहे हैं। स्व० लाला लाजपतराय ने श्रीनगर (काश्मीर) मे गीतो की चर्चा छिड़ने पर एक गहरी आह के साथ यह वाक्य कहा था—We are losing every thing, यह अक्षरश. सत्य है। हमारी दशा उस गाफिल मुसाफिर की सी है जो अंधा भी है और सो भी रहा है।

गीतों मे जो कवित्व है, उसे ही मैं अपनी लेखनी-द्वारा प्रकट करने में समर्थ हुआ हूँ। पर ये गीत जब स्त्री कंठ से निकलते हैं, तब इनका सौन्दर्य, इनका माधुर्य और इनका उन्माद कुछ और ही हो जाता है। इससे गीतों का आधे से अधिक रस तो स्त्रियों के कंठ ही में रह गया है। खेद है, मैं उसे कलम की नोकद्वारा अपने पाठकों तक नहीं पहुँचा सका। यूरोप-अमेरिका मे यह काम ग्रामोफोन के रिकार्डों से लिया जाता है। विधाता ने स्त्रियों के कंठ में जो मिठास रख दी है, जो लचक भर दी है, उसे मैं लोहे की लेखनी में कहाँ से ला सकता हूँ ?

जब गृह-देवियाँ एकत्र होकर पूरे, उन्माद के साथ गीत गाती हैं, तब उन्हें सुनकर चराचर के प्राण तरङ्गित हो उठते हैं। आकाश चकितसा जात पड़ता है, प्रकृति कान लगाकर सुनती हुई-सी दिखाई पड़ती है। मैं एक अच्छे अनुभवी की हैसियत से अपने उन मित्रों से, जो कौवाली और टप्पे सुनने को बाहर मारे-मारे फिरते हैं, सानुरोध कहता हूँ कि लौटो, अपने अन्त:पुरों को लौटो। कस्तूरी मृग की तरह सुगन्ध-स्रोत तलाश मे कहाँ फिर रहे हो ? स्वर का सच्चा सुख तुम्हारे अन्त पुर मे है। वहाँ की हृत्तन्त्री का तार जरा अपने मधुर बचनो से छू दो, फिर देखो, कैसा सुखमय जीवन जाग उठता है।

गीतों की मूल बोली या भाषा का पता लगाना बहुत कठिन ही नहीं, असंभव-सा है, क्योंकि गीत उत्पन्न होकर भाषा के प्रवाह में तैरते चलते हैं। मनुष्य के कंठ ही उनके घाट हैं। उपयुक्त कण्ठ पाकर कोई कहीं बसेरा ले लेता है, कोई कहीं। उन पर उनके आसपास का ऐसा प्रभाव पड़ जाता है कि उनका मूल रूप कायम नहीं रहता। इससे जहाँ वे गाये जाने लगते हैं, वहाँ के बहुत से शब्द, जो पर्यायवाची होते हैं, उनमें बैठ जाते हैं और उनके मूल शब्दो को स्थान-च्युत कर देते है। इससे कौन-सा गीत पहले-पहल कहाँ बना, इसका पता नहीं लगाया जा सकता। केवल इस बात का पता लग सकता है कि कौन-सा गीत कहाँ गाया जाता है।

स्त्रियों के गीतों में तो और भी गड़बड़ी रहती है। क्योंकि कन्यायें विवाहिता होकर जब दूसरे स्थानों को जाती है,तब अपनी असली बोली के गीत भी अपने साथ ले जाती है। उनकी ससुराल की बोली जुदा हुई, तो भी वे अपने गीतों में बहुत कम हेर-फेर करती है। एक तो शिक्षिता न होने के कारण हेर फेर कर नहीं सकती, दूसरे अपरिचित बोली के शब्दों की प्राकृतिक मिठास से वे परिचित भी नहीं होती इससे अपने परिचित शब्दो को बदलना वे पसंद भी नहीं करतीं और जहाँ वे जाती है, वहाँ भी प्राय: उनके जाने हुए सब प्रसगो के गीत

वहाँ की बोली मे मौजूद मिलते है, इससे हेर-फेर की जरूरत भी नही पड़ती। पर वे अपने लड़कपन के याद किये हुये गीतों को अधिक सरस समझती है और जब उनसे पूछा जाता है, तब उन्ही गीतो को वे लिखाती तथा लिखकर भेजती भी है। यही कारण है कि कभी-कभी पश्चिमी जिलो से पूर्वी जिलो मे गाये जाने वाले गीत मिल जाते है, और पूर्वी जिलो के गीत पश्चिमी जिलो मे।

मैने इस पुस्तक मे जितने गीत दिये है, वे भिन्न-भिन्न जिलो के है। पर यह निश्चित रूप से नही कहा जा सकता कि वास्तव में वे उसी जिले के गीत है, या आसपास के दूसरे जिलो के, जहाँ से कन्यायें उन्हे ले गई है।

भाषा या बोलियो के अनुसार गीतो का विभाग करना भी बहुत मुश्किल है। किसी-किसी जिले मे एक से अधिक बोलियाँ बोली जाती है। जैसे जौनपुर क पश्चिमी हिस्से मे अवधी और पूर्वी हिस्से मे भोजपुरी का मिश्रण मिलता है। अवधी और ब्रजभाषा के सरहदी जिलो मे भी बोलियो का मिश्रण मिलता है। यही कारण है कि एक-एक गीत मे दो-दो तीन-तीन बोलियो के शब्द पाये जाते है।

मैने सन् १९२५ से १९३० तक लगातार देशभर मे घूम-फिर कर, मासिक पत्रो मे लेख लिखकर तथा डाक-द्वारा पत्र भेजकर लगभग १५ हज़ार ग्राम-गीतो का संग्रह किया था। सन् १९२९ मे मैंने उनमे से कुछ ग्रामगीत पुस्तकाकार प्रकाशित भी किये थे। इस पुस्तक मे जो गीत दिये गये है, वे सब उसी संग्रह से लिये गये है। मै अपने संग्रह को समुद्र की एक बूँद के बराबर भी नही मानता हूँ। यद्यपि १९३० के बाद भी मेरा प्रयत्न अबतक जारी है, पर इसका कार्य-क्षेत्र ऐसा असीम दिखाई पड़ा और सहायक इतने कम मिले कि अब मेरे उत्साह मे शिथिलता आ गई है। संग्रह का काम किसी एक व्यक्ति के बूते का नही है, बल्कि गवर्नमेंट या अच्छी शक्तिशालिनी किसी संस्था के करने का है।

सभी ग्राम-गीत संग्रहणीय नहीं होते। उनमे कूड़ा-कचरा भी बहुत है। अच्छे पारखी ही उनमे से रत्नों को ढूँढ़ निकाल सकते हैं। अतएव योग्य व्यक्तियो ही को इस कार्य मे लगना चाहिये।

जो गीत और कहावतें मैंने इस पुस्तक मे दी है, उनसे कहीं अधिक सरस और उपयोगी गीत और कहावते अभी ग्रामीणों के कंठो मे है। वहाँ से निकालकर उन्हे पुस्तकाकार प्रकाशित कर देना बहुत ज़रूरी है।

योरप और अमेरिका मे ग्राम-साहित्य के संग्रह का कार्य बहुत ज़ोरो पर हुआ है। वहां गीतों के रेकार्ड तैयार किये गये और नृत्यो के फिल्म। इस देश मे भी ऐसा ही उद्योग करने की शीघ्र ज़रूरत है। क्योकि जितने वृद्ध स्त्री-पुरुष रोज़ मर रहे हैं, उनमें से हरएक ग्राम-साहित्य की सम्पत्ति को कम ही करता जा रहा है।

ग्राम-साहित्य के संग्रह मे कठिनाइयाँ बहुत है। सबसे बड़ी कठिनाई धैर्य सँभालने की है। क्योकि गाँव के लोग बोलकर लिखा नहीं सकते। इसका उन्हे अभ्यास ही नही होता। वे जब गाने की तरंग में आते है और गाने लगते है, तभी सुन-सुनकर गीत लिखे जा सकते हैं। वे जानते ही नहीं कि कहावतें और महावरे क्या चीज़ है। जब वे आपस मे बातचीत करने लगते है, तब उनके मुँह से वाक्य-वाक्य में कहावतों और महावरों का ताँता लग जाता है। सावधान संग्रह-कर्ता सुन-सुनकर उन्हें लिख ले सकता है।

परदे की प्रथा के कारण स्त्रियो के गीत मिलने में और भी कठिनाई है। इसके लिये मेले-ठेले मे उनके झुण्ड के साथ काग़ज़-पेंसिल लेकर चलना पड़ेगा। धान का खेत निराते समय मेड पर, छत कूटते समय छत पर और चक्की पीसने के समय रात के आख़िरी पहर में गृहस्थ के घर के पिछवाड़े, बैठना पड़ेगा। नीची श्रेणी के लोगों के शादी-ब्याह में सम्मिलित होना, जाड़े की रात में अलाव के पास बुड्ढों के साथ बैठकर बातें करना और जाड़े की आधीरात से चलने

वाले ईख के कोल्हू के निकट बैठकर, थर-थर काँपते हुये, गीत लिखना पड़ेगा। कठिन तपस्या है। मैंने अनुभव करके देख लिया है।

कितने ही गीत अधूरे मिलते है, जिन्हे कई गाँवो में सुन-सुनकर पूरा करना पड़ेगा। ग्राम-गाथाओं को महीनो बैठकर सुनना पड़ेगा। किसानों और मज़दूर पेशेवालो की फ़ुरसत का भी सवाल है, जो पैसे से हल होगा।

इस काम मे, जबतक देश के विद्वान् और सुशिक्षित युवक अपनी आत्म-प्रेरणा से न प्रवृत्त हों, तबतक लाखो रुपये का खर्च है, और कोई गवर्नमेंट ही इसे करा सकती है। जहां ग्राम-सुधार के लिये सरकार हर साल लाखो रुपये खर्च कर रही है, वहाँ प्रति वर्ष वह बीस-पचीस हज़ार रुपये भी इस काम मे ख़र्च करे, तो मेरा अनुमान है कि तीन-चार वर्ष के लगातार परिश्रम से एक प्रांत का पूरा कंठस्थ साहित्य लिपि-बद्ध हो जायगा।

इस पुस्तक मे प्रकाशित गीतो और प्राय सब कहावतो मे उनके ज़िले के नाम नहीं दिये गये है। इसका कारण यह है कि मुझे स्वयं उनके ज़िले मालूम नहीं है। उनमे से कुछ तो कई जिलों मे बिना किसी पाठान्तर के प्रचलित है।

यदि सूबो की सरकारें ग्राम-साहित्य के संग्रह का काम उठा लेती है तो मेरा विश्वास है कि वे इसके द्वारा साहित्य ही को नहीं, देश के अन्य विषयों को भी बहुत लाभ पहुँचायेंगी। और ग्राम-सुधार का काम तो ग्राम-साहित्य के अच्छे अध्ययन के बिना कभी सफल हो ही नहीं सकता, यह मेरा दृढ़ विश्वास है।

मुझे हार्दिक हर्ष है कि इस नये रास्ते पर चलने वाला मैं पहला व्यक्ति हूँ, जिसने एक मंज़िल ख़तम कर ली है। मेरा काम गीतो की उपयोगिता प्रकट करके, उनके संग्रह के लिये जनता मे सुरुचि और प्रयत्न जाग्रत करने का था। अपनी समझ में मैंने उसे पूरा कर लिया।

अब रास्ता खुल गया है। उसकी सब मंज़िलें चलकर पूरी करने वाले लोग आगे आयेंगे। मैंने जो कुछ किया, वह हिन्दी-संसार के सम्मुख है। वह चाहे भला हुआ हो, या बुरा, सब हिन्दी-संसार को समर्पित है गीत उसी के रत्न हैं, जो उसी के चारों ओर बिखरे पड़े हैं। उनका कोई क़द्रदान नहीं था। मैंने उनमे से थोडे रत्नो को उठाकर आगे रक्खा है और बताया है कि ये रत्न है, इनकी रक्षा होनी चाहिये। मैं इतना ही कर सकता भी था।

ये रत्न मुझे बहुत ही प्यारे है। क्योकि इनको मैंने अपना बहुमूल्य स्वास्थ्य, जिसका मूल्य रुपयो से नही आँका जा सकता, व्यय करके प्राप्त किया है। यह वह पौधा है, जिसे मैंने अपने स्वास्थ्य से सींचा है। ईश्वर करे, यह बढ़े, और फूले-फले। इसकी छाया मे, संसार के घोर दुःखो से दग्ध जन कुछ देर विश्राम लेकर शीतल, स्वस्थ और सुखी हो।

इस कार्य मे मुझे बहुत से मित्रों और बहनो ने सहायता पहुंचाई है। सचमुच यदि उनकी सहायता मुझे न मिली होती, तो मैं गीतों का अगाध, और अपार सागर एक छोटी सी नौका पर चढ़कर नहीं तर सकता था। सब के नामों की सूची बड़ी लम्बी है। कुछ मित्रों ने पत्र-द्वारा अपनी सम्मतियाँ भेजकर मेरे हृदय को बल प्रदान किया है। जब कितने ही शिक्षित कहे जाने वाले लोग मेरी हँसी उड़ाते थे, मेरे उद्योग को पागलपन बतलाते थे, कितने ही लोग कहते थे कि मैं धन के लोभ से इस कार्य मे प्रवृत्त हुआ हूँ, तब ये ही पत्र मुझे मार्ग से विचलित नहीं होने देते थे और मेरे धैर्य को क़ायम रखते थे। अतएव इन पत्रों का महत्व मैं कम नहीं समझता हूँ। मैं इन सब का हृदय से कृतज्ञ हूँ और अपने पाठको से निवेदन करता हूँ कि यदि वे मेरे काम से सन्तुष्ट हों, तो वे भी मेरे सहायको के प्रति कृतज्ञता प्रकट करें।

बसन्त-निवास, सुलतानपुर
गांधी-जयंती, ता० २-१०-५०

रामनरेश त्रिपाठी

ग्राम-साहित्य की रूप-रेखा

प्राचीन भारतवर्ष क्या था ? और उसके निवासियों का सच्चा स्वरूप क्या है ? यह अगर जानना और समझना हो, तो हमें ग्राम-साहित्य का अच्छा अध्ययन करना चाहिये।

जब हम किसी चमार के घर में 'सोने की थरिया मैं जेंवना परोस्यों' या 'खोलौ न चन्दन केवड़िया' वाला गीत गाया जाता हुआ सुनते हैं, तब हमे मानना पडता है कि किसी समय चमार के घर मे भी सोने की थाली और चन्दन के किवाड़ रहे होंगे और न रहे होगे तो भी उसके दिमाग तक तो वे पहुँच ही गये थे।

या जब चमारिन युवती गाती है—

जो हम होई सतवन्ती होई ना।
मोरे अँचरा भभकि उठै अगिया हो ना॥

तब भारतीय नारी के सती-धर्म की एक मनोहर मूर्ति हमारे ध्यान मे उतर आती है, जिस पर किसी समय हमारे देश की चमारिन भी गर्व करती थी। आज तो उसके घर मे काँसे की फूटी थाली भी मुश्किल से मिलेगी और उसके फूस के झोपड़े में केवाड़ों की ज़रूरत ही नहीं है, तथा गरीबी के कारण उसका चरित्र-बल भी क्षीण हो चला है। पर उसने अपने सुख के दिनों की मधुर स्मृति अभी तक अपने गीतों मे पिरो रक्खी है, जिसकी खिड़कियो से हम प्राचीन भारतवर्ष के वैभव और विलास को झाँककर देख सकते हैं। इस-लिये पहले-पहल हमें उसी के द्वार से गाँव में प्रवेश करना चाहिये। तभी हम गाँव के स्वरूप को ठीक-ठीक पहचान सकेंगे और उसकी उन्नति में सहायक हो सकेंगे।

ग्राम-साहित्य को हम नीचे लिखे वर्गों में बाँट सकते हैं :—

१—संस्कारों के गीत।
२—व्रतों और त्योहारों के गीत।
३—ग्राम-गाथायें।
४—ग्राम-कथायें।
५—मन्दिरों में गाये जाने वाले पद।
६—राह के गीत।
७—खेत के गीत।
८—भिक्षमंगों के गीत।
९—भिन्न-भिन्न जातियों के गीत।
१०—कोल्हू के गीत।
११—चक्की के गीत।
१२—ऋतुओं के गीत।
१३—बच्चों के गीत, खेल और कहानियाँ।
१४—गाँव मे मनोरञ्जन के साधन—मेले और तमाशे।
१५—गाँव के खेल।
१६—गुड़ियों के गीत।
१७—ग्राम-सगीत (नाच और गीत)।
१८—नाच और उसके तरीके।
१९—बाजे और उनके उपयोग।
२०—नीति की कहावतें।
२१—स्वास्थ्य की कहावतें।
२२—खेती की कहावतें।
२३—बुझौवल और ढकोसले।
२४—बारह मासे।
२५—नये नये शब्द और महावरे।
२६—मनुष्य और पशु के रोगों के नुस्खे।

२७—पेशेवरों के शब्द।

२८—जड़ी बूटियों की पहचान और उनके उपयोग।

गाँव का स्वरूप

असली हिन्दुस्तान शहरों में नहीं, गाँवों में है। शहरों में अरब और योरप घुस आये हैं, पर गाँव की मूल संस्कृति और प्रकृति अभीतक उसी हालत में है, जिस हालत में वह चन्द्रगुप्त और अशोक के ज़माने में रही होगी। अन्तर पड़ा है तो केवल धन का। पहले जैसा धन अब गाँवों में नहीं है, बल्कि घोर निर्धनता है। पर निर्धनता का उसकी नींव पर अभीतक बहुत ही कम प्रभाव पड़ा है।

गाँव को गाँव की दृष्टि से देखिये, तभी वह सुन्दर मालूम होगा। गाँव को अन्दर से देखिये, तभी उसकी सम्पूर्णता समझ में आयेगी। अभी जो हम गाँव वालों को असभ्य, गंदे और अस्त-व्यस्त-सा पाते हैं, उस का पहला कारण तो उनकी असह्य गरीबी है, और दूसरा यह कि हम उन्हें योरप की आँखों से देखते हैं, इसीसे उनमें असंख्य त्रुटियाँ दिखाई पड़ती हैं। हम में उनकी त्रुटियाँ ही देखने का अभ्यास भी डाला गया है। उनकी त्रुटियाँ ही त्रुटियाँ हमें बताई भी जाती हैं और हम उन्हें अपनी प्रखर प्रतिभा से बढ़ाते भी रहते हैं, इससे उनसे हमें घृणा होती जाती है।

गरीबी किसी तरह हट जाय तो गाँव वालों में अनेक ऐसे सद्गुण चमक उठेंगे, जो संसार के किसी भी सभ्य-समाज के लिये आदर्श माने जायँगे और जो पैतृक-सम्पत्ति की तरह हजारों पीढ़ियों से उनके पास है।

गाँव की प्राचीन व्यवस्था का अच्छी तरह अध्ययन किया जायगा तो वह एक आदर्श व्यवस्था साबित होगी। किसी ज़माने में गाँव में शिक्षा, न्याय, सहयोगिता, स्वास्थ्य, चरित्र-निर्माण और गृह-

प्रबन्ध आदि की स्वतन्त्र और उत्तम व्यवस्था थी । इन सब को मिलाकर वह सम्पूर्ण था और उसे बाहरी सहायता की बहुत ही कम आवश्यकता थी । विदेशी सभ्यताओं ने उसके रूप को छिन्न-भिन्न कर दिया है । इसीसे हम उसके असली रूप को, जो अब उसके टुकड़ो मे वर्तमान है, नही देख पाते हैं और वह हमे अप्रिय-सा लग रहा है ।

शिक्षा

सबसे पहले शिक्षा को लीजिये :—

यह कहा जाता है कि गाँव वालो मे शिक्षा का अभाव होता है, यह सर्वांश में सत्य नही है । यह हम मानते है कि उनको अक्षर-ज्ञान नहीं होता, और इसीसे आँख-द्वारा मिलने वाली शिक्षा से वे वंचित होते हैं । पर कान-द्वारा मिलने वाले ज्ञान से वे रहित नही होते । वे ऐसे पूर्वजो के प्रतिनिधि हैं, जिन्होने किसी दिन सारी पृथ्वी पर अपनी सभ्यता का प्रसार किया था और अपने ज्ञान के आलोक से मनुष्य-जीवन को चमत्कृत कर दिया था । इससे सभ्य-समाज मे प्रचलित अनेक सद्गुण उनको परम्परा से प्राप्त हैं, जो उनके साथ रहकर व्यवहार करने पर प्रकट होते हैं ।

यह सच है कि वे हाईस्कूल और यूनिवर्सिटी तक नही पहुंच पाते, पर कान से सुनकर मनुष्यता के जो लक्षण वे जान लेते है और जिन्हे वे व्यवहार मे भी लाते है, उनसे क्या उनको शिक्षित नहीं माना जा सकता ?

हमें उनकी सच्ची हालत की अच्छी तरह जानकारी प्राप्त करके ही उनके विषय मे कोई बात बोलनी चाहिये ।

मौखिक विश्वविद्यालय

गाँव का सारा समाज एक अद्भुत विश्वविद्यालय-जैसा है । जिसमें चमार से लेकर ब्राह्मण तक एक दूसरे को ज्ञान-दान करते रहते

हैं और सभी गुरु और सभी शिष्य हैं। ज्ञान में वहाँ छूत नहीं है। चमार के मुख से गाये हुये भजनों मे वहाँ ब्राह्मण पण्डित वैसा ही आनन्द अनुभव करते हैं, जैसा वे वाल्मीकि, व्यास और कालिदास के काव्यों से। और वह मौखिक विश्वविद्यालय हजारों वर्षों से, बिना किसी वाइस चॉसलर की देख-रेख और बिना एक पैसे के खर्च के चल रहा है।

गाँव के मौखिक विश्वविद्यालय मे बचपन से लेकर मृत्यु की अन्तिम सीढी तक शिक्षा के अलग अलग कोर्स हैं और हरएक को उसकी आयु के अनुसार आप से आप शिक्षा मिलती रहती है। वहाँ जो शिक्षा वृद्धावस्था के लिये उपयोगी है उसका भार बचपन ही मे नहीं लाद दिया जाता।

कथा-प्रणाली

गाँव मे बहुत प्राचीनकाल स कथा कहने की प्रणाली प्रचलित है और इससे समाज को बहुत लाभ पहुँचा है।

बडे-बड़े गाँवों मे प्रायः प्रत्येक वर्ष कोई न कोई कथा-वाचक आते रहते है और गाँववालो की रुचि के अनुसार रामायण, महाभारत, श्रीमद्भागवत या दूसरे किसी पुराण की कथा कहते है। गाँव के स्त्री-पुरुष बड़ी श्रद्धा से कथा सुनते हैं और अपनी शक्ति और श्रद्धा के अनुसार कथा की समाप्ति पर कथा-वाचक को पैसा, रुपया, वस्त्र और अन्न आदि देकर संतुष्ट करते है। कथा-वाचक लोग मूल कथाओ के साथ और भी किस्से-कहानियाँ, और सामयिक घटनाओ की बातें कहते रहते हैं, तथा बुराइयो की कड़ी आलोचना भी करते हैं, इससे गाँव के स्त्री-पुरुषो को अपने गुणो और दोषो की जानकारी होती रहती है और वे कथा-वाचक के थोडे परिश्रम से, थोड़े समय में इतना अधिक ज्ञान पा जाते हैं, जितना शायद वे गाँव की पाठशाला या स्कूल से न पाते।

पुरानी और नवीन शिक्षा-प्रणाली में एक मौलिक अन्तर है। पुरानी शिक्षा-प्रणाली का माध्यम कान है, और नई का आँख। पहले लोग सुनकर अधिक सीखते थे और अब पढ़कर। दोनों में श्रेष्ठ कौन है? यह प्रश्न विचारणीय है। वेद का नाम श्रुति इसलिए है कि वह सुना जाता है। 'स्मृति' को स्मरण रखना पड़ता है, क्योंकि वह क़ानून का संग्रह है।

गाँव में कथावाली प्रणाली बहुत लाभदायक सिद्ध हुई है। इससे अपढ़ लोग भी हिन्दू-सभ्यता के मूल सिद्धान्तों से अवगत होते रहते हैं और अपने चरित्र में उनका प्रभाव भी पड़ने देते रहते हैं।

शिक्षा का आरम्भ

गाँवों में शिक्षा का आरम्भ माँ की गोद से ही हो जाता है। पहले बच्चे को बोलचाल के कुछ शब्द रटाये जाते हैं, फिर कुटुम्बियों के उपनाम जैसे, बाबा, दादा, चाचा, काका, भाई और बहन आदि तथा घर की चीजों के नाम बताये जाते हैं।

जब बच्चा घर के बाहर निकलने लगता है और वह कुत्ते, बिल्ली, गौरैया, गाय, भैंस, बैल, बछड़ा गीदड़ आदि जानवरों और गृहस्थ से संबंध रखनेवाले नाई, धोबी, ग्वाला, कुम्हार, माली, पुरोहित, कहार आदि पेशेवरों से परिचित हो जाता है, तब उसे उनसे संबंध रखनेवाली कहानियाँ, गद्य और पद्य दोनों में, सुनाई जाती है, जिनसे उसे वस्तु-ज्ञान कराया जाता है, तथा शब्दों के प्रयोग की विधि और व्यवहार-कुशलता सिखाई जाती है।

बच्चों की शिक्षा का जो स्वरूप गाँवों में प्रचलित है, वह उनके लिए बहुत ही उपयोगी है, और विश्लेषण करने पर वह विज्ञान-सम्मत भी साबित होगा।

गीत, खेल और कहानियाँ

बच्चों को लोरियों, खेलों और कहानियों-द्वारा शिक्षा दी जाती है। माँ मधुर स्वर से गा-गाकर बच्चे को जगाती और सुलाती है।

बच्चे लोरियाँ सुनते-सुनते सोना पसन्द करते हैं। जिन्होंने शुरू-शुरू में लोरियों की प्रथा चलाई, उनको ज़रूर मालूम था कि किस तरह कान-द्वारा बच्चे के दिमाग पर नींद का जादू फेरा जा सकता है।

बच्चा जब जाग उठता है, और उसे बहलाने की ज़रूरत होती है, तब उसका बड़ा भाई, बहन, पिता, चाचा या घर का और कोई वयस्क व्यक्ति उसे गोद में उठा लेता है और घर में या बाहर किसी खाट पर चित लेटकर, अपने दोनों घुटनों को बराबर मोड़कर, टाँगों पर उसे बैठा लेता है और यह गीत गाता है —

खंता मंता लेई थै; एक कौड़िया पाई थै, गंगा मे बहाई थै गंगा माई बालू दिहिन, ऊ बालू हम भुजवा क दीन, भुजवा हम्मैं लाई दिहेस, ऊ लाई धसिकरवै दीन, धसिकरवा हम्मै धास दिहेस, ऊ धसिया हम गैया क दीन, गैया हम्मैं दूध दिहेसि, वहि दुधवा का खीर पका यउँ, खिरिया गै जुड़ाइ, भैया गै कोहाँइ, बहिनी गै मनावै, चला भैया खाइ ला, भैया मारेन दुइ लात।

बीच से इसका एक पाठान्तर यह भी मिलता है :—

ऊ लावा हम कोहँरा क दीन, कोहँरा हम्मै हाँडी दिहेस, वहि हँड़िया मे खीर पकाये—

बाकी सब पहले जैसा।

एक पाठान्तर यह भी है :—

ऊ लौवा हम मलिया क दीन; मलिया हम्मैं फूल दिहेस, ऊ फुलवा हम राजा क दीन, राजा हम्मैं घोड़ा दिहेन, ऊ घोड़वा हम भैया क दीन; घोड़ा चढ़ि के भैया गयेन, बहिनी क मनावै, बहिनी आइ हँसइ लागि, हँसी देखै चिरई आइ। चिरई दिहेसि दाना। उ दनवा धसिकरवा क दीन; धसिकरवा दिहेस घास। ऊ धसिया हम गइया क दीन, गैया दिहेसि दूध। ओहि दुधवा क खीर पकाये—

शेष पहले जैसा।

गीत के अंत मे खेलानेवाला 'पु-लु-लु-लु' कहकर टाँगों को इतना ऊपर उठा लेता है कि बच्चा खेलानेवाले की छाती पर सरक आता है और उसका मुँह खेलानेवाले के मुँह के पास आ जाता है, जिसे वह चूम लेता है।

गीत पर गौर करके देखिये तो मालूम होगा कि इस गीत-द्वारा बच्चे को घर के आसपास की कितनी वस्तुओं का ज्ञान करा दिया जाता है। कौड़ी, गङ्गा, बालू, भड़भूँजा, लाई, घसियारा, घास, गाय, दूध, खीर, कुम्हार, हाँड़ी, फूल, माली, राजा, घोड़ा, बहन, हँसी, चिड़िया, दाना आदि कितने ही शब्द, नये-नये वाक्य और क्रियायें, कुम्हार, माली आदि पेशेवर और उनके काम बच्चे को बता दिये जाते हैं। अंत मे भाई के हृदय मे बहन के लिये प्रेम उत्पन्न करने का बीज बो दिया जाता है। 'भैया मारेन दुह लात' सुनकर भैया पैर चलाये बिना रह नहीं सकते। फिर टाँगें ऊँची करने पर बच्चा जब छाती पर सरक आता है और उसका मुँह चूम लिया जाता है, तब वह भीतर ही भीतर कितना आनन्द अनुभव करता होगा, यह कल्पनातीत है।

रात मे जब चाँद दिखाई पड़ता है, माँ या बहन चाँद की ओर हाथ उठाकर बच्चे को दिखलाती है और गाती है :—

चंदामामा धाइ आवा, धुपाइ आवा,
टाटी ब्योंड़ा देत आवा,
घी का लोंदा लेत आवा,
भैया के मुँह मे डारि द, घुटूक से।

'घुटूक से' बच्चा दूध पीता है। गीत सुनकर उसे दूध पीने की याद आती है। टाटी-ब्योंड़ा क्या है और क्यों दिया जाता है, इससे उसमे जिज्ञासा करने की प्रवृत्ति जगाई जाती है।

चार-पाँच बरस का होने पर लड़का टोले महल्ले के लड़कों के साथ

खेलने निकलता है। उसके लिये छोटे-छोटे खेल हैं, जो घर के अन्दर खेले जाते हैं। एक खेल यह है —

किसी दालान में पाँच लड़के जमा कर लिये जाते हैं। चार लड़के अपने-अपने हाथों की मूठियाँ बाँधकर एक के ऊपर एक रखते हैं। पाँचवाँ लड़का नीचे लिखे गीत गाकर अपने हाथ की पहली उँगली से एक-एक मूठी को मारकर हटा देता है :—

आन तोरौ पान तोरौं तोरौ बन का खाझा।
हथिया पर घुनघुनवा बाजे चमकि उठै सब राजा॥
राजा क रजाई फाटै भैया क दुपट्टा।
हींचि हींचि मारै मुसरी क बच्चा।

गीत का कुछ अर्थ नहीं है। खेल के शुरू में इसे मङ्गलाचरण समझिये। जिसकी मूठी पर गीत का अन्तिम शब्द गिरता है, वह 'चोर' घोषित कर दिया जाता है और उसे वहीं छोड़कर तत्काल चारों लड़के भाग-भागकर दालान के चारों कोनों पर खड़े हो जाते हैं। 'चोर' उनको छूने दौड़ता है। 'चोर' जिसके पास पहुँचता है, वह झट से बैठ जाता है। जो खड़ा रह जाता है और 'चोर' से छुवा जाता है, वह 'चोर' होकर उसी तरह दौड़-दौड़कर दूसरों को छूने लगता है, और पहले वाला 'चोर' उसकी जगह पर खड़े होने और बैठने लगता है।

यह खेल बिना दाम-कौड़ी का है। एक दालान में, घर के अन्दर खेला जाता है। इससे बच्चों को राह के ख़तरे का और भूल-भटक जाने का भी भय नहीं रहता।

घर के अन्दर के खेल ६–७ बरस की उम्र तक के लड़कों के लिये बने हुए हैं। इसके बाद कुछ बड़े खेल, जिनमें ज़्यादा लड़के शामिल होते हैं, खेलने को मिलते हैं।

क्वार और कार्तिक के महीने में जब खेत अगली फ़सल के लिये जोत

दिए जाते है, तब लड़के और नौजवान भी खेत का खेल प्राय. रात मे खेलते है, जिनसे सारे खेत के ढेले भी फूट जाते है ।

जाड़े और गरमी मे वे कबड्डी खेलते है । पेड़ पर चढ़ने और पानी मे तैरने के खेल भी वे खेलते रहते है, जिनमे पेड़ पर चढ़ना और पानी मे तैरना उन्हे बिना कुछ खर्च के आ जाता है । बरसात मे अखाड़ो मे कुश्ती लड़ने और लम्बी कूद का खेल होता है । इस तरह लड़कों की बौद्धिक और शारीरिक शिक्षा साथ-साथ चलती है ।

मानसिक शिक्षा के लिये कहानियाँ कही जाती है ।

गाँव की कहानियो और स्कूली रीडरो की कहानियो में मौलिक अन्तर होता है । रीडरो की कहानियाँ ज्यादातर योरप से आई है । उनमे दिमागी कतर-ब्योत ही अधिक होती है, भारत के सात्विक जीवन को पौष्टिक आहार देने वाले तत्व कम । किसी मे लोमड़ी ने चालाकी से कौवे का टुकड़ा कैसे छीन लिया की चालाकी बतलाई गई होती है और किसी मे भेड़िये और मगर को धोखा देने वाली बात होती है । निश्चय ही बच्चे का दिमाग विलायती कहानियो के प्रभाव से धोखा, चतुराई और धूर्तता के साँचे मे ढल जाता होगा । दिमाग़ और शरीर को उत्तेजना देनेवाला और अङ्ग-संचालन की ज्यादा क्रियाये करानेवाली कहानियाँ योरप के ठण्डे मुल्को के लिये तो लाभदायक हो सकती है, पर हिन्दुस्तान-जैसे गरम मुल्क के लिये हृदय मे शाति, सुख और सात्विक रस उत्पन्न करने वाली कहानियाँ ही अनुकूल पड़ेंगी । कहानियो का संबंध केवल बुद्धि या मन ही से नहीं होता, शरीर के स्वास्थ्य से भी होता है । पूर्व और पश्चिम की कहानियों मे जो मौलिक अन्तर है, उसी से मालूम होता है कि दोनों ओर की कहानियों की रचनाओ पर जलवायु की सरदी और गरमी का असर पड़ा हुआ है । अतएव बच्चो के लिये उनके अपनी मुल्क की कहानियाँ ही स्वास्थ्यकर हो सकती है ।

गाँव की पुरानी कहानियों की प्रकृति ही दूसरी होती है। जैसे—एक राजा था, उसके सात बेटे थ। राजा ने कहा—जो बेटा फलाँ टापू से फलाँ फल ला देगा, उसे वह आधा राज-पाट दे देगा। सातों बेटे अलग-अलग राहो से जाते हैं। रास्ते के अनेक कष्ट भोगते हैं। अन्त मे सबसे छोटा बेटा ही सफल होकर लौटता है। राजा उसे आधा राज दे देता है। बेटा उसे बड़े भाई को सोप देता है।

ऐसी कहानियो से बच्चो मे साहस के काम करने का हौसला तो बढ़ता ही है, रास्ते के कष्टो का और उनसे छुटकारा पाने का ज्ञान भी उनको हो जाता है और आधा राज पाकर उसे बडे भाई को सौंप देने का महत्वपूर्ण त्याग भी उनको हृदयंगम करा दिया जाता है।

सबसे बड़ी विचित्रता गाँव की कहानियो मे यह होती है कि उनमें प्राय: सबमे सबसे छोटे भाई ही को जिताया जाता है। क्योंकि वे छोटे बच्चे के लिये ही होती हैं, जिसे उत्साहित करना ज़रूरी होता है। कभी बड़ा भाई भी छोटा था, तब वही कहानी उसके लिये थी।

कुछ कहानियाँ गद्य मे होती हैं, कुछ पद्य मे, और कुछ गद्य-पद्य दोनों मे। गद्य और पद्य दोनो की कहानियो की भाषा बोल-चाल की, सरल, सुबोध और छोटे-छोटे वाक्यो वाली होती है, जिससे बच्चे के नन्हे-नन्हे फेफड़ो पर ज्यादा बोझ नही पड़ता।

नौजवानों का साहित्य

नौजवानो के लिये जवानी के उमंग को बढ़ाने वाले प्रेम और शृङ्गार-रस के गीत, पूर्वजो के सच्चे अनुभवो को बताने वाली नीति की कहावतें, स्वास्थ्य के लिये चुटकुले और धनोपार्जन के लिये खेती की कहावतें आदि ज्ञान-वर्द्धक पाठ उनके कंठ मे मौजूद होते हैं।

अधेड़ों और वृद्धों का साहित्य

अधेड़ों और वृद्धो के लिये जीवन मे शांति का सुख भरने वाले भजन हैं, जिन्हे वे मन्दिरों मे बैठकर, तीर्थ-यात्रा मे या सुबह शाम

अपनी बैठक मे, गाते रहते हैं। जो नहीं गा सकते, या जिनको गाने का अवकाश नही मिलता, उन्हे सरवन, गोपीचन्द भरथरी आदि गाने वाले भिखमंगे, शिव पार्वती का विवाह गाने वाले जोगी, सतो के भजन गाने वाले रैदास भगत, संसार की असारता के पद गानेवाले मँगते साधू और फक़ीर घूम-घूम कर गाते और सुनाते रहते है। शिक्षा-प्रचार का काम प्रातःकाल के चार बजे से, जब से मंदिरों मे ठाकुरजी जागते है, और मसजिदों मे अज़ान दी जाती है, रात के दस बजे तक, सोने के समय तक, बराबर जारी रहता है।

जब राह मे डोली उठाये हुये कहार गाते हुये चलते हैं.—

धै देत्यो राम हमारे मन धिरजा।
सब की महलिया रामा दिअना बरतु है,
हरि लेत्यो हमरा अँधेर। हमारे मन धिरजा०॥

तब क्या हजारो राही-बटोही, खेत मे काम करने वाले किसान और गाँव के अन्य निवासी उनके गीतो से प्रभावित नही होते होगे?

जातीय गीत

गाँव की प्रत्येक जाति ने, यहाँ तक कि जंगल मे बसने वाले मुसहर तक ने, अपने जातीय गीत अलग बना रक्खे है। उनके गीतों मे उनके सामाजिक जीवन के लिये प्रोग्राम होता है। उनके गाने के स्वर और बाजे भी अलग होते है।

जातीय नाच

केवट, मल्लाह, मुसहर, अहीर, चमार, धोबी, पासी, नाई, भड़भूजा गडरिया, कहार, कुम्हार और हेला (भङ्गी) लोग अपने जातीय उत्सवो मे खुद नाचते और गाते हैं। सबके नाच और गाने के तरीक़े तथा बाजे जुदा-जुदा होते है। कुछ लोग तो सूप ही बजाकर गाते और नाचते हैं।

प्राचीन काल मे शिवजी नाचते थे, श्रीकृष्ण नाचते थे, अर्जुन नृत्य

के गुरु बन ये, उनकी नृत्य-कला अब चाहे विकृत रूप मे क्यों न हो, अभीतक गांवो मे सुरक्षित है। कुछ दिनो मे पश्चिमी शिक्षा के प्रभाव से हमारे शिक्षित-वर्ग में भी नृत्य कला के लिये अनुराग उत्पन्न हुआ है सही, पर अच्छी तरह विश्लेषण किया जायगा तो भारतीय नृत्य-कला, जो गाँव की विभिन्न जातियों में बिखरी हुई मिलती है, पश्चिमी नृत्य-कला से बहुत बातों मे विशेष कला-पूर्ण साबित होगी।

अहीरों का नाच नाच देना शायद योरप और अमेरीका दानो के लिये मुश्किल होगा। उनकी 'फरी' देखकर सरकस वाले भी दंग हो जायगे।

नृत्य के गीतो की शब्द-योजना इस ढङ्ग की होती है कि जब वे अपने स्वर में गाये जाते हैं, तब सुनने वालों के अग फड़कने लगते हैं। जैसे —

चितै दे मेरी ओर, करक मिट जाय रे।
हम चितवत तुम चितवत नाहीं,
तोरी चितवन मे मन लागो हमार।
करक मिट जाय रे॥ इत्यादि

नाच के वक्त इसकी गति, ताल और लय पर इसके श्रोता और दर्शक अग-सचालन के लिये विवश- से हो जाते हैं। जिन्होंने नाच के लिये गीतों का सृजन किया है, वे अवश्य नृत्य-कला के विशेषज्ञ रहे होगे।

सकेताक्षर

गांव की सम्पूर्णता प्रमाणित करने के लिये सबसे अधिक रोचक उदाहरण संकेताक्षरों का निर्माण है।

किसी सद्गृहस्थ की बैठक मे जब दस-पाच मिलने-जुलने वाले बैठे होते हैं और उनमे से किसीको किसी से कोई गोपनीय बात, बिना दूसरों को सुनाये हुये, कहनी होती है, तब वह संकेताक्षरों के उपयोग से

अपना कार्य सिद्ध कर लेता है। संकेताक्षरों के लिये गाँव में यह छंद प्रचलित है:—

अहि-फनि कमल चक्र टकोर।
तरुवर पढबै यो समिकोर॥
अंगुरिन अच्छर चुटकिन मन्त।
कहैं राम बूझैं हनुमत॥

इसमें अ से लेकर ज्ञ तक अक्षरों को वर्गों में बाट दिया गया है। वर्गों का पता हाथ की कई तरह की बनावटों, जैसे सांप के फन, कमल, चक्र, धनुष आदि से बताकर, फिर उंगलियों से वर्ग के अक्षर और चुटकियाँ बजाकर मात्रायें समझा दी जाती हैं। गुप्त रीति से काम निकालने का कैसा सहज तरीका है! ऐसा ही तरीका झंडियों से बात-चीत करने में बर्ता जाता है। कम से कम इतना तो हमें स्वीकार कर ही लेना चाहिये कि गाँव वालों ने अपनी छोटी-छोटी कठिनाइयों पर भी ध्यान दिया है और उन्हें किसी न किसी रूप में उन्होंने दूर भी कर लिया है। उन्हें मूर्ख कैसे कहा जायगा?

सम-सामयिकता

गांव के लोग असावधान नहीं कहे जा सकते। उनका ढाँचा ही इस क़िस्म का बना हुआ है कि वर्तमान-काल आपसे आप उनके अन्दर सरक जाता है। एक उदाहरण लीजिये —

रेल उनके लिये बिलकुल एक नई चीज़ थी, पर थोड़े ही दिनों के बाद उन्होंने बड़ी बारीकी से उसका गुण-दोष समझ लिया। एक अहीर, जो बुद्धिहीन गिना जाता है, अर्थ-शास्त्र की वह बात कहता है, जो यूनिवर्सिटी के किसी प्रोफ़ेसर के कहने की हो सकती है। वह राह में ज़ोर से गाता हुआ, गाँव भर को सुनाता हुआ चलता है:—

जब से छुटि रेल के गाडो कटिगा जगल पहाड ।
पैसा रहा सोगोडे क सौंपेउ पटवा पीठि कै हाड ॥

अर्थात् जब से रेल चली, उसके रास्ते के जगल और पहाड़ काट डाले गये । पास मे जो पैसा था, उस मैंने पैर को सौंप दिया । अर्थात् पैर को पैदल चलने न देकर उसके लिये टिकट ख़रीद लिया और पेट को पीठ के हाड़ (रीढ़) के सुपुर्द कर दिया । मतलब यह कि खाने के लिये पैसा नही रह गया तो पेट पिचककर रीढ़ से जा सटा । क्या यह एक मार्मिक आलोचना नही है ?

जिस समाज मे अपने वर्तमान सुख-दुख की आलोचना की शक्ति और मन की तरगो को पकडकर उनमे सरसता अनुभव करने की समझ मौजूद है, उसे बुद्धिहीन कैसे कहा जायगा ?

स्त्री-साहित्य

गाँव मे स्त्रियो की शिक्षा भी बचपन से, गुड़ियों के खेल के साथ, शुरू करदी जाती है । गुड़ियों के खेल मे लड़कियों को गृहस्थी की कुल शिक्षा मिल जाती है । जरा सयानी होने पर लड़कियाँ गीत सीखने लगती हैं, जिन मे उनके भावी जीवन मे लाभ पहुंचाने वाले मानसिक रोगों के मधुर नुस्खे होते है, जिन्हे वे बहू बनने पर नित्य आज़माया करती हैं । जैसे,

एक बहू अपने पिता की एक ही पुत्री, कई भाईयों की एक ही बहन और अपने पति की बहुत प्यारी पत्नी थी । वह उक्त तीनों के प्यार की नींद मे आनन्द से सोया करती थी । उसका सुख उसकी सास और ननंद से देखा न गया । उन्होंने उसे झिडकी दी । बहू ने पिता, भाई और पति के प्यार का अभिमान प्रकट किया । पति ने उसका उत्तर सुन लिया । तब,

एतना बचन राजा सुनलेन सुनहू न पवलेन,
राजा सारी रात सुतले करवटिया त मुखहू न बोलैं।
पति रुष्ट हो गया। बहू ने कारण पूछा। तब पति ने कहा—
नाहीं मोरा जेवना बिगड़ले, न सेजिया मोर भइलेनि हो,
रानी! गगा जमुन मोरी मैया, गरब बानी बोलिहु।
कारण जानकर चतुर बहू ने तत्काल अपनी भूल स्वीकार कर ली और कहा—
हमसे भइलि तकसिरिया सासु पग लागब।
राजा मैया मनाइ हम लेब राउर हंसि बोलहु।

लड़कियों को बहू बनने पर किस तरह भूल स्वीकार करके जल्द से जल्द मनोमालिन्य को मन से निकाल देना चाहिए, यह शिक्षा ऐसे गीतों से उनको दीजाती है और साथ ही यह भी बता दिया जाता है कि बहू को अपने पति की प्रसन्नता का और पुत्र को अपनी माता की सम्मान-रक्षा का कहाँ तक ध्यान रखना चाहिये। जिस समाज में पारिवारिक शांति-स्थापन के ऐसे गीत मौजूद हैं, उस असभ्य कैसे कहा जायगा?

एक उदाहरण और लीजिये —

एक नव वधू भोजन तैयार करके पति की बाट जोह रही है। पति आता है। बहू उससे देरी का कारण पूछती है। पति ने कहा —
बाबा की बगिया कोइलि एक बोलै कोइलि सबद सुनौ ठाढ़॥
बहू ने तत्काल कोयल को पत्र लिखा —
तनी एक बोलिया नेवरतिउ कोइलरि प्रभु मार जेवने क ठाढ़॥
कोयल ने भी बहू को जवाब लिख भेजा —
ऐसइ बोलिया तुं बोलि के दुलहिन, दुलहे न लेतिउ बिलमाय॥
कोयल ने कैसी मीठी चुटकी ली है? बहू की बोली कोयल की

तरह मीठी हो तो घर में कितना सुख छा जाय। यह बात गीत में कितने सुन्दर तरीक़े से बता दी गई है।

स्त्री-गीतों की दुनिया में एक यह विचित्र बात भी पाई जाती है कि सारे गीत सास के जीवन तक ही पहुँचकर समाप्त हो जाते हैं। बहू जब स्वयं सास बन जाती है, तब उसकी सास का कोई भी समाचार हमें गीतों में नहीं मिलता। पुरुषों के लिये वृद्धावस्था के गीत और भजन बहुत से हैं, जो उनको श्मशान तक पहुँचा आते हैं। उनमें स्त्री, पुत्र, पौत्र आदि की निस्सारता जोरदार शब्दों में प्रकट करके पुरुष को परलोक के लिये उत्कंठित किया जाता है, पर स्त्रियों की वृद्धावस्था के लिए न गीत हैं, न भजन, न पद। वृद्धा स्त्रियों को निराधार क्यों छोड़ दिया गया? यह रहस्य समझ में नहीं आता। क्या स्त्रियां कुटुम्ब के लिये तरह-तरह की दवाओं से भरी बोतलें हैं कि जब दवा ख़तम हो जाती है तब वे खाली बोतलों की तरह उपेक्षा-पूर्वक अलग रख दी जाती हैं, और फिर उनकी खोज-खबर भी नहीं ली जाती? विचारणीय प्रश्न है।

ग्राम-गीत

जन्म से लेकर मृत्यु तक हिन्दुओं का समस्त सामाजिक जीवन काव्य-मय है। उसमें प्रत्येक मङ्गल-कार्य में सङ्गीत को मुख्य स्थान दिया गया है। शायद ही किसी हिन्दू का कण्ठ बचा हो, जिसमेंकभी न कभी कोई गान न फूट निकला हो।

उत्सवों में मनोरञ्जन के लिये हिन्दू-जाति में सङ्गीत तो मुख्य है ही, प्रत्येक परिश्रम के काम के साथ भी गीत लगा हुआ है। राह चलते हुए स्त्री-पुरुष गीत गा-गाकर थकान मिटाते चलते हैं, पालकी लिये हुए कहार गीत गा-गाकर रास्ता काटते हैं, चरवाहा सुनसान

अङ्गरख में अपने गीतों से पेड़-पत्तों तक को जगाता रहता है, रात में किसान कोल्हू चलाकर ईख का रस निकालने के साथ अपने सरल और सरस हृदय का मधुर रस भी निकाल कर जीवन के अनेक कष्टों से पीड़ित सहकर्मियों और दूर जानेवाले बटोहियों को बाटता है।

पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों ने अपने कामों में गीतों की सहायता अधिक ली है। संस्कार के अवसरों पर प्राय कुल गीत स्त्रियां ही गाती हैं। जांत पीसने, धान रोपने, खेत निराने, खेत गोड़ने और काटने के समय गांव की स्त्रिया जो गीत गाती है उनमें गृहस्थी के सुख-दु ख की बड़ी ही मार्मिक बातें भरी होती है। सम्भव है गांव के गीतों में नागरिक कवि की कविता का सा आनन्द न मिले, पर उन में आनन्द का अभाव नहीं होता, रुचि-भेद से आनन्द का मिठास में अन्तर हो सकता है।

ग्राम-गीतों ने गांव के अन्त पुरों, चौपालों, बाग-बगीचों, खेतों और खलियानों में कहीं शृङ्गार-रस का, कहीं करुणरस का, कहीं हास्यरस का और कहीं वीररस का स्रोत खोल दिया है। सहृदय नर-नारी उसमें डुबकी ले रहे है, रसपान कर रहे हैं, मुग्ध हो रहे हैं और थोड़ी देर के लिये संसार के माया-जाल से मुक्त होकर स्वर्गीय सुख का रसास्वादन कर रहे हैं। नागरिक कवियों की कविता का ऐसा प्रभाव कहीं देखा नहीं गया।

सभ्य-समाज में आकर कविता भी सभ्य हो गई है। पिङ्गल व्याकरण, रस, अलङ्कार और मुहावरे नामक सभ्यता के शुभ लक्षणों से उसका नख-शिख दुरुस्त होगया है। पर गांव के गीतों में वह अपने असली ही रूप में निवास करती है। वहां वह कालीदास की 'अविलासानभिज्ञा' है और भोलापन ही उसका सौन्दर्य है।

गाँव प्रकृति का क्रीड़ा-स्थल है और नगर मनुष्य का कार्यक्षेत्र।

गांव में प्रकृति स्वयं गान करती है, पर नगर में स्वनिर्मित सभ्यता से बंधे हुए कवि की दशा 'व्यभिचारी' और 'चोर' की-सी होगई है —

चरन धरत कांपत हृदय, नाहिं सुहावत सोर।
सुवरन कहँ खोजत फिरत, कवि व्यभिचारी चोर॥

अतएव जहां तक स्वाभाविकता का सम्बन्ध है, नागरिक कवि की कविता से प्रकृति-जन्य ग्राम गीतों का महत्व अधिक है।

प्रकृति ने गांव के प्रत्येक समाज में कवि उत्पन्न किये हैं। अहीरों के लिये बिरहे तुलसी ने नहीं बनाये थे, न कहारों के लिये कहरवा सूरदास ने। धोबी, चमार, नाई, बारी, पासी और कुम्हारों में कबीर, बिहारी, केशव, भूषण, देव और पद्माकर नहीं पैदा हुये थे। पर इन जातियों में भी कविता किसी न किसी रूप में वर्तमान है। और कहीं कहीं तो वह नागरिक कवियों की कविता से अधिक सरस है।

सिद्ध कवियों की कविता का आनन्द वही उठा सकता है जिसने छन्द, व्याकरण और अलङ्कार-शास्त्र का अच्छी तरह अध्ययन किया है। ऐसी कविता को हम स्वाभाविक कविता नहीं कह सकते। यह तो माली-निर्मित उस क्यारी की तरह है जिसके पौदे कैंची से कतरकर ठीक किये रहते हैं और जो खास तरह की रुची से विवश होकर सजाई जाती है। ग्राम-गीत तो प्रकृति का वह उद्यान है जो जगलों में, पहाड़ो पर, नदी-तटों पर, स्वतन्त्र रूप से विकसित हुआ है। वह अकृत्रिम है। सिद्ध कवियों की कविता किसी बगले का वह फूल है, जिसका सर्वस्व माली है। पर ग्राम-गीत वह फूल है, झरने जिसको पानी पिलाते हैं, मेघ जिसे नहलाते हैं। सूर्य जिसकी आँखें खोलता है, मन्द मन्द समीर जिस झूले में झुलाता है, चन्द्रमा जिसका मुँह चूमता है और ओस जिस पर गुलाब जल छिड़कती है। उसकी समता बगले का कैदी फूल नहीं कर सकता।

हमने इस पुस्तक मे जो गीत दिये है, उनमे जो कवित्व है, उसे ही हम अपनी लेखनी-द्वारा प्रकट करने मे समर्थ हुए हैं। पर वे ही गीत जब स्त्री कंठ से निकलते हैं, तब उनका माधुर्य और उनका उन्माद कुछ और ही हो जाता है। विधाताने स्त्रियों के कण्ठ मे जो मिठास रखदी है, जो लचक भर दी है, उसे हम लोहे की लेखनी मे कहां से ला सकते हैं?

ग्राम-गीतों में श्रृङ्गार, करुण और शात रसके विषय अधिक मिलेंगे। कुछ हास्य-रस भी हैं।

पुरुषों के गीतों मे ज्यादातर वीरता, नीति, स्त्रियो के प्रति घोर आकर्षण, त्याग और वैराग्य के भाव भरे होते हैं। स्त्रियों के गीतों में प्राय. श्रृङ्गार और करुणरस ही की प्रधानता होती है। उनसे त्याग और वैराग्य के गीत तो शायद ही कहीं प्राप्त हो सकें।

पुरुष के गीतो से ऐसा लगता है कि पुरुष भौंरे की तरह दौड़ दौड़ कर सब रसों का स्वाद लेना चाहता है। और स्त्री के गीतों से यह प्रकट होता है कि वह उसे एक केन्द्र पर बाध रखना चाहती है।

हिन्दुओ मे सम्मिलित कुटुम्ब की प्रथा प्रचलित है। स्त्री-गीतों मे बडे जोरो के साथ इसका समर्थन किया जाता है। कन्यायें और बहुयें सब कुटुम्बियों के अलग-अलग उपनामो को जोड़-जोड़कर गीत गाती हैं। जिससे गृहस्थी के एक केन्द्र से हर एक कुटुम्बी बधा हुआ रहता है।

गीत भारतवर्ष के प्रत्येक प्रात मे पाये जाते है और घर के भीतर गाये जाने वाले गीतो मे सर्वत्र समानता मिलती है। जान पड़ता है, एक ही आत्मा भिन्न-भिन्न भाषाओ मे बोल रही है। यह हमारी एक सस्कृति का प्रभाव है। और यही इस बात का भी एक प्रबल प्रमाण है कि सारा भारतवर्ष एक है।

आगे गांव मे प्रचलित कुछ छन्द दिये जाते है, उनमे देखिये काव्य के रसो का परिपाक किस सुन्दर ढङ्ग से हुआ है —

जब महुआ चूने लगता है, तब अक्सर लोग गाने लगते हैं :—

औचक आइ जोबनवा मारेसि बान।
महुआ रोवै ठाढ़ आम बौरान॥

महुवे का फूल आँसू की तरह टपकता है और उन्हीं दिनों आम में बौर भी आते हैं। 'बौरान' के दो अर्थ हैं—बौर गया और बावला हो गया। क्या यह गिन्नी कविता से कम सरस है?

हास्य-रस के लिये एक फूहड़ स्त्री का मजाक सुनिये :—

फूहरि के घर खिड़की लगी। सब कुत्तों को चिंता पड़ी।
बाडा कुत्ता छितवै मौन। लगी तो है पर देगा कौन?

फूहड़-स्त्री का इससे चुभता हुआ मजाक और क्या होगा?

अपने प्राण-धन के साथ दु ख मे भी सुख अनुभव करने वाली एक पति-वल्लभा का हृदयोद्गार सुनिये —

टूटी खाट घर टपकत टटियौ टूटि।
पिय कै बाँह सिर्हनवाँ सुख कै लूटि॥

एक प्रेम-बिह्वला अपना घर जलता हुआ देखकर भी सुख अनुभव कर रही है।—

आगि लागि घर जरिगा अति सुख कीन्ह।
पिय के हाथ घइलना भरि भरि दीन्ह॥

आगे की पंक्तियो मे देखिये, कविता का सच्चा स्वरूप झलकता हुआ मिलता है, या नही?

परबत पर दिवला बरै, चहुँ दिसि बाजै पौन।
बरै अचभा जानिये, बुझत अचभा कौन॥

साजन तेरे हेत, अँखियाँ तो नदिया भई।
मन भयो बारू रेत, गिर गिर परत करार ज्यों॥

जोबन गयो तो भल भयो, तन से गई बलाय।
जने जने का रूठना, मोसे सहा न जाय॥

❀ ❀

साँझ भई दिन अथवा, चकई दीन्हा रोय।
चल चकवा वा देस को, जहाँ साँझ नहिं होय॥

❀ ❀

आग लगी बनखंड में, दाझा चंदन बास।
हम तो दाझे पंख बिन, तू क्यों दाझे हंस॥
फल खाया बीटाँ करी बैठ तुम्हारी डाल।
तुम जरो हम उड चले, जीवेंगे कै काल॥

❀ ❀

सत मत हारे बावरे सत हारे पत जाय।
सत की बाँधी लच्छमी, फेर मिलैगी आय॥

कहने के ढग के बारे मे भी एक उदाहरण देना आवश्यक है। **'मुद्दई सुस्त, गवाह चुस्त'** की कहावत प्राय शिक्षित-वर्ग म प्रचलित है, पर इसी भाव को गाववालो ने अधिक सरसता से ऐसा कहा है —

नाव चढे झगडालू आवै पोरत आवै साखी।

कुछ उदाहरण और लीजिये —

माँगै न आवै भीख। तो सुरती खाना सीख॥

❀ ❀

जब देखी परनारि। तब फूट गई चारि॥

❀ ❀

जोरू टटोलै गठडी। माँ टटोलै अँतडी॥

कहावतें और महावरे

गाँव की कहावतों के थोड़े से शब्दों में एक व्यक्ति का, एक समाज का सच्चा और विशाल अनुभव कैसे भर दिया जाता है, यह देखकर आश्चर्य होता है।

जब किसान कहता है.—

लरिका ठाकुर बूढ़ दिवान। मम्मिला बिगरै साम्म बिहान॥

अर्थात् राजा लड़का है और दीवान बूढ़ा, दोनों में पट नहीं सकती। सुबह से शाम तक झगड़ा होके रहेगा।

तब हमको मानना पड़ता है कि साधारण किसान को भी राजा और दीवान के स्वभाव का सूक्ष्म परिचय है।

एक दिन एक गाव में रियासत का एक सिपाही एक देहाती आदमी से अपना यह दुखड़ा रो रहा था कि उसे खाना खाने तक की फुरसत नहीं मिलती। रात के १२ ही क्यों न बजे हों, जिलेदार के हुक्म से उसे दौड़ना पड़ता है। इस पर देहाती ने कहा—

चाकर है तो नाचाकर। ना नाचे तो ना चाकर॥

इस उत्तर में गूढ़ तत्व की बात के साथ अनुप्रास का आनन्द भी भरा है।

हिन्दी में जितनी कहावतें और महावरे प्रचलित है प्राय सब गांव की बोली से आये हुये हैं। यह उसका एक बड़ा ऋण है, जिससे हिन्दी कभी उऋण नही हो सकती।

गांव के लोग बड़े ही प्रत्युत्पन्नमति होते है, यह उनकी कहावतों और महावरों से अच्छी तरह विदित होता है। उन्होंने कोई चीज़ देखी, उसकी गति-विधि को समझा और झट उसकी एक कहावत बनाली। जैसे, मामूली-सा काम करते हुए कोई बड़ा कष्ट उत्पन्न हो जाने पर वे

कहते है —खिचरी खात पहुंचा टूट ।

कोई आदमी ऐसा काम करना चाहता है, जो उससे नहीं हो सकता, तब वे कहते है.—

डगर चला न जाय रजाई का फाड़ बाधे । इत्यादि

यह क्षमता शहरवालों में बिलकुल ही नहीं है । 'टाई' और 'पतलून' जैसे झकझटी वस्त्रों को वे सैकड़ो वर्षों से देखते और पहनते आ रहे हैं, पर कभी उन्होने उनके लिये कोई महावरा या कहावत नहीं बनाई और न कभी उनमें सरसता अनुभव की । पर गाववालो ने रजाई, धोती, पगड़ी, जूता सभी पर तो कुछ न कुछ कहा है ।

कहावतें तो ग्राम-साहित्य के रत्न हैं । वे गाववालो ही के लिये नही मनुष्य-मात्र के लिये उपयोगी हैं । और जो गाववालों को समझना चाहें, उनके लिये तो अधेरे रास्ते के दिये-जैसी हैं ।

महावरे भाषा के प्राण हैं । महावरों का ठीक प्रयोग न जाननेवाला न अच्छी भाषा बोल सकता है, न लिख ।

बुझौवल

बच्चो की बुद्धियो पर शान चढ़ाने के लिये गावो मे बहुत सी पहेलिया, जिन्हे बुझौवल भी कहते है, प्रचलित है । शाम को चौपाल मे या नीम के पेड़ के नीचे किसी अधेड या बुड्ढे को घेर कर बच्चे बैठ जाते हैं और बुझौवल शुरू हो जाती है । बुझौवल बड़े ही गूढ़ार्थ वाले होते हैं । आश्चर्य है कि गाव के अपढ़ अशिक्षित लोग उन्हे बना कैसे लेते हैं ?

पाजामे का बुझौवल सुनिये —

दुई मुंह छोट एक मुंह बड़ा, आधा मनई लीलेखडा ।

इसी तरह तवा और कड़ाई पर भी बुझौवल हैं ।

चाची के दुइ कान, चाचा के कानै न ।
चाची चतुर सयानि, चाचा कुछ जानै न ॥

भाषा की टकसाल

आज हिन्दी या हिन्दुस्तानी भाषा का जो रूप हमें दिखाई पड़ता है, वह गांव की टकसाल का ढला हुआ है। हिन्दी के आदि जन्म-दाता गाववाले ही हैं। उन्हींने संस्कृत शब्दों को हिन्दी का रूप दिया है।

गांव की फैक्ट्री में नये-नये शब्दों के ढालने और पुराने शब्दों के छराद्ने का काम हर वक्त जारी रहता है। 'लालटेन' का असली नाम 'लैन्टर्न' है। गांव की फैक्ट्री में उसका 'लालटैन' बना, जिसे अंग्रेज़ी पढ़े-लिखे लोगों ने भी स्वीकार कर लिया।

मोटर का 'हार्न' अंग्रेज़ी शब्द है, जिसका अर्थ 'सींग' है। यह उस समय का शब्द है, जब अंग्रेज़ गोरू चराया करते थे और सींग बजाकर अपनी गायें बुलाया करते थे। यद्यपि अब उसका शरीर हड्डी का न रहकर रबर और लोहे का बन गया है, पर स्वर-साम्य के कारण उसका नाम पुराना ही है। कभी भारत में भी सींग का चलन था। सींग बजाकर श्रीकृष्ण अपनी गायें और शिवजी अपने भूत-प्रेत बुलाया करते थे।

शृंगी टेरि भूतगन प्रेरे।

(तुलसीदास)

अगर 'हार्न' शब्द का हिन्दी नाम रखने के लिये यूनिवर्सिटी या कालेज के प्रोफेसरों को कहा जाता तो संभवत: वर्षों तक वे 'सींग के' आस ही पास चकराते रहते और शायद न बना पाते। पर गांव की फैक्ट्री में यह अपने दो स्वरों 'भों' और 'पूं' को मिलाकर, 'भोंपू' बन गया, जिसे सभ्य और शिक्षित-वर्ग को भी स्वीकार करना पड़ा।

इसी तरह उन्होंने 'बाइसिकल' को 'पैरगाड़ी' कर लिया, जो

'बाइसिकल' शब्द के असली अर्थ 'दो पहिये' से कहीं अधिक सार्थक है। 'बाइसिकल' का ऐसा अनुवाद पढ़े-लिखे लोग शायद ही कर सकते।

अंग्रेज़ी में संज्ञा शब्दों की क्रियायें बना लेने का जो क्षमता है, वह गाँव की फैक्ट्री में भी है। अंग्रेज़ी से अगर 'मोटर' से 'मोटरिंग' और 'पैट्रोल' से 'पैट्रोलिंग' बन सकता है तो गाँव की बोली में 'मिट्टी' से 'मटियाना', 'साबुन' से 'सबुनाना', 'साठ' से 'सठयाना' आदि आसानी से, बिना किसी प्रेरणा के बन जाते हैं। फारसी की क्रियाओं को हिन्दी-रूप दे देने की शक्ति भी गांव की फैक्ट्री ही में है। उसी से 'बदल' का 'बदलना' बना है। अभी और भी कितने ही शब्द वहां बनकर काम कर रहे हैं, जिनका हिन्दीवालों को पता ही नहीं है। और किसी को पता है भी, तो वह उनसे काम लेने में हिचकता है। जैसे, उरेहना = चित्र बनाना।

ऊंची अटारी उरेही चितसारी रना।

(ह० ग्रा० सा०, पृ० १७०)

छिनगाना = पेड़ की डाले छाँटना (संस्कृत का छिन्नाग), आदि सैकड़ों शब्द हैं, जिनकी हिन्दी में नित्य ज़रूरत पड़ती है। और मिलते नहीं। लेखकों को उनके अभाव में उनका अर्थ समझाना पड़ता है। ऋग्वेद का एक 'द्यौ.' शब्द, जिसका अर्थ 'आंकाश' है, 'दहउ' के रूप में गाँव के हिन्दू और मुसलान दोनों के मुँह-मुँह में मौजूद मिलता है।

आजकल हिन्दुस्तान में एक राष्ट्रभाषा की अनिवार्य आवश्यकता समझी जा रही है और हमें हर्ष है कि हमारी 'हिन्दी' ही को यह गौरव प्रदान किया गया है। अब उसको अधिक व्यापक बनाने के लिये उसे एक नये सांचे में ढालने का प्रयत्न भी किया जा रहा है। इस प्रयत्न में सरकारी और गैर सरकारी दोनों ओर के विज्ञ शामिल हैं। और इसके

लिये वे हिन्दी और उर्दू के कोषों से मसाला ले रहे हैं। पर हिन्दी और उर्दू के कोष-कारों की परिधि तो खुद छोटी थी। उनके संगृहीत शब्दों से चुनकर जो भाषा बनाई जायगी, वह राष्ट्र की भाषा नहीं, कोष की भाषा ज़रूर बन जायगी।

देहात में संस्कृत और अरबी-फारसी के इतने शब्द अपने अपभ्रंश रूप में प्रचलित हैं कि आश्चर्य होता है कि वे वहाँ कैसे पहुंच गये?

मुझे एक गीत में 'व्यक्ति' शब्द सुनकर आश्चर्य हुआ—

रामा तब बोले बारी इसवतिया रे ना।
रामा जहु हउवा घर के बेकतिया रे ना॥

(नायकवा गीत)

मैं समझता था, संस्कृत का यह शब्द हिन्दी में बंगला से आया है, पर यह तो घनान्धकार में बसने वाले एक ग्रामीण के घर में मुझे मिला। ऐसे शब्दों को राष्ट्रभाषा से अलग कैसे रक्खा जा सकता है?

इसी तरह संस्कृत के और भी बहुत से शब्द हैं, जो ग्राम-गीतों में आम तौर से प्रयुक्त होते हैं, पर हिन्दुस्तानी भाषा के निर्माण में संलग्न विद्वानों को पता है कि नहीं, मालूम नहीं।

गांव में जितने पेशेवर होते हैं, सब के अलग-अलग पेशे के शब्द हैं। हिन्दी में उनका तो अभाव ही है।

अतएव यह मानना पड़ेगा कि गांव की बोली हमारी हिन्दी से अधिक सम्पन्न है। और जब इतना बड़ा बोलता हुआ कोष हमारे सामने खुला पड़ा है, तब हम अलमारी में रक्खे हुये अपूर्ण और मूक कोषों से हिन्दुस्तानी भाषा का पेट भरने में लगें, तो यह हंसी ही की बात है।

मेरा विश्वास है, गांव के साहित्य का अध्ययन किया जायगा तो हिन्दी और हिन्दुस्तानी का प्रश्न सहज में हल हो जायगा। क्योंकि हमको संस्कृत और अरबी-फारसी के उन शब्दों को गृहण कर लेने में

आगा-पीछा न करना पड़ेगा, जिनको गांव में हिन्दू और मुसलमान दोनों आम-तौर से बोलते और समझते हैं। जिनके लिये हम भाषा को सरल बनाने जा रहे है, वे कितने शब्दों को, जिनको हम उनके लिये कठिन समझ रहे हैं, आसानी से समझ लेते हैं, यह तो हमें सबसे पहले जान लेना चाहिये।

न्याय की व्यवस्था

अंग्रेज़ी राज होने से पहले गाँव-गाँव में पंचायतें थीं, और पंचायतें केवल धन-सम्बन्धी झगड़े ही नहीं निपटाती थीं, समाज के संगठन को सुदृढ़ बनाये रखने के लिये बुराइयों के रोकने में भी वे तत्पर रहती थीं। हज़ारों वर्षों से भिन्न-भिन्न प्रकार की शासन-व्यवस्थाओं का दबाव पड़ते रहने से अब पंचायतें टूट टूटकर छोटे-छोटे टुकड़ों में बट गई है और हरएक पेशेवालों की पचायतें अलग-अलग बन गई हैं। इन पचायतों के सरपच 'चौधरी' कहलाते हैं। सवर्गियों में चौधरी का मान किसी राजा से कम नहीं होता। वह स्वय जातीय नियमों का कड़ाई से पालन करता है और अन्यों से कराता भी है।

छोटी जातियों में प्रत्येक व्यक्ति पच कहलाता है, और सरपंच या चौधरी उन सब में बड़ा माना जाता है।

एक चौधरी के मर जाने पर, या किसी जातीय अपराध से उसके पद-च्युत किये जाने पर दूसरा चौधरी सर्व-सम्मति से चुन लिया जाता है। चौधरी का चुनाव सार्वजनिक होता है। चुनने वाले खुद स्वजाति के किसी लोक-प्रिय व्यक्ति से उनका चौधरी बनने की प्रार्थना करते हैं। इससे उम्मीदवारों के झगड़े नहीं उठते।

तेलियों के एक बिरहे में 'पच' की बड़ी सुन्दर व्याख्या मिलती है:—

जह पच तह परमेसर भाई जहं कुवना तहं कींच।
वहिय कींच का बना चउतरा, सब पंच नवावइं सीस॥
पचा क बैठ मडरिया, मडरिया छोट बड़ा एक तूल।
केकरे अर्ती उतारउ रामजी, केकरे खोसउ बेली फूल॥
पंचा क आउब बहुत निक लागै, जो घर सपति होय।
आवत के पचा क सिसिया नवावउ
जात के पैयाँ पढ़ रे जाउ॥

इसमे पंच को परमेश्वर कहा गया है और पचो की मडली मे छोटे-बडे सब बराबर बताये गये है। पचो का किसी गृहस्थ के घर जमा होना बड़े सौभाग्य की बात मानी गई है, और पचा का स्वागत-सत्कार करना, उनको सिर झुकाकर प्रणाम करना और उनके पैर छूना एक सद्गृहस्थ के गर्व की बात बताई गई है। आज देश मे काग्रेस या एसेम्बली के प्रधान मन्त्री, जो चुने जाकर अपने पदो पर पहुचते है, जिस जिम्मेदारी का अनुभव करते है, वही चौधरी या सरपच भी करता है। अन्तर इतना ही है कि चौधरी अवैतनिक होता है। सार्वजनिक सेवा का इससे अच्छा उदाहरण शायद ही और कही मिले।

जातीय नियम के विरुद्ध जब कोई व्यक्ति अपराध करता है तब सब पच बुलाये जाते है और उनके सामने मामला पेश होकर उसका निर्णय होता है। पचायत का निर्णय अपराधी को मजूर करना पडता है। अदालती निर्णय से पचायती निर्णय कम खर्च का तो होता ही है, अपराधी नम्रतापूर्वक अपराध और उसकी सज़ा भी स्वीकार करता है और आगे वैसा अपराध प्राय करता भी नही है। अदालतो के निर्णय मे यह विशेषता नही होती। उससे तो परस्पर द्वेष-भाव ही की वृद्धि होती हुई दिखाई पडती है।

जिन जातियो में चौधरी चुनने और पंचायत का निर्णय मानने की ऐसी सर्वोत्तम प्रथा प्रचलित है, उन्हे शासन-कला से अपरिचित बताना कहां तक युक्ति-संगत होगा ?

स्वास्थ्य और स्वच्छता

गाँववालो को स्वास्थ्य और स्वच्छता के जितने ज्ञान की जरूरत होती है, वह उनके पास पूरा है। वे साफ़ नही रहते, सफाई नही रखते, इसका कारण उकनी गरीबी है, न कि अज्ञान। वे स्वास्थ्य और सफाई के नियमों से परिचित हैं, यह उनकी कहावतो से प्रमाणित होता है। मेले-ठेले, शादी-ब्याह मे गांव के नौजवान जब बन-ठनकर और भड़कीले कपडो से सज-बजकर निकलते हैं, तब कौन कह सकता है कि उनमे शृङ्गार के प्रति उदासीनता है ?

शारीरिक स्वास्थ्य ठीक रखने के नियम उनको मालूम है। उनके नियम बहुत सस्ते और बडे ही गुणकारी भी है। यदि उनकी जानी हुई औषधियाँ उनको उपलब्ध हो सकें, या सबका संग्रह कराके, हर एक को बता दी जायँ तो उनको अस्पतालो की ज़रूरत बहुत कम रह जायगी।

और मनुष्य के भयंकर रोगो के तो उनके पास अचूक नुस्खे हैं। ग्रामगीतो के संग्रह मे खान-पान की अव्यवस्था के कारण और गुड अधिक खाने से मुझे 'डायबिटीज' रोग हो गया था और पेशाब मे १० फी सदी चीनी जाने लगी थी। वह गांव के एक गरीब बुड्ढे की बताई हुई दवा— गूलर की तरकारी खाने से चला गया। इसी तरह कोढ़, क्षय, दमा, ब्लड-प्रेशर आदि असिट माने जाने वाले रोगों के सैकड़ो नुस्खे गाँववालो को मालूम हैं।

बेल की पत्तियो का रस शहद मिला कर रोज सवेरे लेने से भी 'डायबिटीज़' रोग मिट जाता है। मैंने एक रोगी पर आज़मा कर

देखा है।

हिन्दी-मन्दिर प्रेस के एक कपोजीटर को क्षय रोग लग गया था। उसके थूक के साथ ख़ून जाने लगा था। देहात के लोग इस रोग का इलाज 'लहसुन' बतलाते हैं। लहसुन का सेवन एक महीने करके कंपोजीटर बिलकुल नीरोग हो गया और अब वह प्रेस में 'फोरमैन' है।

गाँवों मे जाते-आते रहने से मुझे बहुत सी बीमारियों के देहाती नुस्खे मालूम हो गये। मैंने कइयों को आज़माया और बहुत ही गुणकारी पाया। जैसे,

कमल या पीलिया रोग मे गाँव के लोग मूली के पत्तो का अर्क गुड़ के साथ लेते हैं और लाभ होता है।

एक्जिमा के लिये तांबे के पैसो को कांसे की थाली मे दही के साथ घिसकर लगाते हैं।

गांव मे जब कोई नई बहू किसी बडी बूढ़ी को प्रणाम करती है, तब हाथ मे आंचल पकडकर, आंचल को उसके पैर से तीन बार छुवा-छुवाकर अपने माथे से छुवाती है। तब उससे वह यह आशीर्वाद पाती है :—

दूधन नहाओ, पूतन फलो।

इसके शाब्दिक अर्थ से इसका भावार्थ गूढ़ है। वास्तव मे यह एक नुस्खा है। नई बहू आंचल इसलिये हाथ मे लेती है कि उसे आंचल भर देने का अर्थात् पुत्रवती होने का आशीर्वाद मिले। आशीर्वाद मे उसे बता दिया जाता है कि दूध से नहाओगी तो पुत्र उत्पन्न होगा।

मुझे मालूम नही कि इसमे सचाई कहा तक है। पर यह नुस्खा उसी मतलब के लिये है, यह मुझे विश्वास है।

गांव के लोग उत्तर तरफ सिर करके नही सोते और दक्खिन तरफ मुँह करके भोजन नही करते। इसमे भी कोई वैज्ञानिक रहस्य होगा, जो उनके पूर्वजो को मालूम था।

वे पेशाब एंडी उठाकर करते है। उनका कहना है कि इससे अंड-वृद्धि का रोग नही होता। अंड-वृद्धि को रोकने के लिये पैर के अगूठे को काले डोरे से कसकर बाँधते भी है।

हरएक हिन्दू लडके का कान छिदाया जाता है और उसमे सोने या चाँदी की बाली पहना दी जाती है। गाँव वालो का विश्वास है कि कान मे कोई धातु का टुकडा लगा रहने से आँखो की ज्योति बढती है।

हो सकता है कि गाँव के गरीबो के इलाज अमीरो को सूट न करें, पर अस्पताल के महगे इलाज, जो अमीरो के लिये हैं, गरीबो पर क्यो लादे जाँय? गरीबो के लिये उनके सस्ते नुस्खे क्यो न सग्रह किये जाय?

गाँव के लोग स्वस्थ, साहसी, सुदृढ और बडे ही परिश्रमी होते है। स्वास्थ के बारे मे इससे अधिक प्रमाण और क्या चाहिये कि वे बीमार कम पडते है।

साहसी वे ऐसे होते है कि घोर अँधेरी रात मे, हाथ मे लाठी लिये सुनसान जंगल मे जासकते है। सारी रात अकेले अपना खेत रखाते रहते है। न उन्हे साँप का डर, न भूत-प्रेत का भय, न ककड और काटे की परवा। उनके बराबर साहसी दूसरा हो नही सकता।

उनकी सुदृढता का सब से प्रबल प्रमाण तो योरप की बडी लडाई मे मिला था। जब कि हिन्दुस्तान के सिपाहियो ने दो-दो तीन तीन दिनो तक केवल चने और थोडे पानी पर गुजर करके जर्मनो के छक्के छुडा दिये थे। अतएव खानपान की विशेषता से हमारे गावो के आदमी ससार की किसी भी सभ्य कहलाने वाली जाति के आदमियो से ज्यादा ही सुदृढ साबित होगे।

उनके परिश्रमी होने का तो कहना ही क्या है? वे लगभग चार बजे सबेरे उठ जाते है। शौच आदि से निवृत्त होकर सूरज निकलते निकलते घर-गृहस्थी के कामो पर डट जाते है।

जवान किसान दोपहर मे पहले मुँह मे कोई आहार नही डालता। दोपहर को जब सूरज ठीक सिर पर आता है, और जाडो मे सूरज लगभग दो बजे वहो पहुँचता है, वह नहा कर पहला आहार लेता है। फिर दूसरा आहार रात मे नौ-दस बजे। इससे उसका स्वास्थ दिनभर मे चार बार खाने वालो से अच्छा तो रहता ही है, साथ ही परिश्रम करने का उसे काफी समय भी मिल जाता है।

अखबारो मे पढा है कि अमेरिका मे 'ए टी ब्रेकफास्ट लीगें' (सबेरे के भोजन की विरोधिनी सभाये) कायम हो रही है, और लोगो को पहला आहार दोपहर को लेने की सलाह दी जा रही है। इससे तो यही कहा जायगा कि हमारे गाँव के किसान सदियो से उस स्थान पर खडे है, जहाँ सभ्य-संसार बहुत घूम-फिरकर अब पहुँचना चाहता है।

गाँव की स्त्री दिनभर काम मे जुती रहती है। सबेरे घर साफ करती है, बरतन मोजती है, कुवे से पानी लाती है, जानवरो को चारा-भूसा डालती है, आटा पीसती है, दाल दलती है, बच्चो की सभाल करती है, रसोई बनाती है, सबको खिलाकर तब स्वय खाती है, तब कहा दोपहर के बाद शाम तक कुछ फुरसत पाती है, उस फुरसत मे भी वह कुछ सीती-पिरोती रहती है। रात मे फिर भोजन बनाकर घर भर को खिला- पिलाकर, सबके अत मे स्वय खा-पीकर तब विश्राम करती है। इस तरह गाँव के स्त्री-पुरुष दोनो का अधिकाश समय परिश्रम मे बीतता है, और परिश्रम से उनका स्वास्थ अच्छा रहता है।

अधिकाश स्त्री-पुरुष रविवार को नमक नही खाते, एकादशी को निराहार रहते हैं, बहुत-से त्योहारो पर केवल फलाहार करते है। इन सब का भी प्रभाव उनके स्वास्थ पर पडता है और वे बहुत कम बीमार पड़ते है।

पुरुष और स्त्री दोनो दातुन और स्नान करके ही भोजन करते है

और कपड़े खोलकर हाथ-पैर धोकर तब खाने पर बैठते है।

चल्हा रोज़ पोता जाता है और चौका गोबर से लीपा जाता है। बरतन मांजकर खूब चमका दिये जाते है।

अतएव स्वच्छता का ध्यान गांव के लोग कम नही रखते, जैसा कि समझा जाता है। उनमे जो कुछ गदगी दिखाई पड़ती है, वह हाथ की तंगी की वजह से है, न कि उनका स्वभाव ही गदा होता है।

वर्ष मे दो बार वे अपने घरो की सफाई करते है— एक दीवाली के आसपास, दूसरे होली के दिन। दीवाली का दिया जलाने के पहले वे अपने घर को लीप-पोतकर साफ कर लेते है, घूरे पर भी दिया जला कर उसे प्रकाशित कर देते है। होली के कई दिन पहले से वे घर और बाहर की सफाई मे लग जाते है। अनावश्यक कूडा-करकट जमा करके जला देते हैं और घर लीप-पोतकर साफ़ और सुन्दर कर लेते हैं। स्त्री और पुरुष दोनों घर की सफाई मे लगे रहते है।

गाय-बैल आदि जानवरो को किसी पोखरे मे ले जा कर नहलाना, धोना और उनकी सींगो मे तेल लगाकर उनको चमका देना हरएक किसान अपना कर्त्तव्य समझता है।

होली के दिन गांववालो की खुशी देखने योग्य होती है। वे सफ़ेद कपडे पहनकर हसते, गाते, परस्पर विनोद करते, रग और अबीर उडाते घर से निकलते है। सारा दिन और रात मे भी देर तक गाते-बजाते रहकर वे सारा दु ख-दर्द भूल जाते है। अतएव स्वच्छता का उनको पूरा ख़याल रहता है बशर्ते कि उनके पास पैसा हो।

खोज की जाय तो गांव वालो मे इतने प्रकार के स्वास्थ-वर्द्धक खेल प्रचलित मिलेंगे, जितने सभ्य कहे जाने वाले समाज मे नहीं है। और सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उनके खेल बिना कौडी खर्च किये, बहुत मामूली साधनो से, खेले जाते है। हस बोलकर, दौड़-धूपकर, वे प्रकृति

मे से प्राण-पोषक तत्व ले लेते है और फिर अपने जीवन-पथ पर आगे बढते है। उनको मूर्ख कौन कह सकता है ?

सहयोगिता

गांवो मे सामाजिक संगठन का आधार सहयोगिता है। वहाँ का प्रत्येक कुटुम्ब दूसरे कुटुम्ब को हरएक सामाजिक विषयो मे सहयोग देता रहता है। सहयोग के कुछ कार्य तो रूढ हो गये है और वे चक्र की तरह नियमित चलते है। जैसे —

(१) कन्या के विवाह मे निमन्त्रित गृहस्थ कन्या के पिता को कम से कम एक रुपया 'न्यौता' दे जाते है। रिश्तेदार लोग रुपया, आटा, घी और अचार आदि लेकर आते हैं। इन सबसे कन्या के पिता का बोझ हलका हो जाता है और कन्या का विवाह करके वह टूट नही सकता। इसका एक अर्थ यह भी है कि कन्या समाज की कन्या मानी जाती है और उसका विवाह समाज के सहयोग से होता है।

(२) जनेऊ मे भी 'न्यौता' जाता है। कम से कम एक गज कपड़े का एक टुकडा, उसमे कुछ आटा और कुछ पैसे बधे हुये होते है। समाज मे जिसकी मान्यता जितनी अधिक होती है, उसी के अनुसार उसे 'न्यौते' मिलते है। अतएव मान्यता बढ़ाने का प्रयत्न प्रत्येक गृहस्थ करता रहता है और उसकी प्राप्ति का रास्ता दूसरो को सहयोग देना होता है। 'न्यौतो' से 'जनेऊ' का बहुत-सा ख़र्च निकल आता है।

(३) जब कोई किसान कुवां खुदवाता है, तब भी उसका समाज उसका बहुत-सा ख़र्च अपने ऊपर ले लेता है। एक प्रकार से वह समाज का कुवां हो जाता है, केवल नाम खुदवाने वाले का होता है। जब कुवा पाना तक खुद जाता है और उसमे 'नेवार' पड़ती है, तब आसपास के किसानो को 'बुलौवा' जाता है। वे 'नेवार' मे पैसा डालने आते है।

'नेवार' गढ़ने वाले लोहार या बढ़ई कुंवे के अन्दर चादर फैलाकर खडे होते है, उसमे किसान के मित्र लोग पैसे या रुपये डालते है। कभी-कभी लोहार को उसकी उजरत से कही ज्यादा रुपये मिल जाते है। रुपयो की संख्या किसान की सामाजिक मान्यता पर निर्भर होती है। लोहार 'नेवार' की गढ़ाई न लेकर केवल ऊपर से डाले हुये धन पर सतोष करता है।

(४) किसान खेत की कटाई की मजूरी पैसो मे नही देता। वह काटने वालों को १६ बोझ पीछे एक बोझ काटे हुये नाज का देता है। कही-कही बीस बोझ पीछे एक बोझ देने की प्रथा भी है।

(५) नाई साल भर तक किसान की हजामत बिना पैसा लिये करता रहता है। किसान उसे साल मे एक बोझ कटे हुये अन्न का देता है।

(६) लोहार सालभर तक किसान का हल, खुरपा, फावडा और कुदाल वगैरह बनाता रहता है और पैसा नही लेता। चैत्र मे किसान उसे एक बोझ अन्न देता है।

(७) धोबी सालभर तक किसान के कपडे धोता है। बदले मे साल मे एक बोझ अन्न वह भी पाता है।

(८) कुम्हार सालभर तक मिट्टी के बरतन देता रहता है। किसान उसे साल मे एक बार एक बोझ अन्न देता है।

(९) शिक्षा के लिये पहले 'मूठी' की प्रथा थी। हर एक गृहिणी खाना बनाने से पहले एक मूठो आटा, चावल या दाल निकालकर एक घड़े मे रखती जाती थी। महीने मे किसी समय आकर पाठशाला के विद्यार्थी उसे माँग ले जाते थे, और उससे पाठशाला के विद्यार्थियो और अध्यापक का भी खर्च चल जाता था। समय के प्रभाव से यह अत्यन्त उपयोगी प्रथा अब बिलकुल ही बन्द होगई है।

इसी प्रकार कुछ और भी पेशेवर है, जिनका सम्बन्ध किसान से

होता है और वे अपने काम के बदले मे अन्न पाते है।

विचार किया जाय तो सच्चा सहयोग तो यही है। मानो नाई,लोहार, धोबी और कुम्हार को किसान आश्वासन देता है कि तुम्हार खाने के लिये अन्न मै पैदा करूँगा, तुम निश्चिन्त होकर अपना पेशा करो। और नाई, लोहार आदि भी साल मे किसानो से सैकडो मन गल्ला पा जाते है, इसपे उनको खाने के लिये अन्न उपजाने या खरीदने की आवश्यकता नही रहती। एक-एक पेशेवर सैकडो किसानो का काम करते रहते है।

अब पैसे ने बीच मे पडकर उनमे गडबडी मचा दी है और किसान को नाई आदि का सेवा के बदले मे वह चीज़ देनी पड रही है, जिसे वह खेत मे नही पैदा करता। जैसे-जैसे पैसे वाली सभ्यता बढती जा रही है, वैसे-वैसे गाव का सामाजिक सहयोग बिखरता जा रहा है।

गृह-प्रबन्ध और मितव्ययिता

गाव के लोग आदर्श मितव्ययी होते है। थोडी आमदनी मे भी वे ऐसा अच्छा गृह-प्रबन्ध करके जीवन बिताते है कि देखकर आश्चर्य होता है।

एक उदाहरण के साथ चलिये। मान लीजिये, एक किसान के पास कुल १० बीघे खेत है। जिसमे अच्छी फसल हुई तो साल मे अधिक से अधिक १०० मन नाज पैदा होगा। १०० मन नाज का दाम भी १००) मान लीजिये, अर्थात् महीने मे ८) से कुछ अधिक।

अब उसका खर्च जोडिये। उसके घर मे वह, उसकी स्त्री, मा-बाप, दो बच्चे, दो बैल, एक गाय या भैस इतने प्राणी है। इन सबको उसी आमदनी मे से वह खिलाता-पिलाता है, घर वालो को कपडे, जाडे के अलग, गरमी के अलग, देता है। साल भर मे कुछ जमीदार का देता है और कुछ ज़िलेदार को भी। पटवारी भी मुँह बाये रहता है,कुछ उसमे डालता है। पुलिस का सिपाही भी कुछ लेता ही है। साल मे वह

दो-तीन बार कथा सुनता है और कुछ पुरोहित को देना है । भूत-प्रेत का भी उसे विश्वास है, इससे ओझा-सोखा भी कुछ ले ही जाते हैं। होली-दिवाली और दशहरे में भी कुछ अधिक खर्च उसे करना पड़ता है। मेहमान भी आते-जाते रहते हैं। महाजन से ज़रूरत पर उधार लाता रहता है, उसे कुछ ब्याज देता है। दिल खोलकर लड़के-लड़की की शादी करता है, उसपे महाजन से कर्ज़ लेकर खर्च करता है। गाव में कथा बैठती है, आल्हा होता है, कठपुतली का नाच, नौटकी आदि खेल-तमाशे होते रहते है, सब मे चन्दा देना है। साधु-सन्त जो दरवाजे पर आ जाते है, उन्हे कुछ खाने को देता है। गाय-भैस का चरवाही, घर की मरम्मत की मजदूरी और खपडे और बास का दाम चुकाता है, और इतनी चिंताये लादे हुए वह खेत के मेड़ पर मस्त होकर गाता भी चलता है और जी खोलकर हस सकता है। इससे भी विचित्र बात यह है कि वह सत्तर-अस्सी वर्ष तक जी भी लेता है। क्या कोई डाक्टर, जिसे स्वस्थ रहने के तरीके सबसे अच्छे मालूम होते है, आठ रुपये मासिक पर सत्तर या अस्सी वर्ष तक जी लेगा इतनी छोटी आमदनी मे घर का ऐसा सुप्रबन्ध शिक्षित-समाज का क्या कोई व्यक्ति करके दिखा सकता है ? अगर नही तो गाव वालो को बेअक्ल, कैसे कहा जा सकता है ?

ग्राम-सुधार और बेसिक ट्रेनिंग स्कीम

कुछ समय से सूबे की सरकार ने गावो की हालत सुधारने की ओर पहले से कहीं अधिक ध्यान देना शुरू किया है। उसने 'रूरल डेवलपमेंट' नाम का एक नया महकमा कायम किया है और शिक्षा-विभाग की ओर से 'बेसिक ट्रेनिंग स्कीम' के अनुसार इलाहाबाद मे एक कालेज खोला गया है।

महकमे और स्कीम दोनो के सामने अब यह प्रश्न है कि व किस प्रकार गावों के लिये अधिक उपयोगी सिद्ध हो सकते है। और गाव के

सामने भी यह प्रश्न, यदि अभी तक नहीं आया है तो, आना चाहिये कि उक्त महकमे और स्कीम से उनको कैसे लाभ उठा लेना चाहिये। इस सम्बन्ध में गाँव की मेरी कुछ जानकारी, सभव है, दोनों ओर के लिये लाभदायक सिद्ध हो, इसमे मैं नीचे लिखी बातों की ओर उनका ध्यान आकर्षित करना हूं —

१—पहले यह स्वीकार कर लेना चाहिये कि गाँव की एक प्राचीन व्यवस्था है, जिसको लेकर वह अपने रूप मे सम्पूर्ण है।

इस आधार पर उसकी प्राचीन व्यवस्था की अच्छी जानकारी प्राप्त की जाय और जाच की जाय कि वह गाव के लिये वास्तव मे कहा तक लाभदायक है, और उसमे बाहर से कहाँ सुधार की जरूरत है। क्योंकि व्यवस्था की कोई नई स्कीम, जो उसकी मूल प्रकृति से मेल न खायगी, उसमे टिक न सकेगी। और यदि वह उसमे जबरदस्ती दाखिल की जायगी तो वही परिणाम होगा जो एक गली हुई मिट्टी की दीवार पर सीमेंट का पलस्तर करके उसे चिकनी और मज़बूत समझने का होता है। किसी दिन सीमेंट की पपड़ी असली दीवार का भी कुछ हिस्सा चिपकाये हुये गिर पड़ेगी और दीवार को और भी कमजोर बना देगी।

ऐसा देखा गया है कि गाव वालों को रहन-सहन को बिना समझे-बूझे जो सुधार उनमे डाले जाते हैं, उनको वे ग्रहण नहीं करते और थोड़े ही समय तक रखकर वमन कर देते हैं। जैसे, अकसर बीमारी के दिनों में गाँवों मे सरकारी स्वास्थ्य-विभाग की ओर से ऐसे परचे बाटे जाते है जिनमे यह हिदायत की गई होती है कि खाली पेट घर से न निकलो। यह हिदायत योरप के लिये है, जहाँ चाय पीकर ही लोग बिछौना छोड़ते हैं। हमारे गाँवों मे तो नब्बे फीसदी लोगों के पास सबेरे खाने को कुछ रहता ही नहीं, और गाँव वाले दोपहर से पहले कुछ खाते भी नहीं है। अतएव योरप के जीवन की हिदायत उनके जीवन के अनुकूल नहीं

पड सकती और इसी से वे उसकी परवा नही करते।

अथवा जैसे, गाव वालो पर, खासकर किसानो पर, यह दोषारोपण किया जाता है कि वे अपनी आमदनी का ज्यादा हिस्सा गहनो मे ख़र्च कर देते है। पर यह नही सोचा जाता कि गहने गाव की प्राचीन व्यवस्था के एक अंग है। गहने शरीर की शोभा बढाने ही के लिये नही पहने जाते, वह किसानो के बैंक का भी काम देते है। जो स्त्री विधवा होने पर दूसरा विवाह नही करती, वह अपने पिता, ससुर और पति के दिये हुए गहनो ही के सहारे अपना निर्वाह करती है। वही उसका 'फिक्स्ड डिपाजिट' है।

२—गाव की प्रकृति और सस्कृति को समझने के लिये उसका मौखिक साहित्य सबसे निकट का सहायक है। अतएव उसका सग्रह यथा-सम्भव शीघ्र कराके उसका गभीर अध्ययन और मनन किया जाना ज़रूरी है, और तब उसके सुधार की स्कीम बनाई जाय।

३—ग्राम-साहित्य के सग्रह के लिये हरएक ज़िले और तहसील मे ग्राम-साहित्य-समितियां खोली जाय। जिले के कलक्टर और तहसीलो के तहसीलदार उनके सभापति बनाये जायँ और वे अपने मातहत सरकारी नौकरो से गाव का साहित्य सग्रह कराये।

४—'रूरल डेवलपमेंट' का महकमा अपने आर्गनाइजरो और ग्राम-सेवको से प्रत्येक केन्द्र से सम्बन्धित गावो का कठस्थ साहित्य सग्रह करा ले। जिसमे बीमारियो के नुस्खे, जडी बूटियो के नाम और गुण, जातीय नाचो, विवाह आदि संस्कारो और त्योहारो के विवरण भी शामिल हो।

५—सूबे की सरकार अपने शिक्षा-विभाग के सेक्रेटरी या डायरेक्टर की प्रधानता मे कुछ सरकारी और गैर सरकारी विद्वानो की एक समिति बना दे, जो ज़िलो, तहसीलो और ग्राम-सुधार के केन्द्रो से आये हुये साहित्य का विश्लेषण करके उसे प्रकाशित करे और ग्राम-सुधार की एक

स्कीम तैयार करके सरकार और जनता दोनों के सामने रक्खे।

६—जातीय नृत्यों के फ़िल्म लेने के लिये और जातीय गीतों के रेकार्ड तैयार करने के लिये शिक्षा-विभाग के सेक्रेटरी या डायरेक्टर मशीनों की व्यवस्था करें।

७—शिक्षा-विभाग ग्राम-साहित्य के पठन-पाठन की व्यवस्था अपने स्कूलों और कालेजों में करें।

८—गाँव में शिक्षा-प्रचार के लिये कथा की पद्धति जारी की जाय। आँख की अपेक्षा कान को शिक्षा का माध्यम बनाने में अधिक महत्व दिया जाय।

९—गाँव के पुस्तकालयों में उद्योग-धंधों की ज्यादा पुस्तकें चुन-चुनकर रक्खी जायँ।

१०—ग्राम सुधार और बेसिक ट्रेनिंग स्कीम का प्रयत्न सब से पहले गाँव की गरीबी दूर करने के लिये होना चाहिये। गरीबी दूर हो जायगी तो गाँव के अंतस्तल में व्याप्त सद्गुण स्वयं विकसित होने लगेंगे और उसके स्वभाव का बाहरी मैल छूट जायगा। जैसे शरीर के भीतर का स्वास्थ्य सुधरने लगता है तो चेहरे की झुर्रियाँ आप से आप गायब हो जाती हैं।

———

ग्राम-गीत

सोहर

सोहर, जिसे कहीं-कहीं सोहिलो भी कहते हैं, उस गीत का नाम है, जो पुत्र-जन्म के अवसर पर गाया जाता है। गीतों में इसका यह नाम गाया भी जाता है। जैसे—

बाजै लागी अनंद बधइया गावइं सखि सोहर।

पर इसका मुख्य नाम मङ्गल-गीत है। प्रत्येक सोहर के अन्त में इसका यही नाम आता है। जैसे—

जो यह 'मङ्गल' गावइ गाइ सुनावइ।
सो वैकुण्ठे जाइ सुनइया फल पावइ॥

तुलसीदास ने रामचरित-मानस में जन्म और विवाह के अवसर पर स्त्रियों से मङ्गल या मङ्गल-गीत ही गवाया है। जैसे—

गावहिं मङ्गल मंजुल बानी। सुनि कलरव कलकंठ लजानी॥

विवाह में जो गीत गाये जाते हैं, यद्यपि वे सोहर ही छंद में होते हैं, पर उनकी लय भिन्न होती है। जन्म और विवाह दोनों प्रसंग मंगल-सूचक हैं। इसलिये उन अवसरों के गीतों का नाम भी मंगल-गीत रक्खा गया है। तुलसीदास ने 'रामलला नहछू' इसी छंद में लिखा है।

सोहर प्रायः सब स्त्रियों ही के रचे हुए हैं। स्त्रियाँ पिङ्गल के पचड़े में नहीं पड़ी हैं। इसमें गीतों में न तुक मिले हैं और न पदों की मात्रायें ही समान हैं। स्त्रियां गाते समय छोटे-बड़े पदों को खींच-तानकर बरा-

भी मिलाया है और प्रत्येक पद की मात्रायें भी बराबर रक्खी है। उन पिङ्गल के अनुसार शुद्ध करके सोहर छंद लिखा है। उदाहरण के लि यहा 'रामलला नहछू' के कुछ पद उद्धृत किये जाते है—

बनि बनि आवति नारि जानि गृह मायन हो।
बिहंसत आउ लोहारिनि हाथ बरायन हो॥
अहिरिनि हाथ दहेंडि सगुन लेइ आवइ हो।
उनरत जोबन देखि नृपति मन भावइ हो॥
रूप सलोनि तंबोलिनि बीरा हाथहि हो।
जाकी ओर बिलोकहि मन उन साथहि हो॥
दरजिनि गोरे गात लिहे कर जोरा हो।
केसरि परम लगाइ सुगधन बोरा हो॥
मोचिनि बदन सकोचिनि हीरा माँगन हो।
पनहिं लिहे कर सोभित सुन्दर आँगन हो॥
बतिया कै सुघर मलिनिया सुन्दर गातहि हो।
कनक रतन मनि मौर लिहे मुसुकातहि हो॥
कटि कै छीन बरिनिया छाता पानिहि हो।
चन्द्रबदनि मृगलोचनि सब रसखानिहि हो॥
नैन बिसाल नउनियाँ भौ चमकावइ हो।
देइ गारी रनिवासहिं प्रमुदित गावइ हो॥

हमारे पास सोहर गीतो का बडा सग्रह है। उसमे बहुत से ग के अन्त मे तुलसीदास का नाम आया हुआ है। पर हमे विश्वास कि वे गीत तुलसीदास ही के रचे हुए है। यदि सोहर छन्द मे उ 'रामलला नहछू' मौजूद न होता, और उसे देखकर हम यह न ज होते कि तुलसीदास किस प्रकार का सोहर लिखते थे, तो शायद हम

गीतों को तुलसीदास का रचा हुआ मान भी लेते। पर 'रामलला नहछू' की उपस्थिति में वे बेतुके, और छोटे-बड़े पदवाले गीत तुलसीदास के रचे हुए नहीं माने जा सकते। वे गीत स्त्रियों ही के रचे हुए हैं, और केवल अधिक प्रचार के उद्देश्य से उनमें तुलसीदास का नाम जोड़ दिया गया है। हिन्दी में तुलसीदास के सिवा और किसी कवि की रचना सोहर छन्द में हमारे देखने में नहीं आई। सुना है, सूरदास ने भी 'सोहिलो' लिखा था, पर वह हमारे देखने में नहीं आया। तुलसीदास ने 'रामलला नहछू' सोहर छन्द में लिख तो दिया, पर 'नहछू' होते समय तुलसीदास का सोहर गाया नहीं जाता। स्त्रियों ने पिंगल और अलंकार से प्राणित तुलसीदास के सोहर को पुस्तक ही में पड़ा रहने दिया है।

जब किसी हिन्दू के यहाँ पुत्र पैदा होता है तब टोले-महल्ले की स्त्रियाँ उसके यहाँ एकत्र होकर सोहर गाती हैं। पुत्र के जन्म-दिन से लेकर कहीं-कहीं छः दिनों तक और कहीं-कहीं बारह दिनों तक सोहर गाया जाता है। कन्या पैदा होने पर सोहर प्रायः नहीं गाया जाता। यद्यपि कन्या को लोग लक्ष्मी-स्वरूप मानते हैं, पर उसके विवाह के इतने झंझट लोगों ने बढ़ा लिये हैं कि अब कोई कन्या के जन्म से प्रसन्न नहीं होता और न हर्ष-सूचक उत्सव ही मनाता है।

सोहर में शृङ्गार और हास्य-रस तो प्रधान ही है, पर करुण-रस की मात्रा भी कम नहीं है। ऐसा जान पड़ता है कि करुण-रस स्त्रियों का बहुत प्रिय है। सोहर ऐसे जन्मोत्सव-सम्बन्धी गीत में भी उन्होंने कहीं-कहीं ऐसा करुण-रस भर दिया है कि सुनते ही हृदय में करुणा उमड़ आती है और आँखों में आँसू छलक पड़ते हैं।

युक्तप्रान्त के पूर्वी ज़िलों में और बिहार में जो सोहर गाये जाते हैं, उनमें बहुत ही कम अन्तर मिलता है। युक्तप्रान्त के पश्चिमी ज़िलों के सोहर में हमें वह रस नहीं मिला, जो पूर्वी ज़िलों के सोहर में है।

यहाँ हम कुछ चुने हुए सोहर अर्थ-सहित देते हैं—

[१]

गगा जमुनवाँ के बिचवाँ तेवइया एक तपु करइ हो।
गंगा ! अपनी लहर हमैं देतिउ मैं माँझाधार डूबित हो ॥ १ ॥
की तोहिं सासु-ससुर दुख कि नैहर दूर बसै।
तेवई ! की तोरे हरि परदेस कवन दुख डूबउ हो ॥ २ ॥
गगा ! ना मोरे सासु-ससुर दुख नाहीं नैहर दूरि बसै।
गगा ! ना मोरे हरि परदेस कोखि दुख डूबउ हो ॥ ३ ॥
जाहु तेवइया घर अपने हम न लहर देबइ हो।
तेवई ! आजु के नवएँ महिनवाँ होरिल तोरे होइहै हो ॥ ४ ॥
गगा ! गहबरि पिअरी चढ़उबै होरिल जब होइहै हो।
गंगा ! देहु भगीरथ पूत जगत जस गावइ हो ॥ ५ ॥

गगा-यमुना के बीच एक स्त्री तप कर रही है वह कहती है कि हे गगा ! तुम मुझे अपनी लहर देती तो मँझधार मे डूब जाती ॥१॥

गगा ने कहा—हे स्त्री ! क्या तुझे सास-ससुर का दु ख है ? या नैहर दूर है ? या तेरा स्वामी परदेश मे है ? तू किस दु.ख से डूबना चाहती है ? ॥२॥

स्त्री ने कहा—न मुझे सास-ससुर का दु.ख है, न नैहर ही दूर है और न मेरे स्वामी ही परदेश मे है। मैं निस्संतान होने के दु ख से डूबना चाहती हूँ ॥३॥

गगा ने कहा—हे स्त्री ! तू अपने घर जा। मैं तुझे लहर न दूँगी। आज के नवे महीने तेरे पुत्र होगा ॥ ४ ॥

स्त्री ने कहा—हे गंगा ! मेरे पुत्र होगा तो मै तुम्हे खूब चटक रग की पीली साड़ी चढ़ाऊँगी। हे गंगा ! तुम मुझे भगीरथ जैसा पुत्र देना, ससार जिसका यश गाये ॥ ५ ॥

सन्तान की लालसा स्त्रियों में बड़ी प्रबल होती है। इस गीत में एक स्त्री सतान के लिये गगाजी से प्रार्थना करती है। गगाजी ने उस पर प्रसन्न होकर उसे वर दिया। स्त्री कृतज्ञता-प्रकाश करती हुई गगाजी को पिअरी (पीला वस्त्र) चढ़ाने की मन्नत मानती है। सतान पाने का जब उसे वर मिल गया, तब वह यह चाहती है कि उसे भगीरथ जैसा प्रतापी पुत्र मिले, जिसका यश सारा ससार गाये। कैसी मनोहर अभिलाषा है! हिन्दू-स्त्री का लक्ष्य कितना ऊँचा है! स्त्रियों में माता होने की इच्छा तो स्वाभाविक होती है, पर वह कैसे पुत्र की माता होना चाहती है, यह बात महत्त्व की है। पुत्र का जन्म होने से पहले ही उस का आदर्श स्थिर कर रखना यह हिन्दुओं के उत्तम गृहस्थ-जीवन की एक सुन्दर छटा है। जब भगीरथ जैसा पुत्र उत्पन्न करने वाली माताएँ इस देश में थीं, तभी भारत सुखी और स्वतन्त्र था।

[२]

चलहु न सखिया महेलरि जमुनहि जाइय हो।
जमुना कै निर्मल नीर कलस भरि लाइय हो॥ १॥
केऊ सखी जल भरै केऊ मुख धोवइँ हो।
केऊ सखी ठाढ़ी नहाइँ त्रिया एक रोवइ हो॥ २॥
की तुहे सासु ससुर दुख की नैहर दूरि बसै।
बहिनी! की तुमरा कन्त बिदेस कवन दुख रोवउ हो॥ ३॥
ना मोहे सासु-ससुर दुख ना नैहर दूरि बसै।
बहिनी! ना मोरा पिया परदेस कोखि दुख रोवउँ हो॥ ४॥

हे सखियो! चलो जमनाजी को चलें। जमनाजी का पानी बड़ा स्वच्छ है। चलो, घड़ा भर लाय॥ १॥

कोई सखी जल भर रही है, कोई मुँह धो रही है और कोई खड़ी नहा रही है। एक सखी रो रही है॥ २॥

एक सखी ने उससे पूछा—हे सखी ! क्या तुम्हे सास-ससुर का दु ख है ? या तुम्हारा नेहर दर है ? या तुम्हारे स्वामी परदेश मे है ? तुम किस दु ख से रो रही हो ? ॥ ३ ॥

उस स्त्री ने कहा—हे बहन ! न तो मुझे सास-ससुर का दु:ख है, न नैहर ही दूर है और न मेरे स्वामी ही परदेश मे है । मै तो कोख के दु ख से रो रही हू, अर्थात् मेरे सन्तान नही है ॥ ४ ॥

सतान की लालसा स्त्रियो मे इतनी प्रबल होती है कि जिस स्त्री के बालक नही होते, उसका मन किसी भी मनोरजन मे नही लगता ।

[३]

खिडकी हीं बैठली रानी त राजा पुकारइँ हो ।
रानी ! एक सतति बिना कुल हीन, हम होबै जोगी हो ॥ १ ॥
जो तुहँ ए राजा जोगी होब हमहुँ जोगिन होबै हो ।
राजा नगर पइठि भीख मँगबै दुनऊँ जने खाबइ हो ॥ २ ॥
एकल पेड कदम कइ मोतियन कर हइ हो ।
अब तेही तर ठाढ़ भगवान त बालक उरेहइँ हो ॥ ३ ॥
राम ही राम पुकारीला राम नाही बोलइँ हो ।
राम हमरी कवन तकसिरिया त मुखवउ न बोलउ हो ॥ ४ ॥
कोऊ के दिये राम दुइ चार कोऊ के दस पाँच हो ।
राम हमरी नगरिया काहे भूलल त हमरी कवन गति ॥ ५ ॥
रजवा तो हउएँ बहेलिया त रनियाँ बहेलिन हो ।
राजा केतनेक जियरा बझवलै संतति नाहीं पइहइँ हो ॥ ६ ॥
सास ससुर नाही मनलू त ननदा तुकरलेउ हो ।
रानी जेठ क परछाहीं न बरवलू त भुललै नरायन ॥ ७ ॥
सास ससुर हम मानब ननदा दुलारब हो ।
राम जेठ क परछहियाँ बरइबै समुझै परमसर ॥ ८ ॥

मोरे पिछवरवाँ बढ़इया बेगि ही चलि आवउ हो।
बढ़ई गढ़ि देहू काठे क बलकवा मै जियरा बुझावउँ—
मन समुझावउँ हो ॥ ६ ॥
काठे क बलक गढ़ि दिहलै अँगने धरी दिहलइँ हो।
बाबुल मोरे अँगने रोइ न सुनावउ मैं बभिनि कहावउँ हो॥१०॥
दैव गढ़ल जो मैं होतेउँ तो रोइ सुनउतेउँ हो।
रानी बढ़ई क गढ़ल होरिलवा रोवन नाही जानइ हो ॥११॥

रानी खिड़की मे बैठी हुई थी। राजा ने पुकारकर कहा—हे रानी। हम सतति बिना कुलहीन हैं। मैं जोगी होना चाहता हू ॥ १ ॥

रानी ने कहा—हे राजा ! तुम जोगी होगे तो मै जोगिन होऊँगी। हम दोनो गाँव से भीख माँगकर लायेंगे और खायेगे ॥ २ ॥

कदम्ब का एक पेड है। जिसमे मोती फूल रहे हैं। भगवान् उसके नीचे खडे होकर बालक रच रहे हैं ॥ ३ ॥

राजा ने राम, राम कहकर पुकारा। पर राम नही बोले। राजा ने कहा—हे राम ! मेरा क्या अपराध है, जो तुम मुँह से नही बोलते ? ॥४॥

हे राम ! तुमने किसी को तो दो-दो चार-चार बालक दिये। किसी को दस-पांच। भला, तुम मेरे गाँव को कैसे भूल गये ? मेरी क्या दशा होगी ? ॥५॥

राम ने कहा—राजा ! तू तो पूर्व-जन्म मे बधिक था। तेरी रानी बधिकिन थी। तू ने कितने ही जीवो को फँसाया था। तुझे संतति नही मिलेगी ? ॥६॥

हे रानी ! तू ने सास-ससुर की इज्ज़त नही की। ननद को तू ने 'तू' करके पुकारा। जेठ की परछाईं से परहेज नहीं रक्खा। इसी से भगवान भी तुझको भूल गये। इसी से तुझको भी संतान नही मिलेगी ॥७॥

रानी ने कहा—हे राम ! मै अब सास-ससुर को मानूँगी। ननद

को दुलारूँगी। जेठ की परछाईं भी बचाऊँगी। तुम मेरे हृदय की व्यथा समझो ॥८॥

रानी कहती है—मेरे पिछवाड़े बढ़ई रहता है। हे बढ़ई! जल्दी आओ। मेरे लिये काठ का एक लड़का गढ़ दो। मैं उससे जी बहलाऊँगी ॥९॥

बढ़ई ने काठ का बालक गढ़ दिया और आँगन में लाकर रख दिया। रानी ने कहा—हे बेटा! मेरे आँगन में रोकर मुझे सुनाओ। मैं बाँझ कहलाती हूँ, मेरा यह कलंक तो मिटे ॥१०॥

काठ के बालक ने कहा—मैं यदि भगवान् का बनाया होता तो रोकर सुनाता भी। हे रानी! बढ़ई का गढ़ा हुआ बालक रोना नहीं जानता ॥११॥

इस गीत में पुत्रहीन माता-पिता का कैसा करुणाजनक मज़ाक है! सारा गीत एक सुन्दर नाटक के प्लाट की तरह मनोहर है। पुत्र के लिये राजा-रानी का तप करने जाना, बन में भगवान् से मिलना, प्रश्नोत्तर करना, पुत्रहीन, होने का कारण जानना, भविष्य के लिये सत्कर्म की प्रतिज्ञा करना, घर लौट आना, घर में मन बहलाने के लिये काठ का लड़का बनवाना और उस निर्जीव बालक से भी सन्तोष न मिलना, एक से एक बढ़कर रोचक सीन इस गीतरूपी नाटक में है। पुत्रहीन दम्पति की बड़ी ही विचित्र अन्तर्पीड़ा इस गीत में छिपी हुई है।

[४]

सोरहो सिंगार सीता कइलीं अटरिया चढ़ि गाइलिनि।
रघुनन्दन क डासल सेज सिरहाने ठाढ़ी भइलिनि ॥ १ ॥
पलक उघारि राम चितवइँ अभरन देखि भरमइँ।
सीता कवन जरूर तोहरे लागल एतनी राति अइलिउ ॥ २ ॥

काहे लागी कइलू सिंगार काहे रे लागी अभरन।
सीता काहे लागी चढलिउ अटरिया देखत डर लागइ ॥ ३ ॥
आप लागी कइली सिंगार आप लागल अभरन।
राजा रौरे तीन लोक क ठाकुर भेट करै आइउँ ॥ ४ ॥
तू हू तउ तीन लोक के ठाकुर तोहै देख जग डरै।
राजा तिरिया अलप सुकुमार सेजरिया देखि भरमइ ॥ ५ ॥
नइहरै न बाटै बीरन भइया ससुरे न देवर।
राजा मोरे गोदियाँ न जन्मल बलकवा अहक कैसे पुजिहइँ ॥ ६ ॥
लाल पियर न पहिरली चउक ना बैठलिउँ।
सीता के दुरला नयनवन आँसु पटुका राम पोछइँ ॥ ७ ॥
लाल पियर पहिरबइ चउकन बइठबइ।
रानी तोहइँ रखबइ पगडिया के पेच नयनवाँ क भीतर ॥ ८ ॥

सीता सोलह शृङ्गार करके अटा पर चढ गई। वहा रामचन्द्र जी की सज बिछी थी। सीता सिरहाने खडी हुई ॥१॥

राम ने पलक उठाकर देखा और गहन देखकर चकित हुए। उन्होने पूछा— हे सीता! ऐसी क्या जरूरत पडी जो तुम इतनी रात मे यहा आई हो? ॥२॥

किसलिये तुम ने शृङ्गार किया और किसलिये गहने पहने है? हे सीता! तुम किस लिये अटा पर आई हो? देख कर मुझे आशका होती है ॥ ३ ॥

सीता ने कहा— हे नाथ! आप के लिये मैने शृङ्गार किया है और आपके लिये ही गहने पहने है। आप तीनो लोको के स्वामी है। मै आप से भेंट करने आई हू ॥४॥

आप तो तीन लोक के ठाकुर हो। आप को देखकर तो सारा ससार

डरता है। मैं तो एक नादान, अल्पवयस्का, सुकुमार स्त्री हूँ। सेज देख कर मैं चकित होती हूँ ॥ ५ ॥

न तो मेरे नैहर मे कोई भाई है न ससुराल मे देवर। हे राजा! मेरी गोद मे कोई बालक भी नही। मेरी लालसा कैसे पूरी हो ॥ ६ ॥

न मैंने कभी लाल पीली साडी पहनी, न वेदी पर बैठी। यह कहते-कहते सीता के नयनो से आँसू बहने लगे। राम दुपट्टे से उसे पोछने लगे ॥ ७ ॥

राम ने कहा— हे रानी! मै तुमको लाल पीला वस्त्र पहनाऊँगा। वेदी पर बैठाऊँगा। सीता! मै तुमको अपनी पगडी मे सरपेच की भाति शीर्षस्थान दूगा और आँखो के भीतर रक्खूँगा ॥ ८ ॥

विषय-सुख की अपेक्षा स्त्रियो मे माता होने की लालसा अधिक बलवती होती है। पूर्वकाल मे, जब के बने ये गीत है, स्त्री-पुरुष विषय-वासना की तृप्ति के लिये विवाह नही करते थे, बल्कि सतान और समाज की सेवा के लिये वे धर्म के अटूट बधन मे अपने को बाँधते थे। इसी से इस गीत के राम और सीता अलग अलग सोते थे यकायक शयनागार मे माता का आना राम का आनन्द-वर्द्धक नही, बल्कि आश्चर्य और भय-कारक जान पडा था।

आजकल इसके बिल्कुल विपरीत है। क्योकि अब स्त्री-पुरुष दोनो आर्यों के प्राचीन आदर्श से अलग हो गये है। अब तो स्त्री का पुरुष से अलग रहना ही आश्चर्य और भय की बात समझी जाती है।

[५]

सासू मोरी कहेलि बँभिनियाँ ननद ब्रजबासिनि हो।
रामा जिनकी मै बारी रे बियाही उइ घर से निकारेनि हो ॥ १ ॥
घर से निकरि बँभिनियाँ जङ्गल बिच ठाढी हो।
रामा बन से निकरी बघिनियाँ तो दुख सुख पूँछइ हो ॥ २ ॥

तिरिया ! कौनी विपति की मारी जङ्गल बिच ठाढी हो ।
सासु मोरी कहेली बॅभिनियॉ ननद ब्रजबासिनि हो ॥ ३ ॥
बाघिन ! जिनकी मैं बारी बियाही उइ घर से निकारेनि हो ।
बाघिन ! हमका जो तुम खाइ लेतिउ विपतिया से छूटित हो ॥ ४ ॥
जहवॉ से तुम आइउ लउटि उहॉ जाओ तुमहिं नाही खइबइ हो ।
बॉभिनि ! तुमका जो हम खाइ लेबइ हमहूँ बॉभिन होबइ हो ॥ ५ ॥
उहॉ से चलेलि बॅभिनियॉ बिंबउरी पासे ठाढ़ी हो ।
रामा बिंबउरि से निकरेलि नगिनियॉ तो दुखु सुखु पूँछइ हो ॥ ६ ॥
तिरिया ! कौने विपति की मारी बिंबउरी पासे ठाढी हो ।
सासु मोरी कहेलि बॅभिनियॉ ननद ब्रजवासिनि हो ॥ ७ ॥
नागिन ! जिनकी मैं बारी रे बियाही उइ घर से निकारेनि हो ।
नागिनि ! हम का जो तुम डसिलेतिउ विपति से हम छूटित हो॥ ८ ॥
जहवॉ से तुम अइउ लउटि तहॉ जावो तुमहिं नाही डसिबइ हो ।
बॉभिनि ! तुमका जो हम डसि लेबइ हमहूँ बॉभिनि होबइ हो ॥९॥
उहवॉ से चलली बॅभिनिया मइया द्वारे ठाढ़ी हो ।
भितरा से निकरी मयरिया तो दुखु सुखु पूँछइ हो ॥१०॥
बिटिया कउनि विपति तुमरे ऊपर उहॉ से चली आइउ हो ।
सासु मोरी कहेलि बॅभिनियॉ ननद ब्रजबासिनि हो ॥११॥
मइया ! जिनकी मैं बारि बियाही उइ घर से निकारेनि हो ।
मइया ! हमका जो तुम राखि लेतिउ विपति से हम छूटित हो ॥१२॥
जहवॉ से तुम आइउ लउटि उहॉ जाओ तुमहिं नाही रखिबइ हो ।
बिटिया तुमका जो हम राखि लेबइ बहू बॉभिनि होइहइं हो ॥१३॥
उहवॉ से चलेली बॅभिनियॉ जॅगल बिच आई हो ।
धरती ! तुमही सरन अब देहु बॅभिनि नाम छूटइ हो ॥१४॥

जहवाँ से तुम आइउ लउटि उहाँ जाओ तुमहिं हम न राखब हो।
बाँझिनि ! तोहँका जो हम राखि लेई हमहुँ होब ऊसर हो ॥ १५ ॥

मेरी सास मुझे बाझ कहती है और ननद कहती है कि तू ब्रजबासिन है। हे राम ! बालावस्था मे जिनसे मेरा विवाह हुआ था, उन्होने भी मुझे घर से निकाल दिया ॥ १ ॥

बाँझ स्त्री घर से निकलकर जङ्गल के बीच मे खड़ी है। जङ्गल मे से बाघिनी निकली। वह बाँझ से उसका सुख-दुख पूछने लगी ॥ २ ॥

हे स्त्री ! तुझ पर ऐसी क्या विपत्ति पड़ी है जो तू इस भयानक जगल मे अकेली खडी है ? स्त्री ने कहा—हे बाघिनी ! मेरी सास मुझे बाँझ कहती है, और ननद ब्रजबासिन ॥ ३ ॥

जिनकी मै विवाहिता हू, उन्होने बाझ कहकर मुझे घर से निकाल दिया है। हे बाघिनी ! यदि तुम मुझे खा लेती तो मै इस विपत्ति से छूट जाती ॥ ४ ॥

बाघिनी ने कहा—तुम जहा से आई हो, वहीं लौट जाओ। मैं तुम्हे न खाउँगी। यदि मैं तुम को खा लूँ तो मै भी बाँझ हो जाउँगी ॥ ५ ॥

बाँझ वहाँ से चलकर साँप की बाँबी के पास पहुची। बाँबी मे से नागिन निकली। उसने बाँझ का सुख दुख पूछा ॥ ६ ॥

हे स्त्री ! किस विपत्ति के कारण तुम बाँबी के पास आई हो ? स्त्री ने कहा—मेरी सास मुझे बाँझ कहती है और ननद कहती है कि तू ब्रजबासिन है ॥७॥

जिनके साथ मेरा विवाह हुआ है, उन्होंने बाँझ समझकर मुझे घर से निकाल दिया है। हे नागिन ! यदि तुम मुझे डस लेती तो मैं विपत्ति से छूट जाती ॥८॥

नागिन ने कहा—जहाँ से तुम आई हो, वहीं लौट जाओ। मैं तुम्हें डस लूँगी तो मैं भी बोझ हो जाऊँगी ॥९॥

बोझ वहाँ से चलकर अपनी माँ के द्वार पर आकर खड़ी हुई। माँ घर में से बाहर निकली और उसने बेटी का सुख-दुख पूछा ॥१०॥

हे बेटी! तुझ पर ऐसी क्या विपत्ति पड़ी जो तुम वहाँ से चली आई? बेटी ने कहा—हे माँ! सास मुझे बोझ कहती है। ननद ब्रजबासिन कहती है ॥११॥

हे माँ! जिनसे मेरा विवाह हुआ था उन्होंने मुझे बोझ कहकर घर से निकाल दिया। हे माँ! यदि तुम मुझे अपने घर में रख लेती तो मैं विपत्ति से छुटकारा पा जाती ॥१२॥

माँ ने कहा—जहाँ से तुम आई हो वहीं लौट जाओ। मैं तुम्हें अपने यहाँ नहीं रहने दूँगी, यदि मैं तुमको रख लूँ तो मेरी बहू बोझ हो जायगी ॥१३॥

बोझ वहाँ से चल कर जंगल में आई और धरती से बोली—हे धरती माता! तुम्हीं अब मुझे शरण दो ॥१४॥

धरती ने कहा—जहाँ से तुम आई हो, वहीं लौट जाओ। हे बोझ! यदि मैं तुमको रख लूँगी तो मैं भी ऊसर हो जाऊँगी ॥१५॥

हा! हिन्दू-समाज में स्त्री का बोझ होना कितने परिताप का विषय है! बाँझ से बाघिन और नागिन तक घृणा करती है। यहाँ तक कि असली माता और सबको आश्रयदाता पृथ्वी भी बोझ को स्थान नहीं देती। हिन्दू-समाज की रचना ही इस प्रकार की हुई है कि उसमें बाँझ के लिये आदर का स्थान नहीं है। इससे प्रत्येक स्त्री संतानवती होने ही में अपना गौरव और कल्याण समझती है।

[६]

सोने के खडउवाँ राजा दसरथ बेइली तर ठाढ भये।
बेइली ! पतवा कंचन अस तोर तो फल कैसे निरफल हो ॥१॥
भल बउरानेउ राजा दसरथ किन बउरावा हो।
राजा ! तोहरे घर रनिया कौसिल्या उनही से पूछउ हो ॥२॥
सोने के खडउवाँ राजा दसरथ बेदिया पर ठाढ भये।
मोरी रानी काहे तोहरा बदन मलीन कवल नाही हुलसइ हो ॥३॥
भल बउरानें राजा दसरथ किन बउरावा हो।
राजा बिनु रे सन्तति कुल हीन कवल कैसे हुलसइ हो ॥४॥
सोनवा तो हमरे गिनती नाही चदियों के डर लागल रे।
मोरी रानी ! बरहा भवन कै अजोध्या दुनो जने भेलसव हो ॥५॥
सोनवाँ तो मोरे लेखे रागी भा चदिया तो माटी भा है रे।
राजा ! बरहा भवन कै अजोध्या तो मोरे लेखे जरिगै है हो ॥६॥
तू राजा होवउ तपसी तो हम धना तपसिन हो।
मोरे राजा ! बिन्दरावन कै कुटियवा दनो जने तप करबइ हो ॥७॥
बन से निकरे एक जोगिया तो राजा से पूछइ रे।
राजा कवन तोहरे जियरा सकट तो मधुवन तप करउ हो ॥८॥
का रे कहउ मोरे जोगिया तो का तुम पूछब रे।
जोगिया बिन रे सन्तति कुलहीन तो मधुवन तप करउँ हो ॥९॥
झोलिया से काढिनि भभुतिया तो राजा का दीहिनि रे।
राजा आठ रे महीना नौ लागत राम जन्म लेइहइ हो,
अजोध्या राजा खेइहइ हो ॥१०॥
आठ महीना नौ लगतै श्रीरामजी जन्म लीन्हेउ हो।
एहो बाजै लागी आनद बधैया उठन लागे सोहर हो ॥११॥

सभवै बइठे है राजा दसरथ सुनहु कौसिल्या रानी हो।
रानी उहइ बेइलिया कटाइबइत त जिन मोका बोली बोला हो॥१२॥
मचियै बइठी कौसिल्या रानी सुनो राजा दसरथ हो।
मोरेराजा 'दुधवन बेइलीसिंचइबइ त जिन मोकाबुद्धि दियेहो॥१३॥

सोने के खडाऊं पर चढे हुए राजा दशरथ लता के नीचे खडे हुए। राजा ने पूछा—तुम्हारा पत्ता तो सोने जैसा है, पर तुम मे फल क्यो नही हैं ? ॥१॥

लता ने कहा—राजा दशरथ ! तुम्हारी मति मारी गई है क्या ? तुम्हारे घर मे कौशल्या रानी है, उनसे क्यो नही पूछते ? ॥२॥

सोने के खडाऊँ पर चढे हुए राजा दशरथ वेदी पर आकर खडे हुए। उन्होने रानी से पूछा—रानी ! तुम्हारा मुँह उदास क्यों है ? हृदय-कमल विकसित क्यो नही है ? ॥३॥

रानी ने कहा—राजा ! आपकी मति किसने हर ली है ? बिना संतान के हृदय-कमल कैसे विकसित हो सकता है ? ॥४॥

राजा ने कहा मेरी प्यारी रानी ! मेरे घर मे सोने की गिनती नही। चांदी के ढेर लगे हुए है। अयोध्या मे हमारे बारह महल हैं। हम दोनो सुख भोगेगे ॥५॥

रानी ने कहा—सोना मेरे लिये राख और चाँदी मिट्टी है। सतान बिना मेरे लिये बारह महलो की अयोध्या जल गई है ॥६॥

हे राजा ! तुम तपस्वी हो और मै तपस्विनी। दोनो चलकर वृन्दा-बन मे तप करें ॥७॥

दोनो तप करने लगे। बन मे एक योगी निकले। उन्होने पूछा—हे राजा ! तुम्हारे प्राण पर क्या संकट पडा है जो तुम तप कर रहे हो ? ॥८॥

राजा ने कहा—हे योगी ! मैं तुमको क्या बताऊँ ? बिना सतान के हम कुलहीन हैं। इससे तप कर रहे है ॥९॥

योगी ने अपनी झोली मे से विभूति निकाल कर राजा को दी और कहा—हे राजा ! नवाँ महीना लगते ही तुम्हारे घर मे राम जन्म लेंगे और अयोध्या का राज खेयेंगे ॥१०॥

आठवे के बाद नवाँ महीना लगते ही राम ने जन्म लिया। आनद बधाई बजने लगी और सोहर गाया जाने लगा ॥११॥

राजा को लता का ताना भूला नही था। सभा मे बैठे हुए उन्होने रानी कौशल्या से कहा—हे रानी ! मै उस लता को कटा डालूँगा, जिसने मुझे ताना मारा था ॥१२॥

मचिया पर बैठी हुई रानी कौशल्या ने कहा—हे राजा ! सुनो, उस लता को दूधसे सिँचाओ जिसने मुझे बुद्धि दी है। अर्थात् निस्सतान होने की याद दिलाकर मुझे सतान-प्राप्ति के लिये उत्साहित किया है ॥१३॥

सतान हीन होना बडी लज्जा की बात है। निरसतान व्यक्ति का मज़ाक एक लता भी उडा सकती है। इस गीत की अतिम पक्तियो से पुरुष और स्त्री के स्वभाव का भी पता चलता है पुरुष मे बदला लेने की प्रवृत्ति बहुत होती है। राजा दशरथ को लता का ताना भूला नही था, और वे उसे कटाने जा रहे थे। पर स्त्री का हृदय क्षमाशील होता है। कौशल्या ने लता के ताने को और ही रूप दे दिया। उन्होने उसे क्षमा ही नही किया बल्कि उसे दूध से सिँचाने की भी इच्छा प्रकट की। पुरुष कठोर गुणो का समूह और स्त्रियाँ कोमल गुणो की।

[७]

भोर भये भिनुसार चिरइया एक बोलइ।
राजा झपटि के खोलइँ केवरिया हेलिन डीठ परिगै।
परि गै हेलिनिया क डीठ राजै के मुख ऊपर ॥ १ ॥
हेलिन बिनवै हेलवा सँग अपने पुरुख सँग।
हेलवा ज देखेउ निरबसी गुसइयाँ कैसे पुरवै ॥ २ ॥

चुप रहु हेलिनी छिनारि तै जतिया का ' पातरि।
तीन भुअन कर राजा कह्यो निरवसी ॥ ३ ॥
चुप रहु हेलवा दहिजरा तै जतिया क पातर।
हेलवा तीनि उन्हा करि रानी तीनौ जनि बाँझिनि ॥ ४ ॥
यतना सुन्यौ राजा दसरथ जियरा दुखित भये।
राजा गोडवा मुडवा तानेनि दुपट्टा सुते धौराहर ॥ ५ ॥
घरिय घरिय दिन दोपहर पहर नहि बीते।
मोरा सिझलै जेवनवा जुडाय रजै नहि आये ॥ ६ ॥
अरे रे राजा जी के चेरिया त हमरी लउंडिया।
चेरिया सिझलै जेवनवा जुडाय रजै नहिं आये ॥ ७ ॥
चेरिया ज चढि गइ अटरिया रजै क जगावइ।
राजा सिझलै जेवनवाँ जुडाय विकल रनिवासै ॥ ८ ॥
राजा जब आये है महलिया बेदिया चढि बइठे।
राजा कौन बिरोग तुमरे जियरा त हमस बतावहु ॥ ९ ॥
पाँच पदारथ मोरे घर छठौ नरायन।
रानी जतिया क पातर हेलिनियाँ कहै निरवसी ॥१०॥
बाउर हो राजा बाउर किन बउरावा।
राजा जो विधि लिखा है लिलार तहै भरि पाउब ॥११॥
बाउर हो रानी कौसिल्या किन बउराई।
रानी देहु न हमरा अयनवा देखहुँ मुख आपन ॥१२॥
ऐनहु लै मुख देखिन जियरा दुखित भये।
रानी करर बरर होइगे बार गोसइयाँ कैसे पुरवै ॥१३॥
बाउर हो राजा बाउर किन बउरावा।
राजा जो विधि लिखा है लिलार तहै भरि पाउब ॥१४॥

बाउर हो रानी कौसिल्या किन बउराई।
रानी देहु न मोरि बैसखिया मै तप करइ जाबइ ॥१५॥
एक बन डाकै दुसर बन तीसरे बिन्द्राबन।
बिन्द्रैबन के बिचवाँ त राजा ध्यान लायनि ॥१६॥
बन से निकरेनि एक तपसी पुछै राजा दसरथ।
कोन बिरोग तुमरे जियरा जो इतनी दूरि आये ॥१७॥
पाँच पदारथ मोरे घर छठै नारायन।
तपसी जतिया क पतिरी हेलिनिया कहइ निरबसी ॥१८॥
जाहु रजै घर अपने पूत तोरे होइहै।
राजा सुनि लिहे तोहरो पुकार जगत कै मालिक ॥१९॥
होत बिहान लोहि फाटत होरिल जनम लिहे,
राम जनम लिहे।
बाजै लागी अनन बधइया गावै सखि सोहर ॥२०॥
घर घर फिरै राजा दसरथ पंडित बुलावइँ।
पंडित खोलहु न पोथिया पुरान तो सुघरी बिचारहु ॥२१॥
बहुतै सुघरी रामा जनमे तो रोहनी नखत मे।
राजा बारह बरस के होइहइँ त बन के सिधरिही ॥२२॥
बभना के पूत जौ न होतउ त जियरा मरवउतेउ।
मोरि इतनी तपस्या के राम न बन के सुनायेउ ॥२३॥
मन कै दुखित राजा दसरथ सुते धवराहर।
मन कै उछाहिल कौसिल्या रानी पटना लुटावइँ ॥२४॥
बाउर हो रानी कौसिल्या किन बउराई।
रानी धीरे धीरे पटना लुटावउ राम बन जइही ॥२५॥
बाउर हो राजा दसरथ किन बौरावा।
राजा छुटल बँझिनिया क नाम भले बन जइही ॥२६॥

सबेरा होते ही एक चिड़िया बोला करती है। उसकी बोली सुनकर राजा दशरथ ने झपट कर किवाड़ खोला तो मेहतरानी पर उनकी दृष्टि पड गई ॥१॥

मेहतरानी की दृष्टि भी राजा के मुख पर पड गई। उसने मेहतर से कहा—आज सबेरे ही सबेरे निरबसिये (सतान हीन) का मुँह देख आई हूं। देखू, ईश्वर क्या करते है ? ॥२॥

मेहतर ने कहा—ऐ छिनाल मेहतरानी ! चुप रह। तू नीच जाति की स्त्री है। तू ने तीन भुवन के महाराज को निर्वशी कैसे कहा ? ॥३॥

मेहतरानी ने कहा—दाढ़ीजार मेहतर ! तू चुप रह। तू नीच जाति का पुरुष है। उनके तो तीन-तीन रानियाँ है, तीनो बाँझ है ॥४॥

राजा दशरथ ने यह बात सुन ली और वे मन मे बहुत दु.खी हुए। वे सिर से पैर तक चादर तानकर धौरहर पर जाकर सो रहे ॥५॥

कौशल्या चिन्ता करने लगी—घडी-घडी करके दोपहर हो गया। पहले तो एक पहर भी नही होता था कि राजा आ जाते थे। रसोई ठडी पड़ती जा रही है। राजा क्यो नही आये ? ॥६॥

ए राजा की चेरी ! ए मेरी दासी ! रसोई ठडी हो रही है। राजा नही आये ॥७॥

चेरी अटा पर चढ गई। उसने राजा को जगाकर कहा—राजा रसोई ठंडी हो रही है। सारा रनिवास विकल है ॥८॥

राजा महल मे आये। वेदी पर बैठ गये। कौशल्या ने पूछा—राजा ! तुम्हारे जी मे क्या दु.ख है ? मुझे बताओ ॥९॥

राजा ने कहा—पांच पदार्थ मेरे घर मे है। छठें नारायण हैं। हे रानी ! नीच जाति की स्त्री मेहतरानी मुझे निरबसिया कहती है ॥१०॥

रानी ने कहा—तुम बहुत भोले हो। हे राजा ! जो भाग्य मे लिखा है, वही मिलेगा ॥११॥

राजा ने कहा—रानी ! तुम पागल हो। ज़रा मेरा दर्पण तो मुझे दो, मैं अपना मुँह तो देखूँ ॥१२॥

राजा ने दर्पण लेकर मुँह देखा। वे दु खी हुए। बोले—हे रानी ! बाल तो अधपके हो गये। देखें, ईश्वर कैसे बिताता है ? ॥१३॥

रानी ने कहा—राजा ! तुम भोले हो। किसने तुमको भरमाया है ? हे राजा ! जो ब्रह्मा ने माथे में लिख दिया है, वही मिलेगा ॥१४॥

राजा ने कहा—रानी ! तुम्हारी समझ ठीक नहीं। मेरी लाठी लाओ। मैं तप करने जाऊँगा ॥१५॥

एक बन से दूसरे में, दूसरे से तीसरे में गये तो वृन्दाबन मिला। वृन्दाबन के बीच में बैठकर राजा ने भगवान् का ध्यान किया ॥१६॥

बन में से एक तपस्वी निकले। उन्होंने पूछा—हे राजा ! तुमको क्या दु ख है ? जो तुम इतनी दूर आये हो ॥१७॥

राजा ने कहा—मेरे घर में किसी चीज़ की कमी नहीं है। पर हे तपस्वीजी ! नीच जाति की स्त्री मेहतरानी ने मुझे निर्वंशी कहा है ॥१८॥

तपस्वी ने कहा—हे राजा ! अपने घर जाओ। तुम्हारे पुत्र होगा। संसार के स्वामी ने तुम्हारी पुकार सुन ली है ॥१९॥

सबेरे पौ फटते ही पुत्र ने जन्म लिया, राम ने अवतार लिया। आनन्द की बधाई बजने लगी और सखियाँ सोहर गाने लगीं ॥२०॥

राजा दशरथ घर-घर घूमकर पंडितों को बुला रहे हैं। राजा पूछते हैं—हे पंडित ! अपनी पोथी खोलो न ? बताओ, लड़का कैसी घड़ी में पैदा हुआ है ? ॥२१॥

पंडित ने कहा—बहुत अच्छी घड़ी में राम का जन्म हुआ है। रोहिणी नक्षत्र में जन्म हुआ है। हे राजा ! बारह वर्ष के होंगे तो बन को चले जायँगे ॥२२॥

राजा ने कहा—तुम ब्राह्मण के लडके न होते तो मै तुम्हे जान से मरवा डालता। इतनी तपस्या के बाद जो राम मुझे मिले है, तुमने कहा कि वे बन को चले जायेगे ? ॥२३॥

राजा मन मे दु खी होकर अटा पर जाकर सो रहे। कौशल्या रानी को पुत्र-जन्म से बडा उत्साह था। वे धन लुटाने लगी ॥२४॥

राजा ने कहा—हे कौशल्या रानी ! पागल मत हो। किसने तुम्हे बावली कर दिया है ? धीरे-धीरे धन लुटाओ। राम बन का जायग ॥२५॥

रानी ने कहा—राजा ! तुम्हारी बुद्धि कहा है ? राम बन का जायँग तो क्या हुआ ? मेरा बाझ का नाम तो छूट गया। ॥२६॥

हिन्दू समाज मे वश-हीन होना बडे पाप का फल समझा जाता है। इस विचार की छाप आज भी हिन्दुओं के मस्तिष्क मे मौजूद है। वशहीन व्यक्ति, चाहे वह राजा दशरथ ही क्यो न हो, सेहतर द्वारा भी तिरस्कार की दृष्टि से देखा जाता है। उच्च समाज मे उसका अप्रतिष्ठा का तो कहना ही क्या ?

इस गीत मे भी स्त्री की बुद्धि का अच्छा चमत्कार देखने को मिलता है। पुरुष बात-बात से व्यथित हो जाता है, पर स्त्री की बुद्धि आदि से अन्त तक गभीर और निश्चित रहती है।

[८]

अरे अरे श्यामा चिरइया झरोखवै मति बोलहु।
मोरी चिरई ! अरी मोरी चिरई ! सिरकी भितर बनिजरवा
जगाइ लइ आवउ, मनाइ लइ आवउ ॥ १ ॥
कवने बरन उनकी सिरकी कवने रँग बरदी।
बहिनी ! कवने बरन बनिजरवा जगाइ लै आई मनाइ लै आई ॥२॥
जरद बरन उनकी सिरकी उजले रग बरदी।
सेवर बरन बनजरवा जगाइ लै आवउ मनाइ लै आवउ ॥ ३ ॥

सिरकी भितर बनिजरवा सोवहु की जागउ।
अरे मोरे बनिजर तोर धन चिट्ठी लिखि भेजो उठो चिट्ठी बाँचो॥४॥
चिठिया बाँचतबनिजरवा हिरदैया लैलगावइकरे जवाछपटावइ।
अरे मोरे बनजर ! तरर तरर चुवै अँसुवा रुमलिया लिहे पोछइ॥५॥
सबना भदौवाँ अँधियरिया अमवाँ नाही बोरइ,
अमिलिया नाही झपसइ।
मोरी चिरई ! अरी मोरी चिरई ! बाऊ बहुरिया क ठनगन
अमवाँ जे माँगइ अमिलिया जे माँगइ॥६॥
खैरा सुपरिया घुनन लागे झिंगुर लागे कापड।
जौ मोरी बरदी बिकइहै तबै र आइब॥७॥
साँचयइ बटटी समुझया तो सुरजा मनावै।
अरे मोरे सुरजा मेहरी क चाकर मरदवा त अमवाँ ढुँढन
गये कब दहुँ आवै॥८॥

हे श्यामा चिड़िया ! खिड़की पर मत बोलो। हे प्यारी चिड़िया ! सिरकी मे मेरा बनजारा (व्यापारी) है, उसे जगा लाओ। उसे मना लाओ॥१॥

श्यामा ने कहा—हे बहन ! तुम्हारे बनजार की सिरकी किस रग की है ? उसकी बरदी किस रग की है ? बनजारा स्वय किस रग का है ? जिसे मै जगा लाऊँ और मना लाऊँ॥२॥

स्त्री ने कहा—पीले रङ्ग की तो सिरकी है। सफेद रङ्ग की बरदी है और साँवले रङ्ग का बनजारा है। उसे जगा लाओ, उसे मना लाओ॥३॥

श्यामा ने बनजारे के पास जाकर कहा—सिरकी के भीतर सोते हो या जागते ? हे बनजारा ! उठो। तुम्हारी प्यारी स्त्री ने चिट्ठी भेजी है, उसे बाँचो॥४॥

बनजारे ने चिट्ठी बाँचकर उसे हृदय से लगाया, कलेजे से चिपका

लिया। उसकी आँखों से आँसुओं की धारा बह चली। रुमाल से वह उसे पोंछने लगा ॥५॥

बनजारा कहने लगा—सावन-भादों का घोर अंधकार, भला आज-कल न आम में बौर आते हैं और न इमली ही फलती है। पर हे मेरी प्यारी चिड़िया! मेरी भोली-भाली स्त्री का हठ तो देखो, वह आम और इमली माँगती है ॥६॥

मुझे इतने दिन आये हो गये कि खैर सुपारी में घुन लग गये और कपड़ों में झींगुर। अब तो मेरी बरदी बिकेगी, तभी मैं घर आऊँगा ॥७॥

मचिया पर बैठी हुई सास सूर्य से प्रार्थना कर रही है—हे मेरे सूर्य! स्त्री का दास पुरुष स्त्री के लिये आम ढूँढने गया है, इमली ढूँढने गया है। पता नहीं, कब आयेगा ॥८॥

इस गीत में पुराने ज़माने का चित्र है, जब व्यापारी लोग, जिन्हें बनजारा कहते थे, चीजें लादकर दूर देशों में बेचने जाया करते थे और बहुत दिनों पर लौटते थे। यह बात खास ध्यान देने की है कि उन दिनों स्त्रियाँ भी पढ़ी-लिखी होती थीं और अपने पतियों को पत्र लिखकर भेजा करती थीं। श्यामा पक्षी के हाथ पत्र या संदेशा भेजना तो वैसा ही है, जैसा मेघदूत में मेघ-द्वारा और नल-दमयन्ती की कथा में हंस-द्वारा समाचार भेजे गये थे।

[६]

मचियहिं बैठी हैं सास त बहुआ से पूछइँ रे।
बहुआ काहे तोर मुँहा पियरान गोड घहरावहि रे॥ १॥
लाज शरम कै बतिया मैं सासूजी से कैसे कहउँ रे।
सास तोरा पूत छयल छबिलवा अँचरवा पिच डारइँ रे॥ २॥
ये अलबेली बहुरिया लछन न लगावहु रे।
दुलहिनी आज के नवयें महिनवाँ होरिल तोहरे होइहै रे॥३॥

अरे सासूजी के होबै चेरिया ननद मन हरबै रे।
अपने राजा के प्रान पियारी होरिल मोरे होइहै रे॥ ४॥

मचिये पर सास बैठी है और बहू पे पूछ रही है—हे बहू ! तुम्हारा मुँह पीला क्यो है ? पैर भारी क्यो है ? ॥ १ ॥

बहू सोचती है ठीक जवाब देते हुए मुझे लाज लगती है। फिर वह बोली—हे सासजी ! तुम्हारा पुत्र बड़ा छैल-छबीला है, उसने मेरा आँचल मसल दिया है ॥ २ ॥

सास ने कहा—हे अलबेली बहू ! बात न बनाओ। हे दुलहिन ! आज के नवे महीना तुम्हारे पुत्र होगा ॥ ३ ॥

बहू मन मे कहती है—अरे ! मेरे पुत्र होगा। मै सासजी की चेरी होऊँगी। ननद का मन हर लूँगी और अपने राजा की प्राण-प्यारी होऊगी।

गर्भवती स्त्री की कैसी मनोहर अभिलाषा है !

[१०]

चकई पुछहिं सुनु चकवा भोर कब होइहइं सुरुज कब उइहइं रे।
चकई रुकमिनि हरि परदेस घरहिं कब अइहइं रे॥१॥
तौ खेलत मेलत के बेटौना त भैया मोर लागउ रे।
भैया हरि कै लगाई नवरङ्गिया तौ ठाढ़ि सुखाति हवै रे॥२॥
खेलत मेलत की बिटियवा त बहिनी मोर लागउ रे।
बहिनी जो रे धनिया कुलवंतिनि सींचि जगावइँ रे॥३॥
हाथ के रे काढ़ेन ककनवाँ पायेन कर नूपुर रे।
ये हो सिर धरि लिहेनि घइलना नौरङ्ग सींचै चलि भईं रे॥४॥
पेड़ धरि सींचै नवरङ्गिया डार धरि भेटै हो।
येहो आइ गैहै हरि कै सुरतिया तौ छतिया बेहाल भईहो॥५॥

घिया केरि पुरिया पोवायउँ दुधन कइ जाउरि हो।
ये हो मोरे लेखे माहुर धतुरवा अकेले मोरे हरि बिन हो ॥६॥

चकई चकवे से पूछती है—हे चकवा! सवेरा कब होगा? सूर्य कब उदय होंगे? हे चकवा! रुक्मिणी के स्वामी परदेश से कब आयेंगे? ॥५॥

रुक्मिणी कहती है—हे खेलने-कूदने वाल लडको! तुम मेरे भाई लगते हो। मेरे प्राणेश्वर की लगाई हुई नारङ्गी खडी सूख रही है ॥२॥

लडको ने कहा—हे खेलनेवाली लडकी! तुम मेरी बहन लगती हो। जो स्त्री कुलवंती होती है, वह स्वय सीचकर उसे जगाती है ॥३॥

रुक्मिणी ने हाथ का कगन काढकर रख दिया। पैरो से पाजेब निकालकर रख दिया, और सिर पर घडा रखकर वह सीचने चल खडी हुई ॥४॥

पेड का तना पकडकर वह नारङ्गी सीचती है और डाल पकड कर भेटती है। इतने मे प्राणेश्वर की सुध आ जाती है तो वह विह्वल हो जाती है ॥५॥

वह कहती है—मैंने घी की पूरिया बनाई और दूध की खीर। पर प्राणेश्वर के बिना मेरे लिये वह विष सा मालूम होता है ॥६॥

इस गीत म विरागिनी का बहुत ही स्वाभाविक वर्णन है।

[११]

पहिल सपन एक देखेउँ अपने महिल मे रे।
सासु सपने क करहु बिचार सपन सुभ पावउँ ॥१॥
सपने ससुर राजा दसरथ बगिया लगावइँ हो।
सासु बगिया मे फुलइ गुलाब भँवर रस बिलसइ हो ॥२॥
सपन कौसल्या एसी सास तो हमरे महल आई।
सासु सोने कै दहेडियालिहे ठाढि पुछै बहुवा कहाँ धरउँ रे ॥३॥

सपने लखन अस देवर रुमलिया पीठि झारै
बिहँसि बतिया बोलइँ हो।
भौजी जौ तोरे होइहै होरिलवा बछेडवा हम लेबइ रे ॥४॥
सपने सुभद्रा ऐसी ननदा तौ हमरे महल आई,
बिहँसि बतिया बोलइँ हो।
भौजी जौ तोरे होइहै होरिलवा कंगन हम लेबइ हो ॥५॥
सपने पुरुष राजा राम अस हमरे महल आये।
सामी हँसत कमल दृनौ नैन सेजरिया पगु धारइँ हो ॥६॥

मैंने अपने महल मे आज पहला स्वप्न देखा। हे सासु ! स्वप्न का विचार करके बताओ कि यह स्वप्न शुभ है न ? ॥१॥

स्वप्न मे राजा दशरथ ऐसे मेरे ससुर बाग लगाते है। उस बाग मे गुलाब फूला है, जिस पर भौंरे रस ले रहे है ॥२॥

स्वप्न मे कौशल्या ऐसी सास मेरे महल मे आती है उनके हाथ मे सोने की दहेड़ा (दही का हाडी) है। वे पूछती है कि बहू इसे कहा रक्खूं ॥३॥

स्वप्न मे लक्ष्मण ऐसे देवर रुमाल से मेरी पीठ झाड रहे है, हसकर कह रहे है कि भाभी तुम्हारे पुत्र होगा तो मै बछेड़ा लेऊंगा ॥४॥

स्वप्न मे सुभद्रा ऐसी ननद मेरे महल मे आती है। वह, हसकर कह रही है कि हे भाभी ! तुम्हारे पुत्र होगा तो मै कगन लूंगी ॥५॥

स्वप्न मे राम ऐसे मेरे पति महल मे आये। कमल ऐसे नेत्रो से हँसते हुए उन्होने मेरी सेज पर चरण रक्खा ॥६॥

[१२]

छोट मोट पेडवा ढेकुलिया त पतवा र लहालही हो।
रामा ताही तरे ठाढि रे हरिनिया हरिन बाट जोहइ हो ॥१॥

बन मे मे निकलेला हरिना त हरिनी मे पूँछले हो।
हरिनी काहे तोर बदन मलीन काहे मुँह पीअर हो ॥१॥
गइलो मैं राजा के दुआरिआ त बतिया सुनि अइलो हो।
प्यारे आजु छोटे राजा क बहेलिया हरिन मरवइहइँ हो ॥३॥
केइ जे बगिया लगवले केइ रे आए ढुँढ़ले हो।
हरिनी केकर धनिया गरभ स हरिनवा मरवावले हो ॥४॥
दसरथ बगिया लगवले लखन आये ढुँढ़ले हो।
प्यारे रघुबर धनिया गरभ से हरिन मरवावले हो ॥५॥
कर जोडी हरिनी अरज करे सुनु कौशल्या रानी हो।
रानी सीता के होइहै नन्दलाल हमही कुछ दीहब हो ॥६॥
सोनवा मढ़इबो दुहु सिंगवा भोजनवा तिल चाउर हो।
हरिनी भुगतहु अयोध्या के राज अभै बन बिचरहु ॥७॥

एक छोटा मोटा ढाक का पेड है जो पत्तो मे लहलहा रहा है। उसके नाचे हरिनी खडी है और हरिन की राह देख रही है ॥ १ ॥

बन में से हरिन निकला और उसने हरिनी से पूछा—हे हरिनी! तुम्हारा मुह उदास और पीला क्यो है ? ॥ २ ॥

हे हरिन! मै राजा के द्वार पर गई थी। वहाँ मैने सुना है कि आज छोटे राजा अपने बहलिये (व्याधा) से हरिन को मरवायेगे ॥३॥

हे हरिनी! किसने बाग लगवाया ? बन मे आकर किसने खोजा ? और किसकी स्त्री गर्भ से है जो हरिन मरवायेंगे ? ॥ ४ ॥

हे हरिन! राजा दशरथ ने बाग लगवाया है। लक्ष्मण खोजने आये थे। राम की स्त्री सीता को गर्भ है। उन्ही के लिये हरिन मारा जायगा ॥ ५ ॥

हरिनी कौशल्या के पास जाती है और हाथ जोडकर विनती करती है—हे रानी! आज सीता के पुत्र होगा, मुझे कुछ दो ॥ ६ ॥

कौशल्या उसका अभिप्राय समझकर कहती है—हे हरिनी ! मैं हरिन के दोनो सीगो को सोने मढ़ाउँगी और तिल चावल खाने को दूँगी। तुम जाओ, अयोध्या के राज मे सुख भोगो और निर्भय होकर बन मे विहार करो ॥ ७ ॥

[१३]

उठत रेख मोसि भोजत राम बनै गये हो।
मोरी बरहा बरिस कै उमरिया मैं कइसे बितइबइ हो ॥ १ ॥
काह राम तोहरे घरॉ रहे काह बिदेस गये हो।
रामा हँसि कै न धरेउ अँचरवा न कबहूँ कोहानेउ ॥ २ ॥
कारी चुनरि नाहीं पहिन्यो पियरी नाही छोन्यो हो।
रामा कोरवा न लीन्हेउँ बलकवा छटी नाहीं पूजेउँ हो ॥ ३ ॥
छोडे जाईथ घर भर सोनवॉ महल भर रुपवा हो।
रामा छोडे जाईथ लहुरा देवरवा पिया के सँग रहबइ हो ॥४॥

रेख भिन रही थी (ज़रा सी मोछ निकल रही थी), उस समय राम बन को गये। मेरी बारह बरस की अवस्था, मै दिन कैसे बिताउँगी ॥ १ ॥

हे राम ! तुम्हारे घर रहने से क्या ? और विदेश जाने से क्या ? न तो तुमने कभी हँसकर मेरा आँचल पकडा और न तुम कभी रूठे ॥२॥

पीली धोती पहन कर मै आई थी, वही पहने हूं। काली सारी मैंने पहनी ही नहीं। न गोद मे बालक लिया, न छठ की पूजा की ॥ ३ ॥

मै सोने से भरा हुआ घर और चाँदी से भरा हुआ महल छोड़कर जा रही हू। छोटे देवर को भी छोड़कर जा रही हूँ। मै अपने प्राणनाथ के साथ रहूँगी ॥ ४ ॥

कभी-कभी रूठ जाना भी प्रेम-वृद्धि के लिये आवश्यक जान पडता है।

[१४]

राम जे चलेनि मधुबन के माई से अरज करइँ।
माई हम तो जावइ मधुबन के सितै कइसे रखबिउ ॥ १ ॥
आँगन कुइयाँ खनइबै सितैहिं नहबैबइ।
बेटा ! खाँड चिरौंजी खवइबइ हृदय बीच रखबइ ॥ २ ॥
राम जे चलेनि मधुबन के सीता जे गोहन लागी।
सीता ! हमरे सँग मत चलहु बहुत दुख पउबिउ ॥ ३ ॥
सहबइ मैं भुखिया पियसिया जेठ दुपहरिया।
पिया देखि हम तोहरी सुरतिया सकल सुख पउबइ ॥ ४ ॥

राम बन को जा रहे हैं। माँ से प्रार्थना कर रहे हैं—हे माँ ! मैं तो बन को जा रहा हूँ, सीता को तुम कैसे रखोगी ? ॥ १ ॥

माँ ने कहा—बेटा ! आँगन में कुंवा खोदवा लूँगी। वही सीता को नहलाउँगी खाँड और चिरौंजी खिलाउँगी और हृदय में रखूँगी ॥ २ ॥

राम मधुबन को चले। सीता साथ लगी। राम ने कहा—सीता ! हमारे साथ मत चलो। बहुत कष्ट पाओगी ॥ ३ ॥

सीता ने कहा—हे प्रियतम ! भूख-प्यास सह लूँगी। जेठ की दुपहरी भी सह लूँगी। हे राम ! तुमको देखकर मैं सब सुख पाउँगी ॥४॥

सच है, पतिव्रता स्त्री को पति के सिवा सुख कहाँ ?

[१५]

जउ मैं जनतेउँ ये लवँगरि एतनी अँहकबिउ।
लवँगरि रँगतेउँ छयलबा क पाग सहरवा में गमकत ॥ १ ॥
अरे अरे कारा बदरिया तुहइँ मोरि बादरि।
बादरि ! जाइ बरसह वहि देस जहाँ पिय छाये ॥ २ ॥

बाउ बहइ पुरबइआ न पछुवाँ झकोरइ।
बहिनी दिहेउ केवडिया ओठँगाइ सोवउँ सुख नींदरि ॥ ३ ॥
कि तुहुँ कुकुरा बिलरिआ सहर सब सोवइ।
कि तुइँ ससुर पहरिआ किंवरिआ भडकावह ॥ ४ ॥
ना हम कुकुर बिलरिया न ससुरु पहरिआ।
धनि ! हम अहा तोहरा नयकवा बहरिया बुलायसि ॥ ५ ॥
आधि राति बातन गई बतियाँ नियाई राति चितिया।
बारह बरस का सनेहिया जोरत मुर्गा बोलइ ॥ ६ ॥
तोरबेउँ मै मुर्गा क ठोर गटइया मरोरबेउँ।
मुर्गा काहे किहेउ भिनुसार त पियहि बतायउ ॥ ७ ॥
कहे क ये रानी तोरबिउ ठोर गटइया मरोरबिउ।
रानी होइ गइ धरमवाँ क जूनि भोर होत बोलइ ॥ ८ ॥

हे लवंग ! यदि मै जानती कि तुम इतना महकोगी तो मै अपने शौकीन पति की पगडी तुम्हारे फूल से रगती, जिससे वह सारे शहर से महकते ॥ १ ॥

हे काली घटा ! तुम्ही मेरी प्यारी घटा हो। हे घटा ! वहाँ जाकर बरसो, जहाँ मेरे प्रियतम है ॥ २ ॥

पूर्वा हवा बह रही है। कभी-कभी पछवा भी झकोरता है। हे ननद ! तुम केवाडी बन्द कर देना, मै सुख की नींद सोउगी ॥ ३ ॥

तुम कुत्ते हो या बिल्ली या मेरे ससुर जी के पहरेदार हो ? सारा शहर तो सो रहा है। तुम कौन हो जो मेरी केवाडी खटखटा रहे हो ? ॥४॥

न मै कुत्ता हूँ, न बिल्ली और न तुम्हारे ससुर का पहरेदार ही हूँ। हे प्यारी ! मै तुम्हारा पति हूँ। मुझे घटा बुला लाई है ॥ ५ ॥

आधी रात बातो ही मे बीत गई। बारह वर्ष के प्रेम को एक करने मे सारी रात बीत गई। इतने मे मुर्गा बोलने लगा ॥ ६ ॥

स्त्री ने कहा—हे मुर्गा ! मै तुम्हारी चोच तोड़ डालूँगी। तुम्हारी गर्दन मरोड़ दूँगी। तुमने सबेरा क्यो किया और मेरे प्रियतम को क्यो बतलाया ? ॥ ७ ॥

पति ने कहा—हे रानी ! मुर्गे बेचारे की चोच क्यो तोडेगी और गर्दन क्यो मरोड़ोगी, हे रानी ! इसके धर्म का समय हो गया है, इसलिये सबेरा होते ही बोलता है ॥ ८ ॥

[१६]

कोठवा से उतरी राधिका अँगनवाँ मे ठाढी भई
अँगनवा मे ठाढ़ी भई रे।
अरे ओ मोरे रामा, हँसि हँसि पूँछहिं जसोदा
काहे बहु अनमन रे ॥१॥
काह कहौ मोरी सासु कहत मोहे लाज लागे रे।
अरे ए मोरी सासु, आजु महल मोरे चोरी भई
तिलरी चोराय गई रे ॥२॥
तोरि डारौं हाथे क हथेहरा, गोडे क गोड़ाहर।
अरे ए मोरी बहुआ, ओढ़ि लेहु नित का डुपटवा
त मुरली चुराय लावो ॥३॥
तोरि डारिन हाथे का चुड़िला गोड़े का गोड़ाहर।
ओढ़ि लिहिन नित का डुपट्टा त
मुरली चुराइ लाइन रे ॥४॥
बहरा मे आये कन्हैया अँगनवाँ मे ठाढ़े भये।
अरे ए मोरे रामा, हँसि हँसि पूछहि जसोदा
काहे बेटा अनमन रे ॥५॥
काह कहौ मोरी माया, कहत मोहिं लाज लागे।
आज वृन्दाबन चोरी भई, मुरली चोराय गई रे ॥६॥

अस जिन जानो राधिका मुरलिया बाँस की है रे।
मुरली मे बसे मोरे प्रान, मुरलिया हमरी दै देव रे ॥७॥
अस जिन जान्यो कन्हैया तिलरिया लाह कै है
अरे ए मोरे कान्हा, तिलरी मे लागो हीरा लाल,
तिलरिया हमरे बाप की है ॥८॥

(मुरादाबाद)

राधा कोठे से उतरीं और आँगन मे खड़ी हुई। यशोदा हंसकर पूछने लगीं —हे बहू! मन उदास क्यों है? ॥ १ ॥

हे सासु! मै क्या कहू? कहते हुये मुझे लाज लगती है। आज मेरे महल मे चोरी हुई है। कोई मेरी तिलरी चुरा ले गया ॥ २ ॥

यशोदा ने कहा—हाथ पैर के कड़े तोड डाला, और हे मेरी बहू! दुपट्टा ओढकर तुम भी मुरली चुरा लाओ ॥ ३ ॥

राधा ने हाथ का चूड़ा और पैर के कड़े तोड डाले और दुपट्टा ओढ़कर वह मुरली चुरा लाई ॥ ४ ॥

कन्हैया बाहर से आये और आँगन मे खड़े हुए। यशोदा हंसकर पूछने लगी—हे बेटा उदास क्यो हो? ॥ ५ ॥

हे मेरी माँ! मैं क्या कहू? कहते हुए लाज लगती है। आज वृन्दावन मे चोरी हुई, मेरी मुरली चोरी गई ॥ ६ ॥

हे राधा! ऐसा मत समझना कि मुरली बांस की है। मुरली मे मेरा प्राण बसता है। मेरी मुरली दे दो ॥ ७ ॥

हे कन्हैया! ऐसा मत समझना कि तिलरी लाख की है। तिलरी मे हीरा और लाल जड़े हैं। वह मेरे बाप की दी हुई है ॥ ८ ॥

इसमे विवाह के उपरान्त पति-पत्नी की प्रेम-वर्द्धक छेड़-छाड़ का वर्णन है।

[१७]

मोरे आँगन चन्दन रुखवा त लहर लहर करै हो।
ललना, तेही पर बोलै काग त बोल सुहावन ॥ १ ॥
की काग नैहर से आवा की हरिजी पठावा।
काग कौन सँदेस तुम लायो त बोलिया सुहावन ॥ २ ॥
नही हम नैहर से आवा ना हरिजी पठावा।
आज के नवये महीना होरिल तोर होइहै ॥ ३ ॥
चुप रहौ काग तू चुप रहौ बैरिनि ना सुनै।
एक तो बिटियही मोरी कोख दुसरे हरि दारुन ॥ ४ ॥
आठै नौ मास लागत होरिल जनम भए।
बाजै लागे आनँद बधैया उठन लागे सोहर हो ॥ ५ ॥
रान्ह परोसिन माया मोरी ओर बहिन मोरी।
कगवा का हेरा मँगाओ मै सोनवा मिढवौ ॥ ६ ॥
सोनवाँ मिढौबै बोकै ठोर रूप दोनौ डगना।
सोने के कटोरिया मे दूध भात कगवा क भोजन ॥ ७ ॥

(उन्नाव)

मेरे आँगन मे चदन का पेड लहलहा रहा है। हे सखी ! उस पर कौवा बोल रहा है। उसकी बोली बडी सुहावनी लगती है ॥ १ ॥

हे कौवा ! तुम नैहर से आये हो ? या मेरे प्रियतम ने तुमको भेजा है ? कौन-सा सदेशा तुम लाये हो ? तुम्हारी बोली बडी सुहावनी लगती है ॥ २ ॥

न तो नैहर से आया हूँ, न तुम्हारे प्रियतम ने मुझे भेजा है। आज के नवें महीने तुम्हारे पुत्र होगा ॥ ३ ॥

हे कौवा ! चुप रहो, कही बैरिन न सुन ले। एक तो मेरी कोख यो ही कन्या-वाली है, दूसरे मेरे प्रियतम (बार-बार कन्या ही पैदा करने

के कारण) मुझसे प्रेम नहीं करते ॥ ४ ॥

आठवें के बाद नवाँ महीना लगते ही पुत्र ने जन्म लिया; आनंद की बधाई बजने लगी और सोहर गाया जाने लगा ॥ ५ ॥

हे मेरी पड़ोसिनो ! तुम मेरी सौ हो, मेरी बहन हो, कौवे को खोज लाओ, मैं उसे सोने से मढ़ाऊँगी ॥ ६ ॥

उसकी चोंच और उसके दोनों डैनों को मैं सोने से मढ़ाऊँगी। सोने की कटोरी में मैं उसे दूध और भात खाने को दूँगी ॥ ७ ॥

इस गीत में पुत्र-जन्म से माता को होनेवाली खुशी का वर्णन है। कौवा-जैसा कुत्सित गिना जानेवाला पक्षी भी सुख-दायक वचन बोलने के कारण सोने से मढ़ा जाने का पात्र समझा गया है। इस प्रकार कौवे के बहाने मनुष्य के परिवार में मधुर भाषण की विशेषता भी बताई गई है।

गाँववालों का यह विश्वास होता है कि जब कौवा घर की मुँडेर पर काँव-काँव बोलता है, तब घर में कोई न कोई नया मेहमान आता है।

[१८]

मैं तो पहले जनौंगी धीयरी,
मेरी जौ कोखि होय सुलच्छनी ॥
जाकी गरजति आवैगी बराइति री,
पालिकी चढ़ि आवै साजना ॥१॥
मेरो घरु जो रितो अरु पेटु री,
मेरी धीयरी जसईया लै गयो ॥
मैं तो बहुरि जनौंगी पूतु री,
मेरी जौ कोखि होय सुलच्छनी ॥२॥
जाकी गरजति जायगी बरायत री,
पालिकी चढ़ि आवै कुलबहू ॥

मेरो घरु तौ भरो अरु पेटु री,
मेरी रुनुक झुनुक डोलै कुलबहू ॥३॥
(बदायूँ)

बहू अपने मन की लालसा बतलाती है —

मैं पहले कन्या जनूँगी, यदि मेरी कोख सुन्दर लक्षण वाली हुई तो। जिसके विवाह के लिये बाजा बजाती हुई बरात आयेगी और दामाद पालकी मे चढ़कर आयेगा ॥१॥

हाय ! मेरा तो घर भी खाली हो गया और पेट भी, मेरी कन्या को तो दामाद लेगया। अब तो मैं पुत्र जनूँगी, यदि मेरी कोख सुन्दर लक्षण वाली हुई तो ॥२॥

जिसकी बरात बाजा बजाती हुई जायगी और बहू पालकी मे चढ़कर आयेगी। मेरा घर भी अब भरा-पूरा लगता है और पेट भी। बहू रुन-झुन करती हुई घर मे डोल रही है ॥३॥

इस गीत मे गर्भिणी बहू के मन की तरंगे दिखाई गई हैं।

[१६]

एक साध मन उपजी, जो हर पुजवैं।
साहिब ! हमरे नैहर लौ जावो पियरी लै आवो ॥१॥
तुम्हरो तो नैहर गोरी दूर बसै, को मरे जैहे।
घर ही मे पियरी रँगैहौं, मैं साध पुजौहौ ॥२॥
भोर होत पौ फाटत होरिल उर धरे।
बजन लागे अनँद बधायें, गावै सग्वी सोहरे ॥३॥
बाहर बजै बधैया, भीतरी सखी सोहरे।
सात सबद सहनैया ससुर द्वारे बाजै,
बहुत नीको लागै ॥४॥

बरहीं बरस बीरा आये, मलिन घर उतरे।
मालिन, किन घर बजै बधैया, गावै सखी सोहरे ॥५॥
साहिब, तुम्हरी बहिन घर लाल भये,
तुम्हरे भनिज भये।
उन घर बजै बधैया, गावै सखी सोहरे ॥६॥
जो मैं ऐसी जनतो, बहिन घर लाल भये,
हमरे भनिज भये।
बेचतो मैं ढाल तलवरिया, कमर कटरिया,
सिर की पगड़िया, पियरी लै आवतो ॥७॥
हकरो गाँव के बजजवा, बेगि चले आव,
अरे जल्दी आव।
बजजा ! पँचरग चुनरी लै आव, बहिनै पहिरावौं
बहिन सुख मानै ॥८॥
हकरो गाँव के सुनरा, बेगि चले आव,
अरे जल्दी आव।
सुनरा, सोने रूपे खडुआ लै आव,
भनिजहिं पहिरावौं, बहनोई सुख मानै ॥९॥
हकरो गाँव के दरजी, बेगि चले आव, अरे जल्दी आव।
दरजी रेसम का कुरता सिलाव, भनिजहिं पहिरावौं,
बहिन सुख पावै ॥१०॥
(इटावा)

मन मे एक इच्छा उत्पन्न हुई है, यदि भगवान उसे पूरी करें। हे स्वामी ! मेरे नैहर जाओ और वहाँ से 'पियरी' (पीली धोती) ले आओ ॥१॥

हे गोरे रंगवाली ! तुम्हारा नैहर तो बड़ी दूर है, कौन जाय ? मैं

घर ही में 'पियरी' रँगवा दूँगा, मैं ही तुम्हारी इच्छा पूरी कर दूँगा ॥२॥

सबेरे, पौ फटते ही, पुत्र उत्पन्न हुआ। आनन्द की बधाई बजने लगी और सखियाँ सोहर गाने लगी ॥३॥

घर के बाहर बधाई बज रही है और घर के भीतर सखियाँ सोहर गा रही हैं। ससुर के द्वार पर सातों स्वरों में शहनाई बज रही है, जो बहुत प्यारी लगती है ॥४॥

बारहवें वर्ष (बहन के विवाह के बाद) भाई आया और मालिन के घर पर ठहर गया। हे मालिन ! किसके घर में बधाई बज रही है और सखियाँ सोहर गा रही हैं ? ॥५॥

मालिन ने कहा—हे साहब ! तुम्हारी बहन के पुत्र उत्पन्न हुआ है, तुम्हारे भाञ्जा हुआ है। इसीसे उस घर में बधाई बज रही है और सखियाँ सोहर गा रही हैं ॥६॥

भाई पछताने लगा—मैं ऐसा जानता कि बहन के पुत्र हुआ है, मेरे भाञ्जा हुआ है, तो मैं अपनी ढाल-तलवार, कमर की कटारी और सिर की पगड़ी बेचकर बहन के लिये 'पियरी' (पीली धोती) ले आता ॥७॥ गाँव के बजाज को बुलाओ। अरे, जल्दी आओ। हे बजाज ! पाच रंगों में रँगी हुई चूनरी ले आओ, मैं बहन को पहनाऊँ, जिससे मेरी बहन बहुत सुख माने ॥८॥

गाँव के सुनार को बुलाओ। सुनार ! जल्दी आओ। हे सुनार ! सोने और चाँदी के कड़े बना लाओ, मैं भाञ्जे को पहनाऊ, जिससे बहनोई प्रसन्न हो ॥९॥

गाँव के दरज़ी को बुलाओ। दरज़ी ! जल्दी आओ। हे दरज़ी ! रेशम का कुरता बना लाओ, मैं भाञ्जे को पहनाऊँ, जिससे बहन सुख पावे ॥ १० ॥

इस गीत में बहन के लिये भाई का अकृत्रिम प्रेम दिखलाया गया है।

[२०]

छापक पेड छिउलिया तौ पतवन घन बन।
ए हो ओहि तरे ठाढी सीतल देई
मनही बिसोह करै हो ॥ १ ॥
को मोरे दुइ खर तुरिहै त मडई बनइहँइ।
ए हो, को मोर दियना जरइहै
त मडई रखइहँइ ॥ २ ॥
बन से जो निकरे बन तपसी
त सीता समुझावहिं हो।
सीता ! हम तोरा दुइ खर तुरब त मढई छवाइब।
सीता ! हम तोरा दियना जराइब त
मढई रखाइब हो ॥ ३ ॥
को मोरा लीन्हे मुट्ठी भर सोने का छुरवा त
को मोरे धगरीन।
ए हो को मोर पँचरा बैठइहै त
बिपती गवाँइब हो ॥ ४ ॥
बन से जो निकरी बन तपसिन
सीता समुझावहिं।
सीता ! हम बेबो मुट्ठी भर सोने का छुरवा त
हम तोर धगरीन।
सीता ! हम तोरे पँजरा बैठाइब त
बिपति गवाँइब हो ॥ ५ ॥

भोर भये पहु फाटल लउहर जनम ले लें
जंगल सोहावन हो।
ए हो, हँकरि बोलावहु नए के नउआ त
हँकरि बोलावहु हो।
नउवा चारि सोपारी लेइ लेहु
रोचन लेइ जावहु हो॥६॥
पहिला रोचन राजा दसरथ दुसरा कौसिल्ला रानी।
ए हो, तिसरा रोचन देवर लछिमन,
पिअइ न बतायउ हो॥७॥
छोटे कदम के रे डाल न राम दतुइन तोरै।
लछुमन किनके रोचन तुम पायो न
भहर-भहर करै झहर-झहर करै॥८॥
भाभी जो हमरी सीतलदेई बडी गुन आगरि।
भइया उनही के भये नंदलाल रोचन हम पायो।
मोरे सिर भहर भहर करै, झहर झहर करै॥९॥
जनम तो लेले पूता बड़ी रे विपति मे हो,
बडी रे मँसति मे हो।
पूता जनम जो लेतेउ अजोधिया हमहुँ मुँह देखित॥१०॥
राजा दसरथ पटना लुटवते कौसिल्ला रानी अभरन।
रामा तरर तरर चुवै आँसु पटुकवन पोछइँ॥११॥
(फैजाबाद)

ढाक का एक छोटा-सा पेड है, जो पत्तो से खूब सघन हो रहा है। सीता देवी उसी के नीचे खड़ी होकर मन मे चिंता कर रही है॥१॥

मेरे लिये कौन खर (सरपत) तोड़ेगा? कौन झोपडी बनायेगा? कौन दिया जलायेगा? और कौन झोपडे की रखवाली करेगा?॥२॥

वन मे से तपस्वी निकले। उन्होने कहा—हे सीता! हम तुम्हारे लिये सरपत तोड़ेंगे, झोपड़ी बनायेंगे, दिया जलायेंगे और झोपडी की रखवाली करेंगे ॥३॥

सीता फिर चिंता करने लगी। मेरा यहां कौन है जो सोने की मूठ वाला छुरा लेगा? कौन मेरी धगरिन (नाल काटने वाली चमारिन) होगी? मेरी बच्चादानी कौन बैठायेगा? और कौन मेरी विपत्ति हरेगा?

वन मे से तपस्विनियां निकली। उन्होने कहा—हे सीता! हम सोने की मूठ वाला छुरा लायेंगी, हम धगरिन होगी, हम तुम्हारी बच्चा-दानी बैठायेंगी, और विपत्ति मे सहायक होगी ॥४॥

सबेरा हुआ। पौ फटा। पुत्र उत्पन्न हुआ। जङ्गल सुहावना लगने लगा। अरे, दौड़कर नगर के नाई को तो बुला लाओ। हे नाई! चार सुपारियां लेलो और रोचन लेकर जाओ ॥६॥

पहला रोचन राजा दशरथ को, दूसरा रानी कौशल्या को और तीसरा देवर लक्ष्मण को देना, पर पति (रामचन्द्र) को न बताना ॥७॥

कदम्ब का छोटा-सा पेड़ है। उसकी डाल से राम दातुन तोड रहे है। हे लक्ष्मण! तुमने यह रोचन किसका पाया है, जो तुम्हारे माथे पर दमक रहा है? ॥८॥

लक्ष्मण ने कहा—मेरी भावज जो सीता देवी है, जो गुणागर है, हे भाई! उन्ही के पुत्र उत्पन्न हुआ है। उन्ही का यह रोचन मैने पाया है, जो मेरे माथे पर दमक रहा है ॥९॥

राम मन मे कहने लगे—हे पुत्र! जन्म तो तुमने बड़ी विपत्ति मे लिया। हे पुत्र! तुम अयोध्या मे जन्मे होते तो मै भी तुम्हारा मुंह देखता ॥१०॥

तुम्हारे जन्म की खुशी मे राजा दशरथ वस्त्र लुटाते और रानी कौशिल्या गहने लुटाती। राम की आंखो से तरर-तरर आंसू बहने

लगे, जिन्हे वे दुपट्टे से पोछते है । ॥१॥

राम के जीवन-चरित्र मे सीता का वन वास एक ऐसी घटना है, जो पत्थर के कलेजे को भी पिघला सकती है । हिंदी के भक्त कवियो ने इस घटना को छिपाने ही का प्रयत्न किया है, पर स्त्रियो ने इस विषय को लेकर अपने गीतो मे पति-पत्नी के मनोभावो के बडे ही करुणा-पूर्ण चित्र खींचे हैं । वन मे सीता को पुत्र हुआ है, सीता ने घर के सब लोगो को रोचन भेजा केवल पति को नही, पति को इससे जो मनोवेदना हुई होगी, वह अनुभव की बात है, शब्दो मे वह व्यक्त नही की जा सकती ।

सीता के वन-वास के समय राजा दशरथ जीवित नही थे । पर गीत एक गृहस्थ के पूरे कुटुम्ब के लिये रचे गये है, जिसमे पिता, माता, पति, पत्नी, पुत्र, पुत्री और पतोहू सब है, और राजा दशरथ का परिवार उसका एक आदर्श है । इसलिये गीतो मे राजा दशरथ से अभिप्राय किसी भी कुटुम्ब के पिता से है, और रानी कौशल्या का घर की स्वामिनी से ।

[२१]

कि गुन अमवा बउरलै अरे ना जानो कौन गुन ॥
कि अरे अमवा तोके मलिया जो सींचेला कि
अपने गुन ॥ १ ॥
नाही मोके मलिया जो सींचेला नाहीं हम अपने गुन ॥
रिमकि झिमकि दैव बरिसै उनके जो बुन्द परे ॥ २ ॥
बहवा होरिल बड़ सुन्दर ना जानो कौन गुन ॥
मोरी बहुआ की तू खइलू नौरंगिया को पेट गुन ॥ ३ ॥
नाही हम खइली नौरंगिया नाही मोर पेट गुन ॥
लगिलिउँ ससुइयाजी के गोड न उनक धरम गुन ॥ ४ ॥

बहुआ चउक बड़ सुन्दर ना जानि कौने गुन ॥
किय तोहरो सुघरी नउनियाँ की तोहरे आँगन गुन ॥ ५ ॥
नाही मोरी सुघरी नउनियाँ नाहीं मोरे आँगन गुन ॥
सैयाँ मोर तप व्रत कीन्ह तौ उनके धरम गुन ॥
ललना, जिअरा में भरा है हुलास सबै लागइ सुन्दर ॥ ६ ॥
(बिजनौर)

आम में बौर लगे हैं; क्या कारण है ? हे आम ! तुम को माली ने सींचा है, इस कारण से बौर लगा है ? या तुम अपने ही प्रभाव से बौरे हो ? ॥ १ ॥

न माली के सींचने से और न अपने ही प्रभाव से मुझमें बौर लगा है। आकाश से जो रिमझिम करके वृष्टि हुई है, उसी की बूँदें पड़ने से बौर लगा है ॥ २ ॥

हे बहू ! होरिल (शिशु) बड़ा सुन्दर है, क्या कारण है ? हे मेरी बहू ! तुमने नारंगी खाई थी, उसके प्रभाव से ? या तुम्हारी कोख से सुन्दर बालक पैदा होता ही है ? ॥ ३ ॥

मैंने नारंगी नहीं खाई थी, और न मेरी कोख के कारण ही ऐसा सुन्दर बालक पैदा हुआ है, बल्कि मैंने सासुजी के पैर छुए थे, उन्हीं के धर्म के प्रभाव से ऐसा सुन्दर बालक पैदा हुआ है ॥ ४ ॥

हे बहू ! चौक बड़ा सुन्दर है। तुम्हारी नाइन (जिसने चौक पूरा था) बड़ी चतुर है ? या आँगन सुन्दर है ? जिससे चौक भी सुन्दर लगता है ॥ ५ ॥

न तो मेरी नाइन ही चतुर है, और न आँगन सुन्दर है, बल्कि मेरे स्वामी ने बहुत तप-व्रत किया था (जिसके प्रभाव से यह पुत्र हुआ है); उन्हीं के धर्म से यह चौक सुन्दर लगता है। और एक कारण यह भी

है कि आज सब के हृदयों में आनन्द भर गया है, इससे सभी चीज़ें सुन्दर लग रही हैं ॥ ३ ॥

इस गीत से बहुओं को दो शिक्षाएँ मिलती है, एक तो सासु के साथ नम्रता पूर्वक व्यवहार करने की और दूसरे पति यदि तप और व्रत करे तो उसके प्रभाव से सुन्दर पुत्र की उत्पत्ति होती है।

अंत की कड़ी में कैसी मनोहर और मनोविज्ञान की बात कही गई है, कि यदि हृदय प्रसन्न है तो संसार की सभी चीजें प्रिय लगती हैं।

[२२]

नजर कई मतल बढ़इया पलँगरीआ ढीली सालइ
पलंगरी ढीली सालई रे ॥
हे हो निंदिआ कै मतल बहुरिया ओवरिआ लै बिछावइ
ओवरिया लै बीछावइ रे ॥ १ ॥
सोने के खरउआँ कवन रामा मथवन मनि बरइ
मथवन मनि बरई रे ।
राजा निहुरी निहुरी झाँकइ ओवरी
निंदरिया नाही आवई ॥ २ ॥
राजा न हो मोरे राजा तुम्ही मोरे राजा ।
राजा, रस देई के बेनिया डोलावा निंदरिआ मोरे आवई ॥ ३ ॥
रानी न हो मोरे रानी तुम्ही मोरी रानी हो ।
रानी एक तौ बाबा के दुलरुवा त मैया के पियारवा रे ।
रानी तीसरे कचेहरी कै जोति, मैं कैसे बेनिया हाँकउँ
चेरिअवा बेनिया हाँकई हो ॥ ४ ॥
राजा न हो मोरे राजा तुम्ही मोरे राजाउ रे ।
राजा एकऊ होरिल जो जनमिहै, तो तुम्ही बेनिया हँकबेउ

तुम्ही से हँकाउब हो ॥ ५ ॥

(बाराबंकी)

आँखो का मतवाला बढ़ई पलग ढीली सालता है। नींद की मतवाली बहू उसे ओबरी (ज़च्चा-घर) मे लेजाकर बिछाती है ॥ १ ॥

अमुक राम, जिनके माथे पर मणि जल रही है, सोने के खडाऊ पर चढ़े हुए झुक-झुककर ओबरी झाकते है, उन्हे नींद नही आती ॥ २ ॥

हे मेरे राजा ! तुम्ही मेरे राजा हो, ज़रा प्रेम से पखी होक दो, तो मुझे नींद आ जाय ॥ ३ ॥

हे मेरी रानी ! तुम्ही मेरी रानी हो। एक तो मै अपने बाप का दुलारा, दूसरे माँ का प्यारा, तीसरे कचहरी की ज्योति, भला मै कैसे पखी होक ? पखी दासी हाकेगी ॥ ४ ॥

हे मेरे राजा ! तुम्ही मेरे राजा हो। एक भी पुत्र मेरे जन्मा तो तुम्ही पखी हाकोगे। मै तुम्ही से हकाऊँगी ॥ ५ ॥

इस गीत मे पति-पत्नी का चुहल वर्णित है।

[२३]

पावा मे पैजनियाँ लाला ठुमुक ठुमुक खेलोगे ॥ १ ॥
अच्छी शुभ घडी वादिन जानूँगी
जादिन लाला मरो दादा-दादी बोलोगे ॥ २ ॥
कै झूले मेरे पालनो, कै दादा की गोद।
अदन चदन को पालनो कै रेशम की डोर ॥ ३ ॥
कृष्ण को पालनो बनवाऊँ,
दादा ने गाढ़ो पालनो दादा ने बँटा दई डोर ॥ ४ ॥
कै झूले मेरो पालनो कै बाबा की गोद ॥ ५ ॥

(मुरादाबाद)

हे मेरे लाल ! तुम्हारे पैरों में पैजनिया है। अब तुम ठुमुक-ठुमुककर खेलोगे ॥ १ ॥

हे मेरे लाल ! मैं उसी को शुभ घड़ी जानूँगी, जिस दिन तुम दादा-दादी बोलेगे ॥ २ ॥

या तो मेरे पालने में झूलो, या दादी की गोद में झूलो ॥ ३ ॥

चन्दन के पालने में रेशम की डोर लगी है ॥ ४ ॥

मैं अपने कृष्ण के लिये पालने बनाऊँगी। दादी ने उसे गढ़ाया है और दादा ने उसके लिये रेशम की डोर बट दी है ॥ ५ ॥

या तो तुम मेरे पालने में झूलो, या दादा की गोद में रहो ॥ ६ ॥

[२४]

चैतहि कै तिथि नवमी तो नौबति बाजई हो।
बाजइ दसरथ राजदुआर कौसिल्ला रानी मंदिर हो ॥ १ ॥
मिलह न सखिया सहेलरी मिलिजुलि चालित हो।
जहाँ राजा के जनमे है राम करिय नेवछावर हो ॥ २ ॥
केउ नावै बाजू औ बन्द केउ कजरावट हो।
केउ नावै दखिनवाँ क चीर करहिं नेवछावरि हो ॥ ३ ॥
भितरों से निकरी कौसिल्ला अँगनवहिं ठाढी भई हो।
रानी धई धई हिरदै लगावै करै नेवछावरि हो ॥ ४ ॥
राम नयन रतनारे कजर भल सोहै हो।
दीन्हों रचि रचि फुआ सुभद्रा तउ पतरी अँगुरियन हो ॥५॥
राम के मथवा लुटुरिया बहुत निक लागै हो।
जैसे फूलन के बिचवा कलिया बहत निक लागै ॥ ६ ॥
राम के गोड़वा घुघुरुवा बहत निक लागै हो।
नान्हे गोडवन चलत बकैयाँ देखत राजा दसरथ ॥ ७ ॥

जौ प मगल गावै गाय सुनावै हो।
सो तौ तुलसी जगत तरि जाय अमर पद पावै हो ॥ ८ ॥
(फैजाबाद)

चैत महीने की नवमी तिथि है, नौबत बज रही है। नौबत राजा दशरथ के द्वार पर और कौशल्या रानी के महल मे बज रही है ॥ १ ॥

हे सखियो ! आओ, सब मिलजुल कर चलें। राजा के राम जन्मे है, उनकी न्योछावर कर आये ॥ २ ॥

किसी ने बाजबंद, किसी ने कजरौटा और किसी ने दखिनी चीर न्योछावर किया ॥ ३ ॥

कौशल्या रानी भीतर से निकली और आँगन मे खडी हुई। वह सब को पकड-पकड कर छाती से लगती है और न्योछावर करती है। अथवा जो न्योछावर करने आई थी, उनका पकड-पकडकर छाती से लगाती है ॥ ४ ॥

राम की रतनारी आखो मे काजल बहुत सुहावना लगता है। फूफी सुभद्रा ने उसे अपनी पतली उगलियो से बहुत बनाकर लगाया है ॥ ५ ॥

राम के माथे पर छोटी-छोटी लटे बहुत खिलती है, जैसे फूलो के बीच मे कलियाँ सुन्दर लगती है ॥ ६ ॥

राम के पैर मे घु घरू बहुत सुन्दर लगते है। राम नन्हे-नन्हे पैरो से 'बकैयाँ' (घुटनो के बल) चलते है। राजा दशरथ देख रहे है ॥ ७ ॥

जो यह मगल गीत गायेगे या गाकर सुनायेंगे, तुलसीदास कहते है, वे लोग ससार को पार कर जायेंगे और अच्छी गति पायेगे ॥ ८ ॥

'राजा दशरथ देख रहे है' इस कड़ी मे प्रत्येक पुत्रवान् पिता के हृदय का सुख भरा हुआ है।

———

[२५]

राम चले ससुररिया सीतल देइ के नैहर।
उमडे जनकपुर के लोग राम के देखन ॥१॥
मचियहि बैठी कौसिल्ला रानी सिंहासन राजा दसरथ।
राम बहुत दिन लागे निनरिया न लागै ॥२॥
हँसि हँसि चिठिया पठायेन बिहंसि ओरहन दीहेनि।
मोरे राम, के तौहै राखेन बेलम्हाई निनरिया न लागै ॥३॥
हँसि हँसि चिठिया क बाचेन बिहँसि ओरहन लिहेन।
राम भोरे बिदा होइ जाब ओरहन अब पावा ॥४॥
साझेनि घोड़वा मलायेन रथ तैयारेन।
राम निहुरि निहुरि माथ नवायेन घरे हम जाबइ ॥५॥
लागि झरोखवाँ सीतल रानी नैनन अँसुवा झारै।
राम मोह माया सब छोडौ घरहिं सिधारौ ॥६॥
अगिली के रथ पर राम पिछली पर लछिमन।
बिचली प सीतल रानी तानिउ घर आयेन ॥७॥

राम ससुराल को चले, जहां सीतादेवी का नैहर है। राम को देखने के लिये जनकपुर के लोग उमड पडे ॥१॥

मचिये पर कौशल्या रानी और सिहासन पर राजा दशरथ बैठे है। कौशल्या ने कहा—हे राजा! राम ने ससुराल मे बहुत दिन लगाया, नीद नही आती ॥२॥

राजा ने हँसकर चिट्ठी भेजी और मुसकुराकर उलहना भेजा कि हे मेरे राम! किसने तुमको बिलमा रक्खा है? तुम्हारे बिना हमे नीद नही आती ॥३॥

राम ने हसकर चिट्ठी पढ़ी और मुसकुराकर उलहना लिया। उन्होने निश्चय किया कि सबेरे विदा हो जायँगे, क्योकि उलहना मिला है ॥४॥

राम ने शाम को घोडा मलाया, और रथ तैयार कराया। राम ने सब को झुक-झुककर सिर नवाया और कहा—हम अब घर जायेंगे ॥५॥

सीता-रानी झरोखे पर खड़ी है। उनकी आंखो मे आंसू झड रहे है। वह कहने लगी—हे राम ! अब यहाँ का मोह छोडो और घर चलो ॥६॥

आगे के रथ पर राम है, पीछे के रथ पर लक्ष्मण और बीच के रथ पर सीता रानी है ॥७॥

ससुराल मे जाकर और सास-ससुर और नैहर मे मौजूद पत्नी के स्नेह का सुख पाकर पति का अपने घर को भूल जाना स्वाभाविक है। पर माता पिता का प्रेम-पूर्ण उलहना पाकर वह घर लौटने की जो उतावली करता है, उसमे माता-पिता के लिये उसके हृदय का प्रेम और आदर-भाव भी दर्शनीय है।

[२६]

छापक पेड छिउलिया तौ पतवन गहवर।
अरे रामा तिहि तर ठाढी हरिनियाँ
त मन अति अनमनि हो ॥ १ ॥
चरतइ चरत हरिनवाँ तौ हरिनी से पूँछइ हो।
हरिनी की तोर चरहा झुरान
कि पानी बिन मुरझिउ हो ॥ २ ॥
नाहीं मोर चरहा झुरान न पानी बिन मुरझिउँ हो।
हरिना आजु राजाजी के छट्टी
तुम्है मारि डरिहइँ हो ॥ ३ ॥
मचियै बैठी कौसिल्ला रानी हरिनी अरज करइ हो।

रानी ममुवा तो मिझहीं रसोइयाँ
ग्वलरिया हमै देतिउ ॥ ४ ॥
पेडवा मे टँगवइ ग्वलरिया त मन ममुझाउब हो।
रानी हेरि फेरि देखबइ ग्वलरिया
जनुक हरिना जीतइ हो ॥ ५ ॥
जाहु हरिनी घर अपने ग्वलरिया नाहीं देबइ हा।
हरिनी ! ग्वलरी क खँजडी मिढउबइ
त राम मोर खेलिहइँ हो ॥ ६ ॥
जब जब बाजइ खँजडिया सबद सुनि अनकइ हो।
हरिनी ठाढि ढकुलिया के नीचे
हरिन क बिसरइ हो ॥ ७ ॥
(सुलतानपुर)

ढाक का एक छोटा-सा, घने पत्तोवाला पेड है, जो खूब लह-लहा रहा है। उसके नीचे हरिनी खडी है। उसका मन बहुत बचैन है ॥१॥

चरते-चरते हरिन ने हरिनी से पूछा—हे हरिनी ! तू उदास क्यो है ? क्या तेरा चरागाह सूख गया है ? या तेरा मन पानी की कमी से मुरझा गया है ? ॥२॥

हरिनी ने कहा—हे प्रियतम ! न मेरा चरागाह ही सूखा है और न पानी ही की कमी है। बात यह है कि आज राजा के पुत्र की छट्ठी है। आज तुम मारे जाओगे ॥३॥

रानी कौशल्या मचिये पर बैठी है। हरिनी ने उनसे विनती की—हे रानी ! हरिन का मास तो आपकी रसोई मे सीझ रहा है, हरिन का खाल आप मुझे दिलवा दीजिये ॥४॥

मैं खाल को पेड़ से टोग दूँगी। बार-बार मै उसे देखूँगी और मन को समझाऊँगी, मानो हरिन जीता ही है ॥५॥

कौशल्या ने कहा—हरिनी ! तुम घर लौट जाओ। खाल नहीं मिलेगी। इस खाल की तो खँजडी बनेगी और मेरे राम उसे बजायेंगे ॥६॥

जब-जब खँजडी बजती थी, तब-तब हरिनी उसके शब्द को कान लगाकर सुनती और उसी ढाक के पेड के नीचे खडी होकर अपने हरिन को बिसरा करती थी ॥७॥

जिस स्त्री ने इस गीत की रचना की है, उसका हृदय प्रेम के मर्म से अच्छी तरह परिचित जान पडता है। पशुओं में भी वह उसी प्रेम का अनुभव करती है।

'बिसूरइ' शब्द की मिठास देहातवाले ही समझ सकेंगे।

[२५]

सोभवाँ बइठल सीरीकृष्ण दूतीअ लइया लावेले हो।
राजा, रउरे महल दुई नारी झगरा नाही सुनीले हो ॥१॥
सोभवाँ से उठे सीरीकृष्ण त राधा के महल गईली हो।
रानी कवन करेलु तकसीर रुकुमीनी गरीआवेली हो ॥२॥
एतना बचन राधे सुनली त सुन ही न पवेली हो।
सखीया आव चली ओनकी महलीया,
ओरहन देई आईय हो ॥३॥
अंगना बटोरति चेरीया त अवरी लऊँडीया न हो।
रानी अवती बाटी राधा सवतिया,
त रउरे महल बीच हो ॥४॥
कोने से कदम पलँगीया, राधा के बइठावहु हो।
चेरीया झापा से काढ़ि चुनरीया राधा पहिरावहु हो ॥५॥
नउजीके काढ पलँगिया त हम नाही बइठब हो।

सखीया नउजीके काढ़ चुनरिया त हम नाही पहिरब हो।
सखीया का हो करेलु तकसीर हमही गरीआवेली हो ॥६॥
कवन दुतीया लईया लावेले झगडा मचावेले हो।
बहीनी ऊनकर नावँ जो बतवतू
लाते लतीआईब झोंटा झोटीलाईब हो ॥७॥
कृष्ण दुती लईया लावेले झगडा मचावेले हो।
बहिनी उनहीं कै नाम सुनि पवलुँ
लाते लर्ताआव, चुरुकीया उग्वारहु हो ॥८॥
अहीरा ही के रे बिटिया, त बछरू चरावेलु हो,
राधा कृष्ण करै भँडुवइया त बोलेलु बराबर हो ॥९॥
भीखम के री बीटीया, त बोलेलु बराबर हो।
बार कुवारे ले अइले सिरीकृष्ण त बोलेलु बराबर हो ॥१०॥

(गार्जापुर)

श्रीकृष्ण सभा मे बैठे है। दूती ने कहा—हे राजा ! आपके महल मे दो स्त्रियाँ है, लेकिन उनमे झगडा होते नही सुना ॥ १ ॥

सभा से उठकर श्रीकृष्ण ने राधा के महल मे जाकर कहा—हे रानी ! तुमसे क्या अपराध होगया ? रुक्मिणी गाली दे रही हैं ॥ २ ॥

इतना सुनते ही, अच्छी तरह सुने बिना ही, राधा ने सखियो से कहा—सखियो ! ज़रा चलो तो, 'उनके' महल मे उलहना दे आयें ॥ ३ ॥

दासी आँगन बुहार रही थी। उसने कहा—हे रानी रुक्मिणी ! राधा सौत आपके महल मे आ रही हैं ॥ ४ ॥

रानी रुक्मिणी ने कहा—हे दासी ! कोने मे कदम्ब की लकडी का बना हुआ पलँग उठा लाओ। राधा रानी को बैठाओ। पेटारे मे से चूनरी निकाल लाओ और राधा रानी को पहनाओ ॥ ५ ॥

राधा ने कहा—हे सखी ! पलँग न निकलवाओ, मै बैठूँगी नहीं। और चूनरी भी न मँगाओ, मै पहनूँगी नही। हे सखी ! मैंने क्या कुसूर किया ? मुझे गाली क्यो देती हो ॥ ६ ॥

रुक्मिणी ने कहा—किस कुटनी ने यह झगड़ा लगाया है ? हे बहन ! उसका नाम तो बताओ। मै उसे लात से लतियाऊँगी और झोटा पकडकर झोटियाऊँगी ॥ ७ ॥

राधा ने कहा—श्रीकृष्ण ही इधर की उधर लगाते है। उन्हीं का नाम सुनती हूँ। अब उन्हे चाहे लतियाओ, चाहे उनकी चोटी उखाड लो ॥ ८ ॥

रुक्मिणी ने कहा—अहीर की बिटिया हो, बछडे चराया करती थी, इसी से अक्ल कम है। भला, कही श्रीकृष्ण चुगुली खा सकते है ? और तुम मेरे मुंह पर बोल रही हो ? ॥ ९ ॥

राधा ने कहा—तुम भी तो भीष्म की बेटी हो। कुँवारी थी, तभी तुम्हे श्रीकृष्ण उडा लाये। तुम मेरी बराबरी क्या करती हो? ॥१०॥

रुक्मिणी ने राधा का स्वागत करने मे हृदय की स्वच्छता तो बहुत दिखलाई, पर अत मे दोनो मे झगडा होकर ही रहा। इसी तरह कुटुम्ब की स्त्रियो मे केवल शक पर कलह होता रहता है और यह गीत उसका एक रोचक उदाहरण है। श्रीकृष्ण का नाम आ जाने से गीत मे रोचकता बढ़ गई है।

[२८]

सुतल रहलों अटरिया, सपन एक देखीले हो।
सासु सपन देखीले अजगूत सपन बड़ सुन्दर हो ॥१॥
धनवाँ त देखीले टुँड़ारल मनवाँ ढेमारल हो।
सासु गजहाथी ठाढ़ी दुअरवाँ, चढ़ल राजा दसरथ हो ॥२॥

गंगा त देखी ले हलोरत सरजू डफोरत हो।
सासु तिरवेनी पईठी नहालों त कोरवाँ गजाधर हो ॥३॥
धनवाँ त हवै तोर धनवा मनवाँ सततौ तोर हो।
बहुवरि गजहाथी ठाढ दुअरवाँ चढल परमेसर हो ॥४॥
गगा त हइ तोरी माता त सरजू बहीनी तोरी हो।
तिरवेनी भउजी तोहारी त कोरवाँ भतीज ले ले हो ॥५॥

(गोरखपुर)

अटा पर सोई हुई थी, कि मैंने एक सपना देखा। बडा अदभुत सपना था और बडा ही सुन्दर था ॥१॥

मैंने धान मे ट्रेंड निकला हुआ देखा, कपास मे डोडियाँ लगी हुई देखी! दरवाज़े पर हाथी खडा देखा, जिस पर राजा दशरथ सवार थे ॥२॥

गगाजी मे लहरे उठ रही थी, सरजू मे बाढ आई थी, त्रिवेणी पैठकर नहा रही थी, उनकी गोद मे गजाधर थे ॥३॥

हे बहू! धान तो तुम्हारा धन है। कपास तुम्हारी सतति है। हाथी पर सवार भगवान है। गगा तुम्हारी माँ, सरजू तुम्हारी बहन और त्रिवेणी तुम्हारी भावज है। वह गोद मे तुम्हारे भतीजे को लिये हुये है ॥४॥

अर्थात बहू के भाई के पुत्र होनेवाला है।

[२६]

कोपभवन राजा दसरथ सुरज मनावै आदित मनावैन हो।
आदित आजु तु भोर मति होहु त राम मोर न जागै
त राम भोर जागै न हो ॥१॥
जो आदित भोर होइहै अवर राम जगि है न हो।
सुरुजु राम बने चली जईहै त हम कैसे जाअब हो ॥२॥

सारी रात राम राम रटले त राम के बीरह मे न हो।
ललना भोर भईल भीनुसार त मीरुग बना बोलैला हो ॥३॥
ई सब हाल राम सुनले अउर राम सुनले न हो।
राम ठाढ़े है राजा के सामने त माता से पुछैले हो।
माता पिता बेदन मोही बताव कवने तरह कर हो ॥४॥
पिता बेदन बाबु ईहै तु बन बीच बीचरहु
बन बीच बीचरहु हो।
बाबू भरथ के राजसीगासन ईहवै बेदन हवै हो ॥५॥
बलकल बसन लपेटी त साथ सीता लछिमन हो।
राम माता चरन धरै माथ त बन क सीधारैल हो ॥६॥
ईन्द्र छोडै ईन्द्रासन ब्रह्मा छोडै आसन हो।
माता बाप क बचन न छूटइ बचन हम राखब हो ॥७॥
(बनारस)

कोप-भवन मे राजा दशरथ सूर्य को मना रहे है। हे सूर्य! आज सबेरा मत करो, मेरे राम जागने न पायें ॥१॥

हे आदित्य! सबेरा हो जायगा, राम जग जायेंगे और बन को चले जायेंगे, तो मै कैसे जीऊँगा? ॥२॥

राम के विरह मे राजा दशरथ रात भर राम-राम रटते रहे। सबेरा आ और मुर्गा बोला ॥३॥

राम ने सब हाल सुना। वे राजा के सामने आये। माता से उन्होने कहा—हे माता! पिता को किस तरह का कष्ट है? मुझे बताओ ॥४॥

हे बेटा! तुम्हारे पिता को यह कष्ट है कि तुम तो वन मे जाकर रहो और भरत राज-सिहासन पर बैठेगे ॥५॥

राम ने वल्कल वस्त्र पहन लिया और सीता और लक्ष्मण को साथ ले लिया। माता के चरणो पर सिर नवाकर वे वन को चले गये ॥६॥

राम ने कहा—इन्द्र अपना इन्द्रासन छोड़ दें और ब्रह्मा अपना ब्रह्मासन, लेकिन पिता का वचन न छूटे, मैं पिता का वचन रक्खूँगा ॥७॥

पुत्र के लिये हिंदू-समाज में राम का आदर्श अद्वितीय है। घर-घर में राम-जैसे पितृ-भक्त पुत्र हों, हरएक गृहस्थ यही चाहता है। गीत में यही भाव प्रकट किया गया है :

[३८]

पिया बइठन के मचिया गढावहु हो
पिया पौढन के रँगपलँग मे देह भरुआइल हो ॥ १ ॥
पिया हुन हुन आवैलें पीर त केहिके जगाउब हो।
मासु त सुतै अटरिया ननद पटमरिया हो,
सइयाँ आप सुतै रँगमहलिया मे केहिके जगाउब हो ॥ २ ॥
मासु उठै बारैं त दियना ननद लेवै हँसिया हो
प्रभु आपु चले धगरिन बोलावन
मे होरिला जनम लेहले हो ॥ ३ ॥
मासु पिपर क झार अकमाइन अरु भकमाइन हो।
मासु हम न पिअब पिपरिया,
पिपरिया भकमावै हो ॥ ४ ॥
इतना बचन राजा सुनलै सुनहु न पवलै हो।
राजा चाढ भइले घोड़े असवार
सवति हम आनब हो ॥ ५ ॥
सइयाँ पिपर क झार हम सहबै सवति नाही सहबै हो।
सइयाँ जनि लावहु सवति छाती ऊपर
पीपरि पीअब हो ॥ ६ ॥

(बस्ती)

हे प्रियतम ! बैठने के लिये मचिया गढ़ाओ, और पौढ़ने के लिये रंगीन पलँग बनवाओ, देह भारी होने लगी ॥ १ ॥

हे प्रियतम ! रह-रहकर पीर उठती है, किसको जगाऊँगी ? सास तो अटा पर सोती है, ननद पटसार मे सोती है, आप रंगमहल मे सोते है, मै किसको जगाऊँगी ? ॥ २ ॥

सास उठीं, दिया जलाया । ननद ने हँसिया ली । स्वामी धगरिन बुलाने चले । होरिल ने जन्म लिया है ॥ ३ ॥

हे सास ! पीपल (औषधि) की झार बडी कड़वी लगती है । मै पीपल नही पीऊंगी ॥ ४ ॥

राजा (पति) ने इतना सुना । अच्छी तरह वे सुन भी नहीं पाये कि झटपट घोडे पर सवार होगये और बोले कि हम सौत लायेंगे ॥ ५ ॥

हे स्वामी ! मै पीपल की झार सह लूँगी, सौत मुझसे न सही जायगी । मेरी छाती पर सौत मत लाओ, मै पीपल पी लूँगी ॥ ६ ॥

ज़च्चा को पहले-पहल कैसी-कैसी चिन्ताये होती है और वह कितना ठनगन करती है, इस गीत मे उसीका चित्र है । साथ ही सौत से उसे घृणा भी कितनी है कि सौत के बदले वह पीपल की झार का कष्ट सहने को तैयार हो जाती है ।

बच्चा होने के बाद पीपल, सोठ आदि कुछ दवाये ज़च्चा को दी जाती है ।

[३१]

हनि हनि काटिन खम्बा औ करतुलिया बाँस ।
जाइ हिंडोलवा गड़ाइन गगा जमुन बालू रेत ।
एक पर राधा रुकमिनि एक पर झूले कृष्ण अकेल ॥ १ ॥
पान खाइन पिच डारिन पर गइ चदरिया मे दाग ।
चलहु न सखिया सहेलरि चिरवा धोवन हम जायँ ॥ २ ॥

चीर धोइ भुइयाँ डारिन लै गये कृष्ण उठाय।
कृष्ण दे डालो चीर हम जल माँझ उघारि॥ ३॥
ह्वै जावै जल माछरि जलवा डराइ हम लेव।
जो तू जलवा डरैबा तो हम बन कोइल होब॥ ४॥
तो तुम होबो बन कोइल लसवा लगाइ हम देब।
जो तू लसवा लगैबो तो हम बन घुँघची होब॥ ५॥
जो तुम होबो बन घुँघची अगिया लगाय हम देब।
जब तुम अगिया लगैबो आधा जरब आधा लाल॥ ६॥
(लखनऊ)

सभा और करतुलिया (?) बाँस काट काटकर गंगा और यमुना की रेती पर हिंडोले गाड़े गये। एक हिंडोले पर राधा और रुक्मिणी झूलने लगी, और दूसरे पर श्रीकृष्ण अकेले॥ १॥

श्री कृष्ण ने पान खाकर पीक कर दिया, जिससे उन की चादरों पर दाग पड़ गये॥ २॥

हे सखी-सहेलियो! चलो न, हम चीर धोने जायेंगी॥ ३॥

चीर धोकर उन्होंने जमीन पर फैला दिया। श्रीकृष्ण उठा ले गये। हे कृष्ण! चीर दे दो, जल में हम उघाड़ी खड़ी हैं॥ ४॥

हम जल में मछली हो जायेंगी। श्री कृष्ण ने कहा—तो हम जाल डलवाकर पकड़ लेंगे। उन्होंने कहा—तुम जाल डलवाओगे, तो हम बन की कोयल हो जायेंगी॥ ४॥

तुम कोयल हो जाओगी, तो मैं लासा लगाकर पकड़ लूँगा।

तुम लासा लगाओगे तो हम घुँघची बन जायेंगी॥ ५॥

तुम घुँघची बन जाओगी, तो हम बन में आग लगा देंगे।

तुम आग लगा दोगे, तो हम आधी जलकर आधी लाल हो जायेंगी॥ ६॥

इस गीत में प्रेमी-प्रेमिका का परस्पर हास-परिहास है। घुँघची बनना बताकर प्रेमिका ने यह भाव प्रकट किया है कि आधे में वह श्री-कृष्ण का श्याम रूप रक्खेगी और आधे में अपना अरुण वर्ण।

[३२]

अगना चदन बडो रूख, चपे की है डार,
मोर गढाओ पालकी।
घुँघरू गढ लावो मेरे लाल को बाजनी ॥ १ ॥
मिचवा हो पिय भँवर सलोने सैया भँवर घमाओ।
पाटिन चमके आरसी ॥ २ ॥
भरी तो हो पिय रेशम, सलोने सैयाँ, रेशम बान
अदवाइन पखट्टन की, डाँमी अहो फूलन भरी सेज ॥ ३ ॥
आलमाई है गदुआ, वा पर पौढे है रजवा,
डोलै सुहागिन बीजनी ॥ ४ ॥
बिजनी डुलत हँस बूझी, काहे की धना साधली ॥
मोहि खिचडी की बलम खिचडी की है साध,
औसर खिचडी चाहिये ॥ ५ ॥
खिचडी तो अपने बबुल पर, अपने बिरन पर माँग,
हम पर मेवा माँग ले ॥ ६ ॥
बबुल बसै परदेस और रजन के देस,
बीरन बारे बेदने ॥ ७ ॥
घुँघरू गढ लाव मेरे लाल को बाजनी ॥ ८ ॥
भौज तो हमरी पूरब की, खिचरी को मरम न जाने।
पानी वही जमुना को और गँगाजल लाव,
चरुआ छैल कुम्हार को ॥ ९ ॥

गुड़ तो गँडेरी ऊपजै, सोठ वही सतुआ की
बलम सतुआ लाव ॥ १० ॥
पीपरामूर गठीली, अजवाइन हो अजपुर की।
जीरो किरैयन ऊपजै, हल्दी हरदोई से लाव ॥ ११ ॥
बायबिरंग दुरदुरी, पीपर हो सुग्व पीपर लाव।
सुपारी वही रूठा की लाव, खैर ले आओ पापरी।
पान वही महुबे के चूना लाव मोतीचूर के,
चावल वही झिनवा के, दाल हरी हरी मूँग की।
घी तो वही कपिला को लाव ॥ १२ ॥
एक पियरो, दूजे मँहगनो तेल वही सरसो को
एक पियरो दूजे चरपरो ॥ १३ ॥
सोने के पिय करहा मँगाव, रतन जड़ाऊ करछुली।
परसौ वही सोने के थार, रूपे के कटोरा मे घी धरौ ॥१४॥
सोने को पिय कठुला गढ़ाव रतन जडाऊ
कि पैजना ॥ १५ ॥
बारह मन की खौर भराव तेरह मन को गेदुआ
होरिल को पिय धाय लगाव ॥ १६ ॥
हम तुम बलजुग ना नये, ऊच मे पिय होल धराव,
जो रे सुनै मरी मायका ॥ १७ ॥
जो सुनि है मेरी माय, बैलन खिचरी भराय,
बकचन पियरी भराय।
ऊपर गागर घिरत की, ऊपर लड्डू सोंठ के,
कुरता टोपी रेशमी, रतन जडाऊ कि पैजना ॥ १८ ॥
बैठी है तरन बिछाय, पछ आछो है नगा बापको।

पिछवारे हो पिय हौद खुदाव, बैरी दुश्मन गिर पड़े,
जाहि न सुहाय सोई गिर पड़े।
घुँघरू गढ लाव मेरे लाल को बाजनी ॥ १६ ॥
(अलीगढ)

आँगन मे चदन का पेड है, चपे की डाल है, पलँग गढाओ। मेरे लाल के लिये बजनेवाले घुँघरू गढ लाओ ॥ १ ॥

जिसके पाये सुन्दर काले-काले हो, जिसकी पाटी दर्पण की तरह चमकती हो ॥ २ ॥

जो रेशम के बाध से बुनी हो, जिसमे मखतूल की उरदावन लगी हो और उस पर फूलो की सेज बिछी हो ॥ ३ ॥

उस पर तकिये पडे हो, राजा (पति) उस पर लेटे हो, सुहागिन पखा झल रही हो ॥ ४ ॥

पति ने पखा झलते समय पूछा—हे धन ! तुमको किस चीज की साध है ? हे प्रियतम ! मुझे खिचडी खाने की साध है, अभी खिचडी चाहिये ॥ ५ ॥

खिचड़ी तो अपने पिता और भाई से माँग, मुझसे तो मेवा माँग ले ॥ ६ ॥

पिता तो परदेश मे, राजा के देश मे बसते है, भाई बहुत छोटे हैं ॥ ७ ॥

भावज पूर्व की है, खिचडी का मर्म जानती ही नही मेरे लाल के लिये घु घरू गढ़ लाओ ॥ ८ ॥

जमना का पानी और गगा का जल लाओ। और कुम्हार का घडा ॥ ९ ॥

गुड तो गन्ने से पैदा होता है, और सोठ और सतुआ लाओ ॥ १० ॥

गाँठदार पीपरामूल, अजपुर की अजवाइन तथा जीरा जो क्यारियो

मे पैदा होता है और हरदोई की हल्दी लाओ ॥ ११ ॥

हरदुरी बायभिडग और सुख देने वाली पीपल लाओ। सुपारी, खैर, महोवे का पान, मोती का चना, झीने चावल, हरी मूँग की दाल और कपिला गाय का घी लाओ ॥ १२ ॥

सरसो का पीला, महँगा और चरपरा तेल लाओ ॥ १३ ॥

प्रियतम ! सोने की कढाही और रत्न जडी कलछुल मँगाओ। सोने के थाल मे भोजन परसो और चादी के कटोरे मे घी रक्खो ॥ १४ ॥

हे प्रियतम ! सोने का कठा और रत्न-जडी पैजनी गढाओ ॥ १५ ॥ बारह मन का गद्दा और तेरह मन का तकिया भराओ। होरिल के लिये धाय लगाओ ॥ १६ ॥

हम तुम आनन्द मनाये। ऊँचे से ढोल बजवाओ, जिससे मेर नैहर वाले सुनें ॥ १७ ॥

मेरी माँ सुनेगी तो बैलो पर खिचडी भरकर, बकुचा-भर पीयरी, उस पर घी का गागर, उसपर सोठ के लड्डु, रशमी कुरत-टोपी और रत्न-जडे पैंजना भेजेगी ॥ १८ ॥

बहू तख्त बिछाकर बैठी है। बाप का भेजा हुआ पछ (सामान, जो बच्चा पैदा होने पर नैहर से आता है) आया है। हे प्रियतम ! पिछवाडे कुआ खुदा दो, जिसमे बैरी गिर पडे और मेरा सुख जिसे न सुहाये, वह गिर पडे।

मेरे लाल के लिए बजने वाले घुँघरू गढ़ लाओ ॥ १९ ॥

बच्चा पैदा होने पर घर-गिरस्ती मे पति-पत्नी के बीच बड़ी चहल-पहल पैदा हो जाती है। इस गीत मे ज़च्चा के लिये स्वास्थ्यकर खाने पीने की चीज़ो के नाम गिनाये गये है और बच्चो को सजाने क लिये उसकी माँ की उत्सुकता बताई गई है।

[३३]

के मोरे नौरँगीया लगावै तो थल्हवा बन्हावै।
के रे नौरँगी रखवार त के मोरे चोरी करै ॥ १ ॥
बाबा मोरा थल्हवा बन्हावै नौरंगीया लगावै।
सग्वा भईया मोरा बैठे रखवार तो सैयाँ मोरा चोरी करै ॥ २ ॥
बोलीया हो एक राजा बोलोहुँ जौ बोल मानौ हो।
राजा मोरे नौरंगीया कै साधि नौरंगीया लेही आवौ ॥ ३ ॥
बोलायहु तो धन बोलिह बोल तो सोहावन।
धन नौरंगीया बैठल रखवार नौरंगी कैसे पावौ ॥ ४ ॥
कुकुरा के देवै पिया दूध भात पहरू के तिलवा।
पाया हाली बेगा डरीया ओनायो रुमाल भरी तोरयो हो ॥ ५ ॥
हाली बेगी डरीया बोनौले रुमाल भरी तोरले हो।
सग्वा जागी परल रखवार पेंड धई बान्हल ॥ ६ ॥
सास तो बोलही क रहेली ननँद उठि बौलै हो।
भौजी जिभीया तु रखतिउ नावार भईया मोरा बान्हल ॥ ७ ॥
खिरकी से बोललीं जच्चारानी अपनेउ भैया सग।
भैया चोरवा अलफ सुकुवार ढालही बान्हा बान्हौ ॥ ८ ॥
जौ मै जनतौं ए बहीनी ये घर हीं कै चोरवा।
बहीनी सोनवा कै हरवा गढ़वतौं बहनोइया गले डलतौं ॥ ९ ॥
आवहु मोरे बहनोईया पलँग चढि बैठो।
बगीचा कै लेहु रखवारी नौरंगी फल चाखो ॥ १० ॥
(गोडा)

किसने नारंगी का पेड लगाया है ? किसने थाला बँधाया है ? कौन रखवाला है ? और कौन नारंगी चुराता है ? ॥ १ ॥

बाबा (बाप) ने नारंगी का पेड लगाया, और थाला बँधाया। हे

सखी ! मेरा भाई रखवाली पर बैठा है और बहनोई नारंगी की चारी करता है ॥ २ ॥

हे राजा ! एक बात कहती हूँ, जो तुम मानो। मेरा जी नारंगी खाने को ललचाया है, कहीं से नारंगी ला दो ॥ ३ ॥

हे रानी ! तुम्हारी बात मुझे बड़ी सुहावनी लगती है। लेकिन नारंगी पर रखवाला बैठा है, नारंगी कैसे मिलेगी ? ॥ ४ ॥

हे प्रियतम ! कुत्ते को मैं दूध-भात और पहरेदार को तिलवा (तिल का लड्डू) दूँगी। जल्दी डाल झुकाकर, रुमाल भरकर नारंगी तोड़ लेना ॥ ५ ॥

पति ने जल्दी डाल झुकाकर, रुमाल भरकर नारंगी तोड़ ली। हे सखी ! इतने में रखवाला जग पड़ा और उसने चोर को पकड़कर पेड़ से बाँध दिया ॥ ६ ॥

सास तो बोलने भी न पाई कि ननद उठकर कहने लगी—हे भौजी ! जीभ को काबू में रक्खा न ? मेरा भाई बाँधा गया है ॥ ७ ॥

खिड़की खोलकर जच्चा रानी ने अपने भाई से कहा—हे भैया ! चोर अभी छोटी उम्र का सुकुमार है, कसकर न बाँधना ॥ ८ ॥

हे बहन ! जो मैं जानता कि घर ही का चोर है, तो सोने का हार गढ़वाकर बहनोई के गले में डालता ॥ ९ ॥

हे मेरे बहनोई ! आओ, पलँग पर चढ़कर बैठो। अब तुम बाग की रखवाली लो और नारंगी का फल चखो ॥ १० ॥

इस गीत में एक मनोहर रूपक है। नारंगी से अभिप्राय विवाह-योग्य कन्या से है। बहनोई उसे प्राप्त करने जाता है। कन्या का भाई उसे विवाह के बंधन में बाँधकर नारंगी का बाग ही उसे सौंप देता है कन्या का मज़ाक भी बड़ा सरस है।

इसमें यह भी बताया गया है कि किस प्रकार जच्चा की इच्छा की पूर्ति के लिए पति को उत्सुकता होती है।

[३४]

राजा काहे तोरा मुहवा उदासल से हमसे बतावहु ना।
राजा केही सोच देह दुबराइल मुँह भइल पीअर ना।
राजा सासु ननद कुछ कहली की केहू से कुछ अनबन हो ॥१॥
रानी माई बहिन ना कुछ कहली न केहू से अनबन हो।
रानी मोगल बजाज क रुपयवा त उहवै मागै ना ॥२॥
झमकि के रानी उठी बोलै त काहे तू उदासल हो।
अग का गहना उतारि पेटारी काढि फेकै ना ॥३॥
राजा लइ जाहु देई देहु मोगल बजजवा रुपयवा ना।
रानी यही सोच हम तौ उदासल
कइसे तोही नगो राखउँ ना ॥४॥
राजा गहना कपडा नाही साधि न एकौ मोही भावै हो।
राजा तोहार मुँह रही हरीअर त बिन गहनै सोभव हो ॥

(बनारस)

हे राजा! तुम्हारा मुँह उदास क्यों है? मुझे बताओ न? हे राजा! कौन-सी चिंता है, जिससे तुम्हारी देह दुर्बल होगई और मुँह पीला पड गया है? हे राजा! सास-ननद ने कुछ कहा है? या किसीसे अनबन होगई है? ॥१॥

हे रानी! न माँ ने कुछ कहा, न बहन ने, और न किसीसे अनबन ही हुई। हे रानी! मुगल बजाज अपना रुपया माँगता है ॥२॥

रानी उठ खडी हुई और बोली—तो तुम उदास क्यों हो? उसने शरीर पर से उतारकर और पेटारी से निकालकर गहने उसके सामने फेंक दिये ॥३॥

हे राजा ! ले जाओ, मुगल बजाज को रुपया दे दो।

हे रानी ! मैं तो इसी साच से उदास था कि तुमको नगी कैसे रक्खूँगा ? ॥४॥

हे राजा ! गहने और कपडे की मुझे साध नही है। तुम्हारा मुँह प्रफुल्लित रहे, तो मैं बिना गहने ही के सुन्दर लगूँगी ॥५॥

पत्नी न अपने पति की चिता मे हिस्सा लेकर गृहस्थो के सामने बडा सुन्दर आदर्श रक्खा है। पति-पत्नी के इसी तरह के परस्पर के सहयोग से गृहस्थी मे सुख और समृद्धि की वृद्धि होती है।

[३५]

धीरे धीरे बैठ ननद भवज मुख धोवैही ॥
भवज जो जाओ नदलाल कँगनवा मै तो लै लऊँगी ॥१॥
साँझ हुई भय फाटी ओ हो ! भय फाटा।
अजो होय पडे नदलाल कँगनवा मै तो लै लऊँगी ॥२॥
यह तो मेरे वीर ने घडवाया मेरे बाबल ने घडाया।
मेरी मैया ने पिन्हाया कँगनवा कैसे दै दऊगी ॥३॥
कचहरी बैठे ससुरे वह आँगन मै ठाढे पुकारै
बहुवल देदो हाथो के कँगनवा धीयल परदेसन ये ॥४॥
जूवा खिलन्ते राजा आँगन मे ठाढे।
धना दे दो हाथों के कँगनवा बहन परदेसन ये ॥५॥
कहाँ तुमने हाथो गड़ाये कहाँ मोल लिवाये।
परदेसी वीरन के कँगनवा मै कैसे दै दऊँगी ॥६॥
ला मेरे मैले से कपडे मैले से कपडे।
अजुध्या मे माँगूँगा भोग्य कँगनवा गडवाय दऊँगा ॥७॥
ला मेरी सोने की सराई, मेरी सोने की सराई

काटूँगी कँगनवा की कील फेर न बुलाऊँगी ॥८॥
(बुलन्दशहर)

पास-पास बैठकर ननद और भावज मुँह धो रही है। हे भावज! रे पुत्र होगा, तो मैं कगन ले लूँगी ॥१॥

शाम हुई। रात बीती। पौ फटी। ओहो! पौ फटी। वाह वा! हुआ। मैं तुम्हारा कगन ले लूँगी ॥२॥

इसे तो मेरे भाई ने गढवाया था, पिता ने गटाया था, और माँ ने लाया था, मैं कगन कैसे दे दूँगी? ॥३॥

कचहरी में बैठे हुये ससुर आँगन में आकर खडे होकर कहने लगे—हूँ! हाथ का कगन दे दो, बेटी परदेसिन है ॥४॥

जुआ खेलते हुये राजा (पति) आगन में आकर कहने लगे—हूँ! कगन दे दो, बहन परदेसिन है ॥५॥

पत्नी ने कहा—तुम अपने हाथों से गटाये हो? या खरीदकर लाये? परदेश गये हुए भाई का दिया हुआ कगन मैं कैसे दे दूँ ॥६॥

पति ने कहा—ला मेरे मैले-कुचैले कपडे धो ला। मैं अयोध्या में हर भीख माँगूँगा और कगन गढवा दूँगा ॥७॥

बहू ने कहा—ला, मेरी सोने की सलाई तो ला, कगन की कील डालूँ। मैं ननद को फिर न बुलाऊँगी ॥८॥

यह सोहर चमार के घर का है। चमारिनें बडा रस ले-लेकर इसे गाती हैं।

[३६]

जेठ बैसाखवा क दिना त गरमी बहुत होला हो।
राजा बाहर कोठवा उठवतो दुनोही जाना रहतीन हो ॥१॥
बोलिया त बोललू ये धन बोलही न जानेलू हो।
धना हम जइबो पुरबी बनिजिया कैसे रहबी अकसर हो ॥२॥

राजा बारी देबो चौमुख दियना त रतिया कटीत होइहे हो
राजा रउरे मयरिया लेई सोइबो त
रतिया बिरतन्त होई हो ॥१
राजा बुती गइले चौमुख दियना त
रतिया पहार भइले हो।
राजा सोई गइलीं रउरी मयरिया त
रतिया भयावनि हो ॥२
कोठवा ऊपर कोठरिया झरोखवा से चितईला हो।
राजा रउरे सरीखे क सीपहिया कतहूँ नाही देखीला हो ॥३
(चलिया

जेठ-बैसाख के दिन है। गरमी बहुत पड रही है। हे राजा ! बा कोठा छवाते तो दोनो जन सोते ॥१॥

हे धन ! कहा तो तुमने ठीक, लेकिन समझ-बूझकर नही कहा। तो व्यापार करने पूरब जाऊँगा, तब तुम अकेली कैसे रहोगी ? ॥२॥

हे राजा ! चारो ओर दिये जला लूँगी, रात कट जायगी। आप माँ के साथ सोऊँगी, रात बीत जायगी ॥३॥

हाय ! चारो ओर के दिये बुझ गये। रात पहाड होगई। आप माँ सो गई, रात भयानक लग रही है ॥३॥

कोठे पर कोठरी है। उसके झरोखे से देखती हूँ, आप-सरीखा क सिपाही कही नही देखती हूँ ॥४॥

इस गीत मे एक विरहिणी स्त्री की मनोवेदना चित्रित है।

[३७]

सासु जे बोलेलीं अडपी ननद तड़पी बोलै हो।
बहुअरि काहे क भरलिउ गुमान सोऐलु सुख निद्रा ॥

बाबा के हैं हम निनरुई त भैया के दुलरुई हो।
ऐ अपने हरीजी के प्राणअधारी सोईले सुख-निद्रा ॥ २ ॥
एतना बचन राजा सुनलेनि सुनहू ना पवलेनि हो।
राजा सारी रात सुतले करवटिया त मुखहू ना बोलहिं ॥३॥
किआ रउरा जेवना बिगडले सेजिअ भोर भइलेनि हो।
ऐ राजा किया रउरा सेवा चुकलों त मुखहू न बोलहु ॥ ४ ॥
नाही मोर जेवना बिगडले सेजिअ भोर भइल न हो।
ए रानी ! गगा जमुन मोरी माता गरब बोली बोलेहु ॥ ५ ॥
हम से भइलि तर्कामरिया सासु पग लागब।
राजा ! मइया मनाइ हम लेब राउर हँसि बोलह ॥ ६ ॥

सास डपट कर बोलती है, ननद तड़प कर कहती है—बहू ! किस अभिमान मे तुम भरी रहती हो जो खूब सुख से सोती हो ? ॥ १ ॥

बहू ने कहा—मैं अपने पिता की एक ही कन्या हूं, भाई की दुलारी हूँ और अपने प्राणेश्वर की प्राणाधार हूं। इसी से सुख की नींद सोती हूं ॥ २ ॥

पति ने यह बात सुन ली। सब बाते अच्छी तरह सुनी भी नही कि वे सारी रात एक करवट सोये रहे और स्त्री से नही बोले ॥ ३ ॥

स्त्री ने पूछा—हे राजा ! क्या आपका भोजन मैंने ख़राब बनाया ? या सेज बिछाने मे कोई भूल हुई या देर हुई ? मे आपकी किस सेवा मे चूक गई जो आप नही बोलते है ? ॥ ४ ॥

पति ने कहा—हे रानी ! न तुमने मेरा भोजन बिगाड़ा, न सेज मे कोई भूल या देरी हुई। गंगा-जमुना की तरह पवित्र और पूज्य मेरी माँ को जो तुमने अभिमान से जवाब दिया, मैं इसलिये अप्रसन्न हूँ ॥ ५ ॥

स्त्री ने कहा—मुझ से गलती हुई। मैं सासजी के पैर छूकर क्षमा

माँगूँगी। हे राजा! आप प्रसन्न होकर बोले, मैं आपकी माता को मना लूँगी ॥ ६ ॥

इस गीत से स्त्रियों को अभिमान-रहित और नम्र होने की शिक्षा मिलती है। साथ ही पुरुष के लिये भी यह संकेत है कि वह माता के सम्मान का सदैव ध्यान रक्खे। सास-बहू के झगड़ों में पुरुष की असावधानी भी एक प्रधान कारण है।

[३८]

सावन भादौ की अँधिअरिआ बिजुलिआ चमाकइ
बिजुलिआ चमाकइ हो।
मोरी सखिआ वे हरि चले मधुबन को मैं दरसन कीन्हे
मैं दरसन कीन्हेउ हो ॥ १ ॥
का दइ कइ चले माई को काह बहिन को ये काह बहिन को।
मोरी सखिआ का दइ चले गोरी धनिअै जो गरुये गरब में
जो गरुये गरब मेनी हो ॥ २ ॥
बइठक दइ चले मइयै रोसइयाँ बहिनियै रोसइयाँ बहिनियइँ।
मोरी सखिआ यह गजओवरि गोरी धनियै जो गरुये गरब में
जो गरुये गरब मेनी हो ॥ ३ ॥
जो मोरा मूड़ पिरैहै मैं किनको जगैहौं मैं किनको जगइहउँ।
मोरे राजा अन्तर जिअरा को भेद मैं किनको बतैहौं
मैं किनको बतइहउँ हो ॥ ४ ॥
जौ तोरा मूड़ पिराये अरि अम्मा को जगैहौं
अरि अम्मा को जगइहौं हो।
मोरी रानी अन्तर जिअरा को भेद पतिया लिखि भेजेउ
पतिया लिखि भेजेउ हो ॥ ५ ॥

काहे को फारि कगद करौ काहे की मसी करौ
काहे की मसी करउ हो।
मोरे राजा के लइ जाये मोर पतिया जो पाती लिखि भेजौ
जो पाती लिखि भेजउँ हो ॥६॥
ऑचर फारि कगद करौ कजरा की मसी करौ
कजरा की मसी करउ हो ।
मोरी रानी लहुरा देवरवा के हाथे जो पाती लिखि भेजेउ
जो पाती लिखि भेजेउ हो ॥७॥
देवरा हो मोरा देवरा अरे तुम मोरा देवरा
अरे तुम मोरा देवरा हो।
मोरा देवरा जो हरि होयँ अकेले तो बाँचि सुनायउ
तौ बाँचि सुनायउ हो ॥८॥
रानी ने पाती भेजी अरि राजा ने बाँची अरि राजा ने बाँची।
हाँ जैसे नैन रहे जल छाय आँकु नहिं सूझै आँकु नहिं सूझइ हो ॥९॥
यह लो अपनी चकरिया अरि वह चटसरिया।
अरि वह चटसरियउ हो ॥
मोरे स्वामी हम घर रानी दुखित हैं तो हमरे दरस बिन
हमरे दरस बिन हो ॥१०॥

सावन-भादो की अँधेरी रात है। बिजली चमक रही है। हे सखी! मेरे स्वामी मधुबन को चले गये। मैंने दर्शन किया है ॥ १ ॥

माँ को क्या दे गये? बहन को क्या दे गये? और अपनी गोरी स्त्री को क्या द गये, जिसको गर्भ है ॥ २ ॥

माँ को बैठक दिया, बहन को रसोई दी और अपनी गोरी स्त्री को यह कोठरी दे गये ॥ ३ ॥

स्त्री ने पूछा था—यदि मेरा सिर दर्द करने लगेगा तो किसको

जगाउँगी ? और हे मेरे राजा ! मै अपने मन की बात किससे बताया करूँगी ? ॥ ४ ॥

पति ने कहा था—हे रानी ! यदि तुम्हारा सिर दुखे तो माँ को जगा लेना और अपने मन की बात मुझे पत्र मे लिखकर भेजा करना ॥ ५ ॥

स्त्री ने पूछा—किस चीज़ को फाड़कर मै कागज बनाऊँगी ? और किस चीज़ की स्याही ? और कौन मेरी चिट्ठी लेकर जायगा ? तो पत्र लिखकर भेजूँगी ॥ ६ ॥

पति ने कहा—आँचल फाड़कर कागज बनाना और काजल की स्याही बनाना । मेरी रानी ! छोटे देवर के हाथ पत्र लिखकर भेजना ॥ ७ ॥

पति के चले जाने पर स्त्री ने देवर से कहा—हे देवर ! तुम मेरे प्यारे देवर हो । मेरे हरि अकेले हो तो मेरा पत्र उनको बाँचकर सुनाना ॥ ८ ॥

रानी ने पत्र भेजा । राजा ने बाँचा । बाँचते-बाँचते उनकी आँखो से आँसू भर आये । अक्षर का सूझना बन्द हो गया ॥ ९ ॥

पति ने अपने मालिक से कहा—यह लो अपनी नौकरी और यह लो अपना घर । हे मेरे मालिक ! मेरी रानी मुझे देखने के लिये तरस रही है ॥ १० ॥

मालूम होता है, स्त्री का पत्र पाकर पति नौकरी छोड़कर घर चला आया । सच है, प्रेम की परीक्षा त्याग से ही होती है । इस गीत से यह भी मालूम होता है, कि गाँवों की दुनिया मे स्त्रियाँ पढ़ी-लिखी भी थीं । तभी तो स्त्री ने देवर के हाथ पति को पत्र लिखकर भेजा था ।

[२६]

सोने के खड़उवाँ कवन राम खुटुर खुटुर करई हो ।
उठहु ससुर राम धेरिया मेजरिया हमरी डाभह हो ॥१॥

सोनवहि कै मोरा नैहर रुपवा केवाड़ी लागे हो।
रामा सातहु भैया कै बहिनी सेजरिया कैसे डासउँ हो ॥२॥
इतना बचनु सुनि रजवा तौ मनहिं दुखित भये हो।
अरे हो हनि लिहेनि बजर केवाँड उघारे नहीं उघरइ।
खोलाये नाहीं खोलइँ बोलाये नाहीं बोलइँ हो ॥३॥
मचियै बैठली सासू तौ बहुवरि अरज करइ हो।
सासू कवन गुनहिं हम कीन्ह केवडियन हनि लीन्हे हो ॥४॥
बेटा तू मेरा बेटा तुहहिं सिर साहिब हो।
बेटा कवन गुनहियाँ बहुवर कीन्ह केवडियन हनि लीन्हेउ हो ॥५॥
मैया तू मेरी मैया तुहहिं मेरी मैया हौ हो।
मैया सोनवहि कै बोकै नैहर रुपवै केवाडी लागे हो।
मैया सातों भैया कै बहिनी सेजरिया कैसे डासइ हो ॥६॥
मटियहिं कै मोरा नैहर सुपवा केवाँड़ी लागे हो।
सासू सातो भैया किंगरी बजावइँ बहिन मोरी नाचइ हो ॥७॥

सोने के खड़ाऊँ पर चढ़े हुए राम खुदुर खुदुर चल रहे हैं। उन्होंने अपनी स्त्री से कहा—हे मेरे ससुर की कन्या! उठो और मेरी सेज बिछाओ ॥१॥

स्त्री ने कहा—सोने का तो मेरा नैहर है। चाँदी के उसमें किवाड़ लगे हैं। मैं सात भाइयों में एक ही बहन हूँ। मैं सेज कैसे बिछाऊँगी? ॥२॥

स्त्री की यह गर्वोक्ति सुनकर पति मन ही मन बहुत दुःखी हुआ। उसने वज्र ऐसा केवाड़ा बन्द कर लिया जो खोलने से नहीं खुल सकता। स्त्री ने खोलने के लिये बार-बार कहा, बार-बार बुलाया, पर पति ने न केवाड़ खोले और न कुछ उत्तर दिया ॥३॥

स्त्री बेचारी सास के पास पहुँची। सास मचिया पर बैठी थी। बहू

ने बिनती की—हे सासजी ! मैंने क्या अपराध किया जो उन्होंने केवाड़े बन्द कर लिये ? ॥४॥

माँ ने बेटे से पूछा—हे बेटा ! बहू ने क्या अपराध किया जो तुमने केवाड़े बन्द कर लिये ? ॥५॥

बेटे ने कहा—हे माँ ! सोने का तो इसका नैहर है, जिसमें चाँदी के केवाड़े लगे है, अपने सात भाइयों में यही एक बहन है । भला, यह सेज कैसे बिछा सकती है ? ॥६॥

स्त्री ने कहा—अच्छा, मेरा नैहर मिट्टी का है । जिसमें सूप के केवाड़े लगे हैं । मेरे सातो भाई किंगरी बजाकर भीख मांगते हैं और मेरी बहन नाचनी है ॥७॥

स्त्री का नैहर यदि सुखी हुआ तो उसके लिये स्त्री को अभिमान बहुत काफी होता है । पर नैहर के लिये उसका अभिमान ससुराल में सहन नहीं हो सकता । इस अभिमान को लेकर भी कभी-कभी सास-बहू, ननद-भौजाई और यहाँ तक कि पति-पत्नी में भी वैमनस्य फैल जाता है । स्त्रियाँ बड़ी प्रत्युत्पन्नमति होती हैं । इस गीत की स्त्री का वाक्-चातुर्य्य देखिये, उसने झटपट अपने नैहर का अभिमान त्याग दिया और पति को प्रसन्न कर लिया ।

[४०]

ये रतनारे होरिलवा फागुन जिनि जनमेउ ।
सब सखी खेलिहैं फगुवा खेलन कइसे जाबइ ॥१॥
ये रतनारे होरिलवा चैत जिनि जनमेउ ।
सब सखी चुनिहैं कुसुमियाँ चुनन कइसे जाबइ ॥२॥
ये रतनारे होरिलवा बैसाख जिनि जनमेउ ।
घर घर मङ्गलचार देखन कइसे जाबइ ॥३॥

ये रतनारे होरिलवा जेठ जिनि जनमेउ।
जेठ तपै दुपहरिया तपन मोरे लगिहै ॥४॥
ये रतनारे होरिलवा अमाढ जिनि जनमेउ।
खोरी खोरी मेघवा गरजिहै गोतिन नाहीं अइहै ॥५॥
ये रतनारे होरिलवा सावन जिनि जनमेउ।
सब सखि झुलिहै झलुववा झुलन कैसे जाबइ ॥६॥
ये रतनारे होरिलवा भादों जिनि जनमेउ।
भादों बिजली चमाकै गोतिन नाहीं अइहै ॥७॥
ये रतनारे होरिलवा कुआर जिनि जनमेउ।
घर घर अइहै पितरै दुखित होइ जइहै ॥८॥
ये रतनारे होरिलवा कातिक जिनि जनमेउ।
सब सखि पुजिहै तुलसिया पुजन कैसे जाबइ ॥९॥
ये रतनारे होरिलवा अगहन जिनि जनमेउ।
सब सखि जैहै गवनवाँ देखन कैसे जाबइ ॥१०॥
ये रतनारे होरिलवा पूस जिनि जनमेउ।
पूस हनै तुसार जाड मोरे लगिहै ॥११॥
ये रतनारे होरिलवा माघ न जनमेउ।
माघै मास सुमास महल बीचे रहबइ ॥१२॥

हे मेरे रतनारे बेटा ! फागुन मे जन्म न लेना। सब सखियाँ फाग खेलने जायँगी, मै कैसे जाऊँगी ? ॥१॥

हे मेरे रतनारे बेटा ! चैत मे जन्म न लेना। सब सखियाँ कुसुम चुनने जायँगी। मै कैसे जाऊँगी ? ॥२॥

हे मेरे रतनारे बेटा ! बैसाख मे जन्म न लेना। बैसाख मे घर-घर विवाह आदि उत्सव होते है, मै देखने कैसे जाऊँगी ? ॥३॥

हे मेरे रतनारे बेटा ! जेठ मे जन्म न लेना। जेठ की दुपहरी की

ज्वाला मुझ मे कैसे सही जायगी ? ॥४॥

हे मेरे रतनारे बेटा ! आषाढ़ मे जन्म न लेना। गली-गली में बादल गरजेंगे, तब अड़ोस-पड़ोस की स्त्रियाँ सोहर गाने के लिये कैसे आयेंगी ? ॥५॥

हे मेरे रतनारे बेटा ! सावन मे जन्म न लेना। सब सखियाँ सावन मे झूला झूलने जायेंगी। मै कैसे जाऊँगी ? ॥६॥

हे मेरे रतनारे बेटा ! भादों मे जन्म न लेना। भादों में बिजली चमकेगी तो स्त्रियाँ कैसे आयेंगी ? ॥७॥

हे मेरे रतनारे बेटा ! कुआर मे जन्म न लेना। घर मे पितर आयेंगे और दु ख पायेंगे ॥८॥

हे मेरे रतनारे बेटा ! कार्तिक मे जन्म न लेना। सब सखियाँ तुलसी की पूजा करने जायँगी, मैं कैसे जाऊँगी ? ॥९॥

हे मेरे रतनारे बेटा ! अगहन मे जन्म न लेना। सब सखियाँ गौने जायेंगी, मै उन्हे देखन और भेंट करने कैसे जाऊँगी ? ॥१०॥

हे मेरे रतनारे बेटा ! पूस मे जन्म मत लेना। पूस मे पाला पड़ता है, मुझे बड़ी जाड़ा लगेगी ॥११॥

हे मेरे रतनारे बेटा ! माघ मे जन्म लेना। माघ ही सबसे अच्छा महीना है। माघ मे सुख से महल म रहूँगी ॥१२॥

इस गीत मे बारहो महीनो की साधारण आलोचना की गई है।

[२१]

गरजौ हे दैवा ! गरजौ गरजि सुनावउ हो।
दैवा ! बरसो जये के खतवा बरसि जुड़वावउ हो ॥ १ ॥
जनमौ हे पूता ! जनमा मोहिं दुखिया घर हो।
पूता ! उजरा डिहवा बसावउ बबैया जुड़वावउ हो ॥ २ ॥

कैसे मैं जनमउँ ये मैया कैसे मैं जनमउँ रे।
मैया ! टुटहे भिलँगवा ओलरबिउ तुकारि पुकरबिउ हो ॥ ३ ॥
जनमौ हे पूता ! जनमौ मोहिं दुखिया घर हो।
आल्हर चनना कटइबो तौ पलँग सुलइबो हो ॥ ४ ॥
पीताम्बर ओढइबिउँ तौ भैया कहि गोहरइबिउ हो।
तेलवा त मिलिहै उधरवा नुनवाँ व्यवहरवाँ हो।
मैया ! कोखिया क कवन उधार जबइ बिधि देइहै
तबइ तू पउबिउ ॥ ५ ॥
मुरजा उचत पह फाटत होरिला जनम लीन्हा हो।
रामा बाजै लागे अनँद बधैया उठन लागे सोहर हो ॥ ६ ॥

हे बादलो ! बरसो। गरजकर सुनाओ। जौ के खेत म बरसो। उसे शीतल करो ॥ १ ॥

हे पुत्र ! मुझ गरीबनी के घर जन्म लो। उजड़े हुए खडहर को बसाओ। पिता के हृदय को शीतल करो ॥ २ ॥

हे माँ ! मैं कैसे तुझ गरीबिनी के घर जन्म लूँ? तू टूटे खटोले पर मुझे सुलायेगी, और तू कहकर बुलायेगी ॥ ३ ॥

माँ ने कहा—हे बेटा ! तुम मेरे घर जन्म लो। मैं ताजा चन्दन कटाकर उसका पलङ्ग बनवाऊगी और उस पर तुमको सुलाऊँगी। पीताम्बर ओढाऊँगी। भैया कहकर पुकारूँगी। मुझ गरीबिनी के घर जन्म लो ॥ ४ ॥

हे माँ ! तेल और नमक तो उधार-व्यवहार से भी मिल सकते हैं, पर कोख तो उधार नहीं मिल सकती। जब भगवान देंगे, तभी पाओगी ॥ ५ ॥

बड़े, तड़के पौ फटते ही पुत्र ने जन्म लिया। आनद की बधाई बजने लगी और सोहर गाये जाने लगे ॥ ६ ॥

इस गीत मे बादलो से पुत्र प्राप्ति की अभिलाषा प्रकट की गई है। इसका रहस्य गीता के इस श्लोक मे है—

यज्ञाद्भवति पर्जन्यो पर्जन्यादन्न सभव ।
अन्नाद्भवन्ति भूतानि—

अर्थात् यज्ञ से बादल होते है। बादल से अन्न होते है और अन्न से प्राणी पैदा होते है।

[४८]

केकर ऊँच मँदिलवा त पुरुब दुअरिया हो।
रामा 'कौन' राम परम सुनरिया त बार न बाँधइ
सिर न सँवारइ भुइयाँ प लोटइ हो ॥१॥
ससुर क ऊँच मँदिलवा त पुरुब दुअरिया हो।
'कवन' राम परम सुनरिया त बार न बाँधइ,
सिर न सवाँरइ भुइयाँ प लोटइ हो ॥२॥
अँगना बटोरत चेरिया औरौ लौंड़ियाउ हो।
चेरिया राजा के खबरि जनाउ बेदन मोर कहियो हो ॥३॥
पसवा जे खेलत 'कवन' राम रजवा कवन राम हो।
राजा तोरी धन बेदन बेआकुल न तोहँके बोलावइँ हो ॥४॥
पसवा जे फेकै राजा बेल तर औरो बबुर तर हो।
राजा झपटि पईठै गजओबरि कहै रे धन बेदन हो ॥५॥
मुड़ मोर बहुत धमाकै अरे कडिहर सालइ हो।
राजा मुअलिउँ कमरिया की पीर तो दाई बोलावहु हो ॥६॥
तुम राजा बइठौ गोड़वरियाँ हम मुड़वरियाँ हो।
राजा पहर पहर पीर आवै दुनौ जन अँगइब हो ॥७॥

छानी जो होत त छवउँतउ मरद बोलवतिउ हो।
रानी वेदन का बाँधल मोटरिया कले कल छूटहिं
त छोरहिं नरायन हो ॥८॥

आवहु रान्ह परोसिनि तुहुँ मोर गोतिन हो।
गोतिन यहि बोरहिया समझावो वेदन कइसे बाँटी हो ॥९॥

यह ऊँचा घर किसका है, जिसका द्वार पूर्व ओर है ? यह किसकी परम सुन्दरी स्त्री बाल नही बोधती, न सिर सँवारती है और भूमि पर लोट रही है ? ॥ १ ॥

यह घर ससुरजी का है, जिसका द्वार पूर्व ओर है। राम की परम सुन्दरी स्त्री न बाल बाधती है, न सिर सवारती है और भूमि पर लोट रही है ॥ २ ॥

दासियाँ आँगन बुहार रही है। हे दासी ! मेरे स्वामी को खबर करो और मेरी प्रसव-वेदना का समाचार कहो ॥ ३ ॥

मेरे राजा पासा खेल रहे थे। दासी ने कहा—हे राजा ! आपकी प्यारी स्त्री प्रसव-वेदना से व्याकुल है और आपको बुला रही है ॥ ४ ॥

स्वामी ने पासा बेल और बबूल के नीचे फेक दिया। वे झपटते हुए कोठरी मे चले आए और पूछने लगे—मेरी प्यारी रानी ! क्या तकलीफ है ? ॥ ५ ॥

मेरा सिर बहुत धमक रहा है और कमर कटी जा रही है। हे राजा ! कमर की पीडा से तो मै मरी जा रही हूँ। जल्दी दाई को बुलाओ ॥ ६ ॥

हे राजा ! तुम पैर की तरफ बैठो और मै सिरहाने बैठूँगी। हम दोनों मिलकर एक-एक पहर पर आनेवाली पीडा को सहेगे ॥ ७ ॥

हे रानी ! छान-छप्पर छवाना होता तो मर्द उसमे मदद कर सकता

था। यह पीडा की बोधी हुई गोठ धीरे ही धीरे छूटेगी और सो ३ नारायण की कृपा होगी, तब ॥ ८ ॥

हे मेरी पडोसिनो ! तुम लोग जरा इस पगली को समझाओ तं भला, पीडा कैसे बोटी जा सकती है ? ॥ ९ ॥

इस गीत मे प्रसव पीडा के समय का जीता-जागता चित्र है।

[४३]

फुल एक फुलइ गुलाब भँवर रँग सुन्दर हो।
फुलवा परिगा श्रीकृष्णजी के हाथ ते केइ लइ जइहै हो ॥१
कृष्ण पिआरी रानी रुकमिनि उनही फुलवा दीहेनि हो।
सतिभामा के जियरा बिरोग हमहिं बिसरायेनि हो ॥२
अरे कहतिउ सरग क जाई सरग डोरिया लाई हो।
रानी उहि रे बरन कइ फूल अँगनवाँ तोहरे लउबै हो ॥३
काहे क सरग क जाबेउ सरग डोरिया लउबेउ हो।
हमरा कुसल रहइँ श्रीकृष्ण नौजि फुलवा पउबै
फुलेह बिन रहबइ हो ॥४

गुलाब का एक फूल फूलता है जो भ्रमर की तरह सुन्दर है। व फूल श्रीकृष्ण जी के हाथ पड गया। उसे कौन लेगा ? ॥ १ ॥

श्रीकृष्ण की प्यारी रानी रुक्मिणी हैं। श्रीकृष्ण ने उन्हे ही वह फू दे दिया। सत्यभामा के जी मे इससे व्यथा पहुँची कि श्रीकृष्ण ने उ भुला दिया ॥ २ ॥

श्रीकृष्ण ने कहा—कहो तो मैं स्वर्ग जाकर, स्वर्ग तक रस्सी लग कर हे रानी ! उसी रंग का फूल तुम्हारे आँगन मे लाकर लगा दूँ ॥३

सत्यभामा ने कहा—क्यों स्वर्ग जाओगे ? क्यों स्वर्ग तक सी लगाओगे ? मेरे श्रीकृष्ण सुख से रहे। मुझे फूल न मिला, न सही। बिना फूल ही के रहूँगी ॥ ४ ॥

बात यह थी कि रुक्मिणी को गर्भ था। गर्भ के समय स्त्री को सब प्रकार से प्रसन्न रखना पुरुष का कर्तव्य है। किसी पति के दो स्त्रियाँ थीं। पति को एक सुन्दर फूल मिल गया। उसने उसे लाकर अपनी गर्भिणी स्त्री को दे दिया। दूसरी स्त्री इससे कुढ़ी कि उसे क्यों नहीं दिया। पति था व्यवहार-कुशल। कई स्त्रियों को सतुष्ट रखना जानता था। उसने वाकचातुर्य से दूसरी स्त्री को भी सतुष्ट कर लिया। पर कई स्त्रियों होने से पुरुष को रात-दिन एक न एक के मोरचे पर खडा ही रहना पडता है। एक न एक रूठी ही रहती है। यह इस गीत से स्पष्ट हो रहा है।

[५५]

जिरवै अस धन पातरि कुसुम अस सुन्दरि।
रामा चढि गई पिआ की अटारी सोई सुख नीदा ॥ १ ॥
गेडुवा त धरिन उसमवाँ चुनरी पयन तरे।
धना चढि गई पिया की अँटरिया सोई सुख नीदा,
खबरि कुछ नाही ॥ २ ॥
सोइ साइ जब जागी चौकि उठि बइठीं।
ये मोरे राजा छोडो न मोर अँचरवा तौ हम भुइँ बइठी ॥ ३ ॥
कै तेरी सासु तुम्है टेरै की ननद बुलावइ।
येरी रानी की तेरे रोवै बारे लाल जिन्है लै बइठौ ॥ ४ ॥
ना मोरी सासु बुलावइ न ननद बुलावइ।
मोरे राजा ! राम भजन की है बेर मै जिअरा लइके बइठब ॥ ५ ॥
कोठे से उतरी जञारानी त आँगन ठाढ़ी भई।
द्वारे से आये उनके देवर काहे भाभी अनमनि ॥ ६ ॥
अब देवरा हो मोरे देवरा अरे तुम मोरे देवरा।
ये मोरे देवरा तोरे भाई बोलै विष बोल करेजे मोरे सालइ ॥ ७ ॥

भाभी हो मोरी भाभी तुम्हीं मोरी भाभी।
ये मोरी भाभी ! अँचरे मे लै तिल चौरी त सुरुज मनावउ ॥ ८॥
न्हाइ धोइ जब ठाढ़ी भई सुरुज मनावइँ।
ये मोरे सूरुज हम पर होउ दयाल सजन बोली बोलइँ ॥ ९॥
सुरुज मनावइ न पायउँ होरिल भुइँ लोटइँ।
बाजै लागी अनद बधाई गावै सखि सोहर ॥१०॥
टेरो न गाँव को बढ़ई हाल चलि आवे बेगि चलि आवइ।
मोरे राजा चन्दन बिरिछ कटावइँ औ पलँग बिनावइँ ॥११॥
ई गुर बरनि पलँगिया रेसम उरदावन।
मोरी रानी ! आइ सोवउ सुख नीद मै बेनिया डोलावउँ ॥१२॥
अब तौ बेनिया डुलौवेउ बहुत निक लगवइ।
मोरे राजा ! एक होरिल के कारन तुँ बोली हनि मारेउ
करेजे मोरे सालइ ॥१३॥

स्त्री जौ की तरह पतली और फूल की तरह सुन्दरी है। वह अपने प्राणप्यारे की अटारी पर चढ गई और सुख की नीद सो गई ॥१॥

पानी से भरा हुआ लोटा सिरहाने रख दिया और ओढ़नी पैरो के पास। स्त्री सुख की नीद सो गई। उसे कुछ ख़बर न रही ॥२॥

सो-सा कर जब वह उठी, तब चौक कर उठ बैठी। पति से उसने कहा—हे मेरे राजा ! मेरा आँचल छोड दो। मै पलग से नीचे उतर कर बैठूँगी ॥३॥

पति ने कहा—क्या तेरी सास तुझे बुला रही है ? या ननद पुकार रही है ? या तेरा कोई बालक रो रहा है ? जिसे लेकर तू बैठेगी ॥४॥

स्त्री ने कहा—न सास बुला रही हैं, न ननद। हे मेरे स्वामी ! भजन की बेला है। मै अपना प्राण लेकर बैठूँगी ॥५॥

कोठे से उतरकर वह प्रसूता देवी आँगन मे खडी हुई। बाहर से

देवर ने आकर पूछा—हे भाभी ! तू उदास क्यों है ? ॥६॥

भाभी ने कहा—हे मेरे प्यारे देवर ! तुम्हारे भाई ने विष ऐसी एक बात कह दी है, जो मेरे कलेजे मे दुख दे रही है ॥७॥

देवर ने कहा—हे मेरी प्यारी भाभी ! तुम आंचल मे तिल और चावल लेकर सूर्य देवता को मनाओ ॥८॥

स्त्री नहा-धोकर खडी हुई और सूर्य को मनाने लगी। हे सूर्य ! मुझ पर कृपा करो। मेरे पति ने ताना मारा है ॥९॥

अभी अच्छी तरह प्रार्थना कर भी न पाई थी कि पुत्र उत्पन्न हुआ और पृथ्वी पर लोटने लगा। आनन्द की बधाई बजने लगी और सखियां सोहर गाने लगी ॥१०॥

मेरे राजा गांव के बढई को जल्दी बुला रहे हैं। चन्दन का वृक्ष कटाकर पलँग बनवा रहे है ॥११॥

लाल रग की पलग है, जिसमे रेशम की रस्सी लगी है। पति ने कहा—मेरी प्यारी रानी ! आकर इस पलँग पर सुख की नीद सोओ और मै पखा हाँकूँ ॥१२॥

स्त्री ने हँसकर कहा—हो, अब तो तुम जरूर पखा हांकोगे। अब मै तुमको बहुत अच्छी मालूम होऊगी। पर एक पुत्र के कारण तुमने ऐसी बोली मुझे मारी थी, जो मेरे कलेजे मे चुभ गई है ॥१३॥

जहां आपस मे बहुत प्रेम होता है, वहाँ इस तरह की छोटी-छोटी बातो को लेकर लडाई-झगडे चलते ही रहते है। यदि यह न हो, तो प्रम की मिठास मालूम ही न हो।

[४५]

छापक पेड छिउल कर पतवन घनविन हो।
जिहि नर ठाढी मीना देई बहुत विपत मे हो ॥ १ ॥

कहाँ पाउब सोने क छुरउना कहाँ पाउब धगरिन।
को मोरी जागइ रइनिया कवन दुख बाँटइ ॥ २ ॥
बन से निकरीं बन तपसिनि सीतहिं समुझावइँ।
चुप रहु बहिनी तु चुप रहु हस देवइ सोने क छुरउना
हम तोरी जागब रइनिया हमहि होबै धगरिन।
विपत महिं बाँटब ॥ ३ ॥
होत भोर लोही लागत कुस के जनम भये।
बाजै लागी अनँद बधाई गावइँ सखि सोहर ॥ ४ ॥
जौ पूता होत अजोधिया राजा दसरथ घर हो।
राजा सगरिउ अजोधिया लुटउते कौसल्या देई अभरन ॥ ५ ॥
अब तो पूता जनमेउ बन मे बनफल तोरउ हो।
बेटा ! कुस रे ओढन कुस डासन बनफल भोजन हो ॥ ६ ॥
हँकरिन बन केर नउवा बेगहि चलि आयउ।
नउवा जल्दी अजोधिया क जाओ रोचन पहुँचाओ ॥ ७ ॥
पहिला रोचन राजा दसरथ दुसर कौसिल्या रानी।
तीसर दिन्ह्यो देवर लछिमन पियहिं न बतायउ ॥ ८ ॥
राजा दसरथ दिहेन घोडवा कौसिल्या रानी अभरन।
लछिमन देवरा दिहेन पाँचौ जोड़वा त नउवा बिदा कर ॥ ९ ॥
सोनेन केर गेडवना तो राम दतिवन करें।
लछिमन भहर भहर होय माथ रोचन कह पायउ ॥१०॥
भौजी तो हमरी सीता देई दोऊ कुल राखनि।
भइया उनके भये नन्दलाल रोचन हम पावा ॥११॥
हांथे क गेडुवा हाथ रहा मुख की दँतिवन मुखै रहि।
दुरै लागे मोतियन आँसु पटुकवन पोछइँ ॥१२॥

आगे के घोड़वा वशिष्ट मुनि पाछे कै लछिमन।
बीचे के घोड़वा रामचन्दर सीता के मनावन चले ॥१३॥
तुम्हरा कहा गुरू करबइ परग दस चलबइ।
फाटक धरती समावइ अजोधिया न जावइ ॥१४॥

पलाश (ढाक) का छोटा सा पेड है, जो हरे पत्तो से खूब घना हो रहा है। उसके नीचे सीता देवी खड़ी हैं, जो घोर विपदा मे पडी है ॥१॥

सीता सोच रही हैं—यहाँ बन मे सोने का छुरा कहाँ मिलेगा ? यहाँ धगरिन (नाल काटने वाली) कहाँ मिलेगी ? मेरी शुश्रूषा के लिये रात भर कौन जागेगा ? मेरा दु.ख कौन बँटायेगा ? ॥२॥

बन मे से बन की तपस्विनियाँ निकली। वे सीता को समझाती है—हे सीता बहन ! चुप रहो, धीरज धरो। हम सोने का छुरा देगी और हमी धगरिन होगी। हमी तुम्हारे लिये रात भर जागेगी और हमी दु ख बेटायेगी ॥३॥

पौ फटते ही कुश का जन्म हुआ। आनन्द की बधाई बजने लगी और सखियाँ सोहर गाने लगी ॥४॥

सीता ने कहा—हे बेटा ! यदि तुम अयोध्या मे राजा दशरथ के घर पैदा हुये होते तो उनके हर्ष का ठिकाना न होता। वे आज सारी अयोध्या लुटा देते और मेरी सास कौशल्या अपने कुल गहने लुटा देती ॥५॥

अब तो तुम बन मे पैदा हुये हो, बन के फूल तोड़ो, कुश बिछाओ, कुश ओढ़ो और बनफल खाओ ॥६॥

बन का नाऊ बुलाया गया। वह तत्काल आ पहुंचा। हे नाऊ ! जल्दी अयोध्या जाओ और रोचन पहुंचाओ ॥७॥

पहला रोचन राजा दशरथ को देना। दूसरा रानी कौशल्या को।

तीसरा रोचन मेरे देवर लक्ष्मण को। पर मेरे पति को कुछ न बताना ॥८॥

राजा दशरथ ने नाऊ को घोडा दिया, कौशल्या ने गहने और लक्ष्मण ने पाँचो जोडे (पगडी, दुपट्टा, अंगरखा, धोती और जूता) देकर नाऊ को बिदा किया ॥९॥

सोने के लोटे से राम दातुन कर रहे थे। लक्ष्मण के माथे पर रोली लगी देखकर राम ने पूछा—लक्ष्मण ! तुम्हारा माथा दमक रहा है। तुमने यह रोचन कहाँ पाया ? ॥१०॥

लक्ष्मण ने कहा—हे भैया ! मेरी भाभी सीता देवी दोनो कुलो की प्रतिष्ठा बढ़ानेवाली है। उनके पुत्र हुआ है। यही रोचन मैंने पाया है ॥११॥

यह सुनते ही राम ऐसे व्यथित हुये कि हाथ का लोटा उनके हाथ ही मे रह गया और दातुन मुँह ही मे रह गई। आँखो से मोती ऐसे आँसू ढलक पडे। वे दुपट्टे से उसे पोछने लगे ॥१२॥

आगे के घोडे पर वशिष्ठ, पीछे के घोडे पर लक्ष्मण और बीच के घोडे पर राम सीता को मनाने चले ॥१३॥

सीता ने कहा—हे गुरु ! आप की आज्ञा मे नही टालूगी। दस कदम चलूँगी। पर अयोध्या मे नही जाऊँगी और फाटक पर ही पृथ्वी मे समा जाऊँगी ॥१४॥

सीता देवी पर मिथ्या सदेह कर के राम ने लोक-मर्यादा की रक्षा के लिये उनको जो बनवास दिया था, स्त्री-समाज ने उसका अनुभव बडे ही दर्द से किया है। वाल्मीकि और तुलसी दोनो इस घटना को छोड गये, पर स्त्रियो ने सहस्र-सहस्र कठ से उसे गाया ह और सीता के साथ सहानुभूति प्रकट की है।

इस गीत का सुख तो "पियहि न बतायउ" मे है। मनस्विनी

पतिव्रता का चित्र इस छोटी सी कड़ी मे ऐसा उतर आया है कि देखते ही बनता है।

[४६]

कमर मे सोहै करधनियाँ पाँव पैजनियाँ।
ललन दूरी खेलन जनि जाओ ढुँढ़न हम न अउबै॥१॥
सात बिरन की बहिनिया बाप धिया एकै।
हरिजी के परम पियारी ढूँढ़न कैसे अउबै॥२॥
भोर भये भिनसरवा कलेवना की जुनिया।
होइ गै कलेवना की बेर ललन नहिं आये॥३॥
अँगिया तो फाटै बँदै बँद अँचरा करै कर।
छतिया उठी हहराय ढूँढन हम आइन॥४॥
सात बिरन की बहिनिया बाप कै एकै।
मैया बाबू क परम पियारि ढूँढन कैसे आइउ॥५॥
छाँडउँ मै सातौ बिरनवा बाप कै नैहर।
छोड़ दिन्हौ हरि की सेजरिया ढूँढ़न हम आइन॥६॥
जैसे कुम्हार क औवाँ त भभकि भभकि रहै।
बेटा वैसइ माई क करेजवा त धधकि धधकि रहै॥७॥

बच्चे के कमर मे करधनी और पाव मे पैजनी शोभा दे रही है। मो कहती है—हे बेटा! दूर खेलने मत जाओ। मै ढूँढने कैसे आऊँगी?॥१॥

सात भाइयो की तो मै बहन, अपने बाप की एक ही कन्या और अपने प्राणेश्वर की परम प्यारी, भला, मै तुमको ढूँढ़ने कैसे आऊँगी?॥२॥

सवेरा हुआ। कलेवे का समय आया। कलेवे का वक्त हो गया। बेटा घर नही आया। कही खेल रहा है॥३॥

माँ से रहा नहीं गया। बच्चे के लिये हृदय ऐसा उमडा कि चोली के बन्द-बन्द टूट गये और आँचल के तार-तार अलग हो गये। हृदय पीडा से व्यथित हो गया। तब वह ढूँढ़ने आई ॥४॥

बेटे ने पूछा—तुम सात भाइयो की बहन, बाप की एक ही बेटी तथा मेरे पिता की बड़ी प्यारी, मुझे ढूँढ़ने कैसे निकली ? ॥५॥

माँ ने कहा—मैंने सातो भाइयो को छोड दिया। नैहर भी भुला दिया। स्वामी की सेज भी छोड दी। मै तुमको ढूँढ़ने आई हूँ ॥६॥

जैसा कुम्हार का आँवाँ सुलगता है, वैसे ही पुत्र के लिये माँ का हृदय धधक-धधक उठता है ॥७॥

किसी स्त्री को पहला ही पुत्र हुआ है। संसार मे प्रेम के लिये उसे एक नया पदार्थ मिला है। पहले वह जानती नही थी कि पुत्र-प्रेम कितना प्रबल होता है। स्त्री के हृदय मे पुराने और नये प्रेम-पात्रों का जब संघर्ष जारी हुआ है, तब उसने पुत्र-प्रेम के पीछे सब को छोड दिया। सचमुच, पुत्र के लिये माँ का प्रेम अगाध होता है।

[४७]

राजा दसरथ के पिछवरवाँ अतर भल गमकइ हो।
अरे अतर क बास सुबास कौशिल्या रानी के राम भये ॥ १ ॥
घर मे से निकलीं केकैया रानी सुनहु सुमित्रा रानी हो।
बहिनी आव चलि बडे दरबार दोहँस फेरि आई ॥ २ ॥
अँगना बटोरति चेरिया त अवरी लऊँडिआ हो।
आवेलीं केकैया सुमित्रा त राम जनि देखावहु हो ॥ ३ ॥
अँगना बटोरति चेरिआ त अवरी लऊँडिआ हो।
चेरिआ झारि बिछाव सुखपलिआ बईठै रानी केकय ॥ ४ ॥
हम नहिं बैठब कौशिल्या रानी हम नहिं बैठब।
तनि एक राम क देखब घरे हम जाइब ॥ ५ ॥

का हम राम देखाई त का राम सुन्दर
अरे छठिआ बरहिआ के आया त राम देखी जाया ॥ ६ ॥
ई मती जानहु कौशिल्या रानी का राम सुन्दर।
इहै राम लंका फुकैहै अयोध्या बसैहै ॥ ७ ॥

राजा दशरथ के पिछवाडे इत्र खूब महक रहा है। इत्र की सुगन्ध बडी मीठी है। जान पड़ता है, कौशल्या के राम हुये हैं ॥१॥

घर मे से कैकेयी रानी निकलीं और सुमित्रा से बोलीं—हे बहन! आओ चलें, बडे दरबार की हाजिरी दे आवें ॥२॥

आँगन बटोरती हुई दासी ने कहा—कैकेयी और सुमित्रा आ रही है, इन्हे राम को न दिखाओ ॥३॥

आँगन बटोरती हुई दासियो से कौशल्या ने कहा—जल्दी से सुखपाल झाड कर बिछा दो, जिस पर रानी कैकेयी बैठेंगी ॥४॥

कैकेयी ने कहा—हे रानी कौशल्या! हम बैठेंगी नहीं। हम एक बार राम को देखकर घर जायँगी ॥५॥

कौशल्या ने कहा—राम को क्या दिखाऊँ? क्या राम सुन्दर हैं? छठी या बरही को आइयेगा तो राम को देख लीजियेगा ॥६॥

कैकेयी ने कहा—हे कौशल्या रानी! यह मत समझना कि राम सुन्दर नही हैं। यही राम लंका फुकायेगे और अयोध्या बसायेगे ॥७॥

गीत की पाँचवी छठी पंक्तियो से मालूम होता है कि घर मे राग-द्वेष फैलाने मे नौकरानियो का कितना हाथ होता है। अन्तिम पंक्तियो मे रूप की अपेक्षा गुण की महिमा अधिक बताई गई है। हिन्दू-समाज का सदा से यही ध्येय रहा है। तभी इस समाज मे विश्वविजयी वीर पैदा होते थे।

[४८]

ससुरु दुअरवा जँम्हिरिआ तो लहर लहर करै, मँहर मँहर करै।
मोरे साहब अंगनवाँ रस चूवइ जच्चा रानी भीजै॥ १॥

दुअरवा से आये बीरन भैया छुरिया पहांटै कटरिया पहाटै।
सारे कटबौं मैं रुखवा जम्हिरिआ बहिन मोरी भीजै॥ २॥

ओबरी मे बोली जच्चा रानी नैना कजर दिहे सिरहा सिंदुर दिहे,
मुंह मा ताम्बूल लिहे, कोरवा होरिल लिहे हो।
भैया ससुरे लगाई जम्हिरिआ जम्हिरिआ जनि काटेउ॥ ३॥

मेरे ससुर के द्वार पर जम्हीरी नीबू का वृक्ष लहलहा रहा है, महक रहा है। उससे आँगन मे रस टपका करता है, जिससे जच्चा रानी भीगती हैं॥ १॥

बाहर से भाई आया। वह छुरी तेज करने लगा, कटारी तेज करने लगा और कहने लगा—मै इस नीबू साले को काट डालूँगा। मेरी बहन भीगती है॥ २॥

कोठरी से जच्चा रानी निकली, जो आँखो मे काजल दिये हुये है, सिर पर सिंदूर लगाये है, मुंह मे पान लिये हुये है और गोद मे बालक लिये हुये है। उन्होने कहा—हे भाई! इस नीबू को मेरे ससुरजी ने लगाया था, इसे मत काटो॥ ३॥

मालूम होता है, ससुर का देहान्त हो चुका है। उनके हाथ का लगाया हुआ जम्हीरी नीबू का दरख्त उनके स्मृति-चिन्ह स्वरूप मौजूद है। ससुर के हाथ की चीज़ है, इस ख्याल से बहू को उस पर कितना प्यार है, कितनी ममता है, यह गीत मे स्पष्ट है। पुरुषो की अपेक्षा स्त्रिया स्मृति की रक्षा कही अधिक करती है।

[४६]

काहेक चनना उतारेउ कपुरा भरायउ।
रानी केहिं देखि चढलिउ अँटरिया काहे देखि मुरझिउ॥ १॥
होरिला कै चनना उतारेन कपुरा भरायन।
राजा तुम्हैं देखि चढलिउँ अँटरिया सवति देखि मुरझिउँ॥ २॥
रानी तुम तो रेड कै कँडरिया फट्ट सेती टुटबिउ।
रानी हम तो बाँस कै कइनिया नवाये नाहीं टुटबै॥ ३॥

पति ने पूछा—किसका चन्दन उतार कर कपूरा भराया? किसे देख कर तुम अटा पर चढी और किसे देखकर कुम्हला गई?॥ १॥

स्त्री ने कहा—बच्चे का चदन उतार कर कपूर भराया। हे मेरे राना! तुमको देखकर अटा पर चढी और सौत को देखकर मुरझा गई॥ २॥

पति ने कहा—हे रानी! तुम्हारा स्वभाव तो रेड के कोमल डठल की तरह है कि जरा सा धक्का लगा और खट से टूट गया। पर मेरा स्वभाव बाँस की पतली टहनी की तरह है, जो झुक सकता है, पर टूटता नहीं॥ ३॥

पति ने दो स्वभावो की कैसी सुन्दर तुलना की है। पति ने स्त्री को उपदेश किया है कि स्वभाव सहनशील होना चाहिये।

[५०]

चनना कटाइउँ पलँगा बिनाइउँ।
मचवन ईंगुर चराइउँ रेशम ओरदावनि॥ १॥
तेहि पर सुतैं कवन रामा कोरवाँ कवन देई।
चेरिया तो बेनियाँ डोलावे नीद भलि आवइ॥ २॥
छपटि क सुतै मोर साहब तुम सिर साहब हो।
मोरे बारे ललन की भँगुलिया पसिनवाँ बुडत है॥ ३॥

बोलेउ तौ धन बोलेउ बोलेउ न जानेउ हो।
तोरे बारे ललन की झँगुलिया मैं दोहरी सिअइहौ ॥ ४ ॥
कहवाँ के दरजी बोलइहौ तौ कहँवा कै सुइया हो।
कैसे क बन्द लगइहौ ललन पहिरइहौ हो ॥ ५ ॥
अगरे कै दरजी मँगइहौ पटने कै सुइया हो।
रानी बत्तिस बन्द लगइहौ ललन पहिरइहौ ॥ ६ ॥
हाथन सोने क खगउडा पायन पैजनियाँ।
लालन खेलिहै बरोठवा बतीसो बन्द झुलिहै ॥ ७ ॥
बहै पुरवइया पवन भल डोलइ हो।
लालन खेलिहै बरोठवा दुनौ जन देखब हो ॥ ८ ॥

चन्दन कटाकर पलँग बनवाया, उसके पावो मे ईंगुर का रङ्ग कराया और रेशम की ओरदावन (पैंताने की ओर लगी हुई रस्सी) लगवाया ॥ १ ॥

उस पर राम सोते है, जिनकी गोद मे देवी है। दासी पङ्खा झल रही है ॥ २ ॥

स्त्री की गोद मे शिशु है। वह कहती है—मेरे स्वामी, मेरे प्राणनाथ, मुझ से चिपक कर सो रहे हैं। मेरे छोटे बच्चे की कुरती पसाने मे तर हो रही है ॥ ३ ॥

पति ने कहा—हे मेरी प्यारी रानी ! तुमने कहा तो सही, पर कहना नहीं आया। मै तुम्हारे नन्हे बच्चे के लिये दो-दो कुरते सिला दूँगा ॥ ४ ॥

स्त्री कहती है—कहाँ का दरजी बुलाओगे ? और कहाँ की सुई होगी? झँगुली मे कै सौ बन्द लगेंगे ? जिसे तुम मेरे लाल को पहनाओगे ॥ ५ ॥

पति ने कहा—आगरे का दरजी बुलाऊगा, पटने की सूई मँगाऊगा। झँगुली मे बत्तीस बन्द लगेंगे। जिसे मै लाल को पहनाऊगा ॥ ६ ॥

बच्चे के हाथ मे सोने का कडा होगा, पैरो मे पैजनियाँ होगी। मेरे लाल बैठक मे खेलेंगे और बत्तीसो बन्द लटकते रहेंगे ॥ ७ ॥

पूर्वा हवा चल रही है। वायु की लहरें बडी सुहावनी लग रही है। मेरे लाल बैठक मे खेलेगे और हम दोनो देखेगे ॥ ८ ॥

पति-पत्नी की एकान्त लालसा इस गीत मे चित्रित है। साथ ही किसी समय कहाँ कहाँ की क्या चीजें प्रसिद्ध थीं, इसका वर्णन भी है।

[५१]

जेठ तपै दिन रात तो धरती गरम भई।
राजा बाहेर बँगला छवउता दुनौ जने सोइत ॥ १ ॥
रानी न हो मोरी रानी तुहीं मोरी रानी।
लागत मास असाढ दखिन चले जइहै।
रानी बाहेर बँगला छवावौ अकेले तुम सोवउ ॥ २ ॥
राजा न हो मोरे राजा तुहीं मोरे राजा।
सावन भादों की रात अकेले कैसे रहबै ॥ ३ ॥
रानी न हो मोरी रानी तुहीं मोरी रानी।
मैके से बिरन बुलाओ नइहर चली जावो ॥ ४ ॥
काहे क बिरन बुलौबै नइहर चली जाबइ।
राजा ! सासु की करिके टहलिया उमिरि हम बितउब ॥ ५ ॥

जेठ रात-दिन तप रहा है। पृथ्वी गर्म हो गई है। हे मेरे राजा ! बाहर बँगला छवाते, तो हम दोनो उसमे सोते ॥ १ ॥

पति ने कहा—हे मेरी रानी ! तुम मेरी प्यारी रानी हो। मै तो आषाढ़ लगते ही दक्खिन चला जाऊंगा। कहो तो तुम्हारे लिये बाहर बँगला छवा दूँ, जहाँ तुम अकेले सोना ॥ २ ॥

स्त्री ने कहा—हे मेरे राजा ! तुम मेरे राजा हो। सावन भादो की अँधेरी रात मे मै अकेले कैसे रहूँगी ? ॥ ३ ॥

पति ने कहा—हे रानी ! तुम मेरी रानी हो। नैहर से अपने भाई को बुला लो और नैहर चली जाओ ॥ ४ ॥

स्त्री ने कहा—क्यो भाई को बुलाऊँ ? क्यो नैहर जाऊँ ? हे राजा ! मै सास की सेवा करके अपनी उम्र बिताऊँगी ॥ ५ ॥

[५२]

पलँग जो आये बिकाइ पलँग अति सुन्दर।
मोरी सासु को देउ बोलाइ पलँग उइ लैहै होरिल भुइयाँ सोवै ॥१॥
गरब की माती बहुरिया गरब बोल बोलै।
माँगि पठावो अपने नइहर होरिलवा सोवावो ॥२॥
हँकरौ न नगर के नौवा बेगि चलि आवो।
नौवा हमरे मइके चले जावो पलँग लै आवो होरिल भुइँ सोवै॥३॥
सभा मे बैठे "अमुक" रामा नौवा अरज करै।
साहेब धेरिया के भये नँदलाल पलँग उइ माँगै ॥४॥
अल्हर चनन कटावै पलँग बनावै।
चारो पावन ईगुरु ढरावै रेशम ओरदावन ॥५॥
पलँग जो आई दुवारे पलँग अति सुन्दर।
मोरी सासु को देउ बोलाइ पलँग उइ देखै ॥६॥
बडेरे बापन की धेरिया बडे बोल बोलै।
पलँग बिछावो गज ओबरी होरिलवा सोवावो ॥७॥

बहुत सुन्दर पलँग बिकने आया है। मेरी सास को बुला दो। वे पलँग खरीद लें। मेरा बच्चा ज़मीन पर सोता है ॥ १ ॥

सास ने कहा—अभिमान से मतवाली बहू गर्व की ही बात बोलती है। अपने नैहर से पलँग मँगा न लो, जिस पर अपने बच्चे को सुलाओ ॥ २ ॥

बहू ने गाँव के नाई को बुलवाया और कहा—हे नाई ! तुम मेरे

मैके जाओ और पलँग ले आओ। मेरा बच्चा जमीन पर सोता है ॥३॥

बहू का पिता सभा मे बैठा था। नाई ने जाकर विनय किया—हे स्वामी! आपकी कन्या के पुत्र हुआ है। कन्या ने पलँग मँगाया है ॥४॥

पिता ने हरा चँदन कटाकर पलँग बनवाया। चारो पावो मे ईंगुर लगवाया और रेशम की ओरदावन लगवाकर भेजा ॥५॥

पलँग जब बहू के द्वार पर आया, तब बहू ने कहा—पलंग बहुत सुन्दर है। ज़रा मेरी सासजी को बुला दो, पलँग देख लें ॥६॥

सास पलग देखकर लज्जित हुई और बोली—बडे बाप की बेटी है, इससे बडे बोल बोलती है। बहू! ले जाओ, पलग को अपनी कोठरी मे बिछाओ और इस पर बच्चे को सुलाओ ॥७॥

धनी घर की कन्या छोटी हैसियत वाले घर मे ब्याही गई थी। इससे सास-बहू मे पटती नही थी। एक ओर अभिमान, दूसरी ओर ईर्ष्या। बात-बात मे युद्ध।

[५३]

ऊँचे डगरिया कै कुइयाँ सुघर एक पानी भरै हो।
घोड़वा चढे राजपुतवा तौ बोलिया बहुत करै हो ॥ १ ॥
को है घरे मा अति दारुनि पनियाँ क पठइस हो।
जो जेठहिं के दुपहरिया मे पनियाँ भराइस हो ॥ २ ॥
जाकर धना तुम सुन्दरि सो प्रभु कहाँ गये हो।
जो जेठहिं के दुपहरिया मे पनियाँ भराइन हो ॥ ३ ॥
ऐसन धना जौ पाइत परम सुख पाइत हो।
धन! अँखिया मे राखित छिपाय करेजवा मे जोगइत हो ॥ ४ ॥
अस रजपुतवा जो पाइत चाकर हम राखित हो।
अपने प्रभुजी के पायं कै पनहिया तौ तोहँसे ढोवाइत हो ॥ ५ ॥

रास्ते मे ऊंचाई पर एक कुँवा है। एक सुन्दरी स्त्री पानी भर रही

है। घोड़े पर चढा हुआ एक राजपूत वहाँ आया। बोली-ठोली मे वह बहुत निपुण है ॥१॥

राजपूत ने कहा—हे सुन्दरी! तुम्हारे घर मे ऐसे कठिन हृदय-वाली कौन है? जिसने, तुमको इस जेठ की दुपहरी मे पानी भरने भेजा है ॥२॥

तुम जिसकी ऐसी सुन्दरी स्त्री हो, वह तुम्हारा स्वामी क्या कही परदेश गया हुआ है? जो तुमको जेठ की दुपहरी मे पानी भरना पड़ता है? ॥३॥

आहा! ऐसी सुन्दरी स्त्री यदि मै पाता तो मै बहुत ही सुख पाता। उसे मै आँखो मे छिपा रखता और हृदय मे चुरा रखता ॥४॥

पतिव्रता स्त्री राजपूत की इस बात से नाराज़ होकर कहती है—तुम्हारे जैसा राजपूत को मै पाती तो उसे नौकर रखती और अपने प्रभु के पाँव की जूती उससे धोवाती ॥५॥

[५४]

जौने देश हिंगिया न मँहकै न जिरिया सुबासित।
तौने देश चलेहै कवन रामा छुरिया बेसाहै कटरिया बेसाहै॥ १॥
अपना का बेसहै त छुरिया होरिल क कटरिया।
अपने नाजौ का बेसहै कगनवाँ तौ बडेरे जुगुति सेती॥ २॥
कँगना पहिरि धन बैठीं त अपने ओसरवा माँ रे।
येहो लहुरी ननद हाँके बेनिया कँगनवाँ भौजी लेबै हो,
जौ तोरे भौजी होइहै होरिलवा कँगनवाँ हम लेबै हो॥ ३॥
चूमौं मैं ननदी क ओंठवा चउर अस दँतवा।
ननदी जौ मोरे होइहै होरिलवा कँगन हम देबै,
ननदी कँगना कै जोट पछेलवा दुनौ हम देबै॥ ४॥

नहाय धोय ननदी ठाढ़ि भई देवता मनावै लागीं।
देवता देहु भौजी का पूत कँगना हम पाई ॥५॥
सुरजा मनवहीं न पाइनि होरिला जनम लीन।
लट खोले नाचै ननदिया कँगनवाँ भौजी लेबै रे ॥६॥
न तोर भैया गढ़ावा न बाबा रौरे मोल लीन।
ननदी ई मोरे नैहरकै कँगना कँगन हम ना देबै रे ॥७॥
होउ उपत्तर केर धेरिया सुपत्तर कैसे होवौरी।
भौजी जौन बोल बोलिव ओसरवाँ उहै बोल राखौ ॥८॥
मारब सात गड़हरी गले दुइ थप्पड रे।
भौजी कँगना कै जोट पछेलवा दुनौ हम लेबै ॥९॥
हाथ से काढै कँगनवाँ फुफुनियाँ चुरावै रे।
ननदी खर बारि करउ उजेर कँगनवाँ मोर हेराय गये रे ॥१०॥
दुअरवा से आये ससुर राजा गरजि घुमडि बोलै।
बहुअरि दै डारौ धिया का कँगनवाँ बिटियवा परदेसिनि ॥११॥
दुअरवा से आये साहेब मोरे गरजि घुमड़ि बोलै।
दै डारौ बहिन का कँगनवाँ बहिन मोर दूखित होइहै रे ॥१२॥
सभवा से आये देवर राजा साँसि दपटि बोलै।
भौजी देसवा निकरि हम जाबै बहिनिया के कारन,
भौजी बेचबौ मै ढाल तरवरिया बहिनि क मनैबौ ॥१३॥
फुफुनी से काढै कँगनवाँ अगनवाँ लै बहावै रे।
अरी पहिरौ सतभतरौ ननदिया सौति मोरि होवौरे ॥१४॥
पहिरि ओढ़ि ननदी ठाढ़ि भई सुरजा मनावै लागीं।
सुरजा बाढ़ै मोरे भैया क सेजरिया मै नित उठि आवउँ ॥१५॥

जिस देश मे न हीग मे सुगध है, न जीरे मे सुवास। उस देश मे छुरी और कटारी खरीदने के लिये राम गये हैं ॥१॥

अपने लिये उन्होंने छुरी खरीदी और अपने पुत्र के लिये कटारी। तथा अपनी प्राणेश्वरी के लिये खूब जाच बूझकर कगन खरीदा ॥२॥

कंगन पहनकर स्त्री अपने ओसारे मे बैठी। उसकी छोटी ननद बेनिया (वेणु = बांस। बांस की बनी हुई पंखी) डुला रही थी। उसने कहा—भौजी ! तुम्हारे पुत्र होगा तो यह कगन मै लूँगी ॥३॥

स्त्री ने कहा—मेरी प्यारी ननद ! मै तुम्हारे ओठ चूमती हूँ। तुम्हारे चावल ऐसे नन्हे-नन्हे दांत चूमती हूँ। यदि मेरे पुत्र होगा तो मै तुमको यह कगन दे दूँगी। यही नही, मै कगन का जोड पछेला भी दे दूँगी ॥४॥

ननद नहा-धोकर खडी हुई और देवता मनाने लगी—हे देवता ! मेरी भौजी को पुत्र दो, जिससे मैं कगन पाऊँ ॥५॥

अभी सूर्य को मना भी न पाई थी कि पुत्र का जन्म हुआ। ननद लट खोलकर नाचने लगी कि हे भौजी ! मै कगन लूँगी ॥६॥

स्त्री ने कहा—यह कगन न तेरे भाई ने गढाया है, न तेरे बाबा ने इसे खरीदा है। इसे तो मै अपने नैहर से ले आई हूँ। मै कगन नही दूंगी ॥७॥

ननद ने कहा—तुम कुपात्र की कन्या हो, सुपात्र कैसे हो सकती हो ? भौजी ! तुमने ओसारे मे जो वादा किया था, उसे पूरा करो ॥८॥

मै तुमको सात लात लगाऊगी और दो थप्पड मारकर कगन छीन लूँगी और पछेला भी ले लूँगी ॥९॥

स्त्री ने हाथ से कगन निकालकर नीवी मे चुरा लिया और कहा—हे ननद ! फूस जलाकर जरा उजाला कर। कंगन कही खो गया ॥१०॥

बाहर से ससुर राजा आये और गरजकर बोले—हे बहू ! कगन दे डालो। बेटी परदेशिन है ॥११॥

बाहर से स्वामी आये और दपटकर बोले—मेरी बहन को कगन दे डालो। नही तो वह दु खी होगी ॥१२॥

सभा मे से देवर राजा घुडककर बोले—भौजी ! तुम कगन न दोगी तो मै बहन के लिये विदेश चला जाऊगा। अपनी ढाल-तलवार बेचकर बहन को कगन लाकर दूँगा और उसे मनाऊगा ॥१३॥

स्त्री ने इतनी कहा सुनी के बाद नीवी से कगन निकाला और ननद के आगे आँगन मे फेककर कहा—ले सात भतारवाली ! पहनकर मेरी सौत बन ॥१४॥

ननद कगन पहनकर खडी हुई और सूर्य देव से कहने लगी—हे सूर्य भगवान ! मेरे भाई की सेज बढे, जिससे मै हमेशा आती रहू ॥१५॥

यह गीत उस समय का है, जब हिन्दुओ मे छुरी-कटारी बाधने का शौक था, और लोग दूर-दूर जाकर छुरी-कटारी खरीद लाया करते थे।

इस गीत मे ननद-भौजाई के चोचले है। पुत्र-जन्म पर ननद को गहने आदि चीज़े मिलती है। वह खुशामद करके, कभी-कभी रूठकर और लड-झगडकर भी चीजे लिया करती है। पर उसकी लडाई के मूल मे प्रेम का अथाह समुद्र भी होता है। जैसा इस गीत मे ननद ने कहा है—

मारब सात गडहरी गले दुई थप्पड।
कगना के जाट पछेलवा दुनौ हम लेबइ ॥

ऐसा वाक्य निधडक होकर वही कह सकता है, जिसमे पूर्ण प्रेम हो।

ननद-भौजाई मे हसी मज़ाक करने का भी रिश्ता है। भौजाई ने कगन देते समय मज़ाक किया भी है।

यह गीत किसी ननद का बनाया हुआ है। इसमे भौजाई को शर्मिंदा किया गया है। ननद के लालच की तो हद होती ही नहीं।

भौजाई को अपना घर भी तो देखना पडता है। इसी से उसे कंजूस कहा गया है।

सबसे मार्मिक और करुणापूर्ण शब्द इस गीत मे 'बिटियवा परदेसिनि है।

[५५]

गहिरी जमुनवा के तिरवाँ चनन गछ रुखवा हो।
तिन डरिया परे है हिंडोलवा झुलहिँ रानी रुकुमिनि हो॥ १॥
झुलतहिँ झुलत अबेर भा है औरौ देर भा है हो।
मोरा टुटला मोतिन केर हार जमुन जल भीतर हो॥ २॥
धावउ बहिनि चकैया तूँ हाली बेगि आवउ हो।
चकई ! चुनि लेव मोतिन क हार जमुन जल भीतर हो॥ ३॥
अगिया लगाओ तोरा हरवा बजर परै मोतिन हो।
बहिनी ! सँझवै से चकवा हेरान ढूँढ़त नहिँ पावउँ हो॥ ४॥

गहरी नदी जमना के किनारे चन्दन का एक घना वृक्ष है। उसकी डाल पर हिंडोला पडा है। उस पर रानी रुक्मिणी झूल रही है॥ १॥

झूलते-झूलते बहुत देर हो गई। यकायक उनका मोती का हार टूट गया और मोती यमुना के जल मे जा गिरे॥ २॥

रुक्मिणी ने चकई से कहा—हे चकई बहन ! जल्दी दौडकर आओ, और मेरे हार के मोती यमुना के भीतर से चुनकर निकाल दो॥ ३॥

चकई स्वयं चकवा के वियोग मे व्याकुल हो रही थी। उसने कहा—तुम्हारे हार मे आग लगे, मोती पर बज्र गिरे। साँझ से ही मेरा चकवा कहीं खो गया है। मैं ढूंढ रही हूँ और पाती नही हूं॥ ४॥

प्रिय्मम की खोज से बढ़कर ससार मे और ज़रूरी काम क्या है ?

[५६]

अँगने मे फिरहिं जच्चा रानी हथवाँ गोबर लिहे।
सासु कौन महल मोहिं देहौ तवन घर लीपब हो ॥ १ ॥
मैया तो बोलै न पावै की ननद उठि बोलै।
अम्मा यहि हरजोतवा की बिटिया दिहौ घर भुसउल ॥ २ ॥
दूर से आए सिर साहेब हडपि तड़पि बोलैं।
बहिनी बडे रे साहेब की बिटियवा देहु घर ओबरि ॥ ३ ॥
होत भोर पह फाटत होरिला जनम भए।
बाजै लागी अनँद बधैया उठन लागे सोहर ॥ ४ ॥
बाहेर बाजै बधैया भीतर उठै सोहर।
लट खोले झगडै ननदिया कँगन भौजी लेबै ॥ ५ ॥
केतनौ ननदी तु नाचो जियरा नही हुलसै।
ननदी समुझौ आपन बोल दिहेउ घर भुसउल ॥ ६ ॥

हाथ मे गोबर लिये जच्चा रानी घूम रही है। हे सास ! मुझे कौन सा घर दोगी ? बता दो, तो मै उसे लीप लूँ ॥ १ ॥

सास बोलने भी न पाई थी कि ननद ने उठकर कहा—माँ ! इस किसान की बेटी का भूसे का घर दे दो ॥ २ ॥

इतने मे बाहर से स्वामी आ गये। बहन की बात सुनकर उन्होने घुडककर कहा—बहन ! यह बडे घर की कन्या है, इसे खास घर दो ॥ ३ ॥

पौ फटते ही पुत्र का जन्म हुआ। आनन्द की बधाई बजने लगी और सोहर गाया जाने लगा ॥ ४ ॥

बाहर बधाई बज रही है, भीतर सोहर हो रहा है। ननद लट खोलकर झगड़ रही है कि हे भौजी ! मैं कगन लूँगी ॥ ५ ॥

भौजाई ने कहा—हे ननद ! तुम कितना ही नाचो, पर मेरे मन

मे उत्साह नही हो रहा है। तुम अपनी बोली को याद करो, जो तुमने कहा था कि भूसे का घर दे दो ॥ ६ ॥

ननद-भौजाई मे मेल बहुत कम देखने मे आता है। कही-कही तो सास-बहू मे वैमनस्य करा देने मे ननद ही कारण होती है।

[५७]

काहे रे अमवा हरिअर ना जानो कौने गुना।
ललना ना जानो मलिया के सींचे त ना जानो खेत गुना ॥ १ ॥
ना यह मलिया के सींचे ना यह खेत गुना।
ललना रिमिकि झिमिकि दैवा बरिसै त उनही बूँद गुना ॥ २ ॥
होरिल तौ बड सुन्दर ना जानो कौने गुना।
है हो ना जानो अम्मा के सँवारे त ना जानो कोखी गुना ॥ ३ ॥
ना यह अम्मा के सँवारे तौ ना यह कोखी गुना।
ललना मोर पिया तप व्रत कीन त उनही के धरम गुना ॥ ४ ॥
बारह बरिस बन सेवले त गुरू घर से अवले हो।
ललना तब घर बबुआ जनमले सोहर अब सुनब हो ॥ ५ ॥
मचियहिं बैठी है सासु त बहुआ से पूँछइँ हो।
बहुआ कवन कवन फल खायू होरिल बड सुन्दर हो ॥ ६ ॥
फल तो खायूँ नौरँगिया त आम छोहारो हो।
सासू नरियर दाख बदाम नाही रे जानौ वहि गुन हो ॥ ७ ॥
सभवहिं बैठे है ससरु त बहुआ से पूछइँ हो।
बहुआ कवन कवन तप कीहिउ होरिल बड सुन्दर हो ॥ ८ ॥
सासु क बचन न टारेउँ न ननद तुकारेउँ हो।
ससुरु कबहुँ नलाईलूकी लायउँ नाही रे जानौ वहि गन हो ॥ ९ ॥
सुपेली खेलत कै ननदिया त भौजी से पूँछइ हो।
भौजी कवन कवन व्रत कीहिउ होरिल बड़ सुन्दर हो ॥ १० ॥

स्वामी क मानेउँ हुकुमवा देवर क दुलारेउँ हो।
ननदा ! सब कर लिहेउँ असीस त ना जानौं वहि रे गुना ॥१॥

यह आम का वृक्ष हरा क्यो है ? मालूम नही, माली के सीचने से यह हरा है या खेत के प्रभाव से ? ॥१॥

न यह माली के सीचने से हरा है, न खेत के प्रभाव से। रिमझिम करके जो बादल बरसते हैं, उन्ही की बूंदो के प्रभाव से यह हरा है ॥२॥

यह बालक बहुत सुन्दर है। इतना सुन्दर यह क्यो है ? नहीं जानता इसकी माँ ने इसको ऐसा सुन्दर सँवार रक्खा है ? या उसकी कोख का ऐसा प्रभाव ही है ? ॥३॥

नही, नही, न तो यह माँ के सवारने से इतना सुन्दर है और न कोख का ही प्रभाव है। मेरे पति ने बहुत तप-व्रत किया था। उन्ही के धर्म के प्रभाव से यह इतना सुन्दर है ॥४॥

हे सखी ! मेरे पति बारह वर्ष तक वन मे गुरु के घर मे रहकर विद्या पढते रहे। फिर घर आये। तब इस बालक का जन्म हुआ। अब सोहर सुनेंगी ॥५॥

मचिये पर बैठकर सास बहू से पूछती हैं—बहू ! तुम ने क्या-क्या फल खाया जो तुम्हारा पुत्र इतना सुन्दर है ? ॥६॥

बहू ने कहा—मैंने नारगी, आम, छोहारा, नारियल, दाख और बादाम खाया था। शायद इन्ही के प्रभाव से बालक सुन्दर हुआ हो ॥७॥

सभा मे बैठे हुये ससुर बहू से पूछते है—हे बहू ! तुमने कौन सा तप किया है जो तुम्हारा बच्चा बड़ा सुन्दर है ? ॥८॥

बहू ने कहा—हे ससुरजी ! मैंने कभी सासजी की बात नहीं टाली। न ननद का तिरस्कार किया। न कभी इधर की बात उधर लगाई। शायद इसी के गुण से बच्चा इतना सुन्दर हुआ हो ॥९॥

सुपेली (छोटा) सूप खेलती हुई ननद ने पूछा—हे भौजी ! तुमने कौनसा व्रत किया था जिससे तुम्हारा बालक इतना सुन्दर है ? ॥१०॥

बहू ने कहा—हे ननद ! मैने सदा स्वामी की आज्ञा का पालन किया। देवर को प्यार किया और सब का आशीर्वाद लिया । शायद इसी से मेरा बालक सुन्दर हुआ है ॥११॥

यह गीत क्या है, एक आदर्श-बहू का सुन्दर चित्र है। बालक सुन्दर क्यो हुआ है ? इसके लिये उसके पिता का तपोनिष्ठ और धर्मिष्ठ होना आवश्यक है। साथ ही उसकी माँ भी ऐसी हो, जो गृहस्थी मे अपना कर्तव्य-पालन करती हुई, घर क सब छोटे-बडो को सुख देकर, उनस आशीर्वाद प्राप्त करे। उत्तम चरित्र वाले माँ-बाप का पुत्र सुन्दर क्यो न होगा ?

[५८]

जेठ बैसखवा की गरमी पसिनवाँ से व्याकुल।
मोरे साहब बाहर बँगला छवउतेउ दुनौ जन सोइत ॥ १ ॥
ना हम बँगला छवैबै न हम घर रहबै हो।
मोरी रानी ! हम तो जावइ परदेस नैहर चली जावउ ॥ २ ॥
ना मोरे माई न बाबा न मोर सग भैया हो।
स्वामी ! भौजी बोलइ विष बोल करेजवा मँ सालै ॥ ३ ॥
सास क चरन पखरबै ननद क दुलरवइ।
साहब ! देवरा कै धोतिया पछरवइ यही हप रहबै ॥ ४ ॥
एतना बचन जब सुने घोडे से उतर पडे।
मोरी रानी हरियर बँसवा कटइबै त बँगला छवइबै ॥ ५ ॥
छरहर बँसवा कटायेन बँगला छवायेन हो।
मोरी रानी सीतल बहै बयरिया सोउ सुख नींदर ॥ ६ ॥

बैसाख-जेठ की गरमी मे मै पसीने से व्याकुल हो जाती हू। हे मेरे

स्वामी ! बाहर एक बँगला छवा दो तो उसमें हम दोनो सोयें ॥१॥

स्वामी ने कहा—न हम बँगला छवायेंगे, न हम घर रहेंगे। हे मेरी रानी ! मै तो परदेश जाऊँगा। तुम नैहर चली जाओ ॥२॥

स्त्री ने कहा—न मेरी माँ है, न मेरे बाप है, न मेरा कोई सगा भाई है। चचेरे भाई की स्त्री ऐसी कडी बात बोलती है जो विष की तरह मेरे कलेजे मे सालती है ॥३॥

मै यही रहूँगी। सास के पैर धोऊँगी। ननद को प्यार करूँगी। देवर की धोती धोऊँगी। मै यही रहूँगी ॥४॥

स्त्री की यह सहृदयता से भरी हुई वाणी सुनते ही पति घोडे से उतर पडा। उसने प्रेम से गदगद होकर कहा—मेरी रानी ! मै हरे-हरे बाँस कटाकर बगला छवा दूँगा ॥५॥

पति ने लम्बे और सीधे बाँस कटवा कर बँगला छवा दिया और स्त्री से कहा—हे रानी ! ठडी-ठडी हवा चल रही है। जाओ, बँगले मे सुख की नीद सोओ ॥६॥

[५६]

चैतहि कै तिथि नवमी त नौबति बाजइ हो।
बाजै दसरथ राज दुवार कौशिल्या रानी मदिर हो ॥ १ ॥
मिलहु न सखिया सहेलरि मिलि जुलि आवहु हो।
जहाँ राजा के जनमे है राम करिय नेवछावरि हो ॥ २ ॥
केउ नावै बाजूबन्द केउ कजरावट हो।
केउ नावै दखिनवा कै चीर करहि नेवछावरि हो ॥ ३ ॥
भितरा से निकसीं कौशिल्या अगनवहि ठाढी भई हो।
रानी धइ धइ हिरदै लगावै करै नेवछावरि हो ॥ ४ ॥
राम के मथवा चननवा बहुत निक लागै हो।
राम नयन रतनारे कजर भल सोहै।

दीन्हों रचि रचि फूआ सुभद्रा तउ पतरी अगुरियन ॥ ५ ॥
राम के मथवा लुटुरिया बहुत निक लागै हो।
जैसे फूलन के बिच बिच कलियाँ बहुत निक लागै ॥ ६ ॥
राम के गोडवाँ घुँघुरुवा बहुत निक लागै हो।
नान्हे गोडवन चलत बकैया देखत राजा दसरथ ॥ ७ ॥

चैत की नवमी है। राजा दशरथ के राज-द्वार पर और रानी कौशल्या के महल मे नौबत बज रही है ॥१॥

हे सखियो ! मिल-जुल कर आओ। चलो, राजा दशरथ के राम जन्मे है, चलकर उनकी न्योछावर करे ॥२॥

कोई बाजूबन्द न्योछावर कर रही है। कोई कजरौटा और कोई दक्षिण का चीर न्योछावर कर रही है ॥३॥

कौशल्या भीतर से निकली और आँगन मे खडी हुई। रानी न्योछावर करनेवालियो को बडे प्रेम से हृदय से लगा रही है ॥४॥

राम के माथे पर चन्दन बहुत अच्छा लग रहा है। राम के रतनारे नेत्रो मे काजल बहुत सुन्दर लगता है। फूफी सुभद्रा ने अपनी पतली उँगलियो से खूब बना-बनाकर काजल दिया है ॥५॥

राम के माथे पर घुँघराले बाल बहुत सुन्दर लगते है। जैसे फूलो के बीच मे कलियाँ बहुत अच्छी लगती है ॥६॥

राम के पैर मे घुघरू बहुत अच्छे लगते है। राम नन्हे पैरो से बकैयाँ चल रहे है। राजा दशरथ देख रहे है ॥७॥

कैसा स्वाभाविक वर्णन है। इस गीत मे आँखो मे काजल लगाने की कला का जिक्र है। राम की फूफी यद्यपि सुभद्रा नहीं थी, पर गीतो मे राम और कृष्ण का सारा परिवार एक कर लिया गया है। सुभद्रा के लिये गीत मे कहा गया है कि उन्होने अपनी पतली उगली से राम की आँखो मे बहुत सुन्दर काजल लगाया था। आजकल की स्त्रियो मे इस

कला का ह्रास होता जा रहा है। अब तो स्त्रियाँ भूत-प्रेत और नज़र-टोने ही के डर से अपने बच्चो की आँखो मे काजल लगाती हैं,बल्कि लीपती है। पर वे स्वय अपनी आखो मे भी अच्छी तरह रच-रचकर काजल लगावें तो उनका सौन्दर्य और अधिक मनोमोहक हो सकता है।

[६०]

कौने बन उपज सुपरिया कौने बन नरियर हो।
चेरिया कौने बन फुलली कुसुमियाँ मैं चुनरी रंगैबै हो॥ १॥
जेठ बन उपजी सुपरिया ससुर बन नरियर हो।
सैय्याँ बन फुललीं कुसुमियाँ तौ चुनरी रँगावउ हो॥ २॥
एक तौ अंगवा कै पातरि दुसरे गरभ सेती हो।
पहिरे कुसुम रग सारी तौ बेदना बेआकुल हो॥ ३॥
सासु मोरी बेनियाँ डोलावै ननद मुख चूमै हो।
भौजी छिन एक बेदना निवारो होरिल तुमने होइहै,
सोहर अबहिं सुनाबउ हो॥ ४॥
तौ का बिख बोलिउ ननदिया जहर बिख लागै हो।
ननदी सरग नियर भुइयाँ दूरि होरिल कहाँ होइहै हो॥ ५॥
आपन मैया जे होतीं बेदन हरि लेतीं हो।
हरिजी कै मैया निरबेदनी त होरिल होरिल करै
सोहर सोहर करै हो॥ ६॥

किस बन मे सुपारी पैदा होती है? किस बन मे नारियल? और हे दासी! किस बन मे कुसुम फूलता है? मै चूनरी रँगाऊँगी॥१॥

दासी कहती है—जेठ के बन मे सुपारी पैदा होती है, और ससुर के बन मे नारियल। तुम्हारे स्वामी के बन मे कुसुम फूला है। तुम चूनरी रँगा लो॥२॥

स्त्री एक तो शरीर से पतली, दूसरे गर्भ। वह कुसुम्मी रंग की साड़ी पहनकर प्रसव-पीडा से विकल है ॥३॥

मेरी सास बेनिया डुला रही है। ननद मुँह चूम रही है। ननद कहती है—भौजी! जरा धीरज धरो। तुम्हारे पुत्र होगा, अभी तुम सोहर सुनोगी ॥४॥

स्त्री कहती है—हे ननद! क्या विष बोलती हो? तुम्हारी बात मुझे जहर सी लग रही है। हे ननद! मुझे स्वर्ग समीप और धरती दूर दिखाई पड रही है। बच्चा कहाँ होगा? ॥५॥

हा! आज जो मेरी माँ यहाँ होती तो पीडा हर लेती। मेरे स्वामी की माँ वेदना नहीं जानती। उनको तो बस पुत्र-पुत्र और सोहर-सोहर की रट लगी है ॥६॥

स्वाभाविक वर्णन।

[६१]

पिया मोर चलले नोकरिया त बडे रे गरब से।
हथवा चम्पे केर छडिया त माथे पर चन्दन ॥ १ ॥
पियवा न होउ मोर पियवा तुहीं सिर साहब।
मोर पियवा जब हम गरुए गरभ से तू चललेब नोकरिया ॥ २ ॥
धनिया न होउ मोरी धनिया तुही ठकुराइन।
धनिया काहे तोर बदन मलीन कहे मन घूमिल ॥ ३ ॥
पियवा न होउ मोरे पियवा तुहीं सिर साहब।
मोरे राजा छिन एक बेनिया डोलउतेउ नीद भरि सोइत ॥ ४ ॥
ओरी कै पानी बडेरिया कैसे धन जैहै।
मोरी रानी हम कैन बेनिया डोलैबै तु नींद भरि सोइहौ ॥ ५ ॥
भुरजा उवत पह फाटत होरिलवा जनम लिहिन
बबुवा जनम लिहिन।

मोरे साहब बाजै लागी अनँद बधैया उठन लागे सोहर।
मतरग बाजै सहनैया दुआरे मोरे नौबति ॥ ६ ॥
हँकरौ नगरा के सोनरा हाली बेगि आओ।
मोरे सोनरा तू सोने रूप गढौ बेनियवा त धनिया मनावो ॥ ७ ॥
हँकरौ नगरा के बरई त हाली बेगि आओ।
अरे मोरे बरई तू सौ सठि बिरवा लगावो तौ धनिया
मनावो ॥ ८ ॥
एक हाथे लिहिनि बेनियवा दुसरे हाथे बिरवा।
मोरी रानी अब हम बेनियाँ डोलैबै नीद भरि सोवौ ॥ ९ ॥
बेनिया तो हाँकौ अपनी मैया त सग पितियनिया।
मोरे राजा हमरे तो भये नन्दलाल त हम तौ जुडानेन ॥१०॥

बड़े धमड से मेरे स्वामी नौकरी के लिये चले। उनके हाथ मे चम्पा की छड़ी थी और माथे पर चन्दन सुशोभित था ॥१॥

स्त्री कहती है—हे मेरे प्रियतम! तुम्ही मेरे प्राणाधार हो। तुम्ही मेरे मालिक हो। जब मुझे गर्भ का भार है, तब तुम नौकरी को जा रहे हो? ॥२॥

पति कहता है—हे मेरी प्राणेश्वरी! तुम मेरी रानी हो। हे धन! तुम्हारा मुख मलिन क्यो है? और तुम्हारा मन धूमिल क्यो है? ॥३॥

स्त्री कहती है—हे मेरे नाथ! तुम एक क्षण पखा होकते, तो मै नीद भर सो लेती ॥४॥

पति कहता है—हे धन! कही ओलती का पानी बड़ेरी जाता है? मेरी रानी! मै पखा होकूँ और तुम नीद भर सोओ? यह उल्टी बात कैसे हो सकती है? ॥५॥

सबेरा होते ही बच्चा पैदा हुआ। आनन्द की बधाई बजने लगी

और सोहर गाया जाने लगा। द्वार पर शहनाई और नौबत बजने लगी ॥६॥

पति कहता है—गाँव के सुनार को बुलाओ, जल्दी बुलाओ। हे सुनार ! तुम सोने और चाँदी की पखी बना दो। मै अपनी रानी को मनाने जाऊँगा ॥७॥

गाँव के तम्बोली को जल्दी बुलाओ। हे तम्बोली ! जल्दी आओ। एक सौ बीडे लगाकर दो। मै अपनी लाडिली को मनाने जाऊँगा ॥८॥

पति ने एक हाथ मे पखी ली और दूसरे मे पान के बीडे। स्त्री के पास जाकर उसने कहा—हे रानी ! मै पखी हाँकूँगा, तुम नीद भर सो जाओ ॥९॥

स्त्री कहती है—हे पतिदेव ! तुम जाकर अपनी मा और सगी चची को पखी हाँको (उनकी सेवा करो)। हे राजा ! मुझे पखे की आवश्यकता नही रही। मेरे लाल पैदा हुये है, मेरा हृदय तो अब यो ही शीतल हो गया है ॥१०॥

पुत्रवती होने पर पति की दृष्टि मे पत्नी का आदर अधिक हो जाता है। एक बार प्रार्थना करने पर भी पति ने पखी नही हाँकी, बल्कि परिहास किया। पर जब पत्नी पुत्रवती हुई, तब वह उसे मनाने चला। बाँस की पंखी से नही, बल्कि सोने-चाँदी की पखी से। पति-पत्नी का यह प्रेम-कलह हिन्दुओ मे घर-घर पाया जाता है। और सच पूछा जाय, तो गृहस्थो के सुख का एक अश इस प्रकार के प्रेम-कलह मे भी है।

[६२]

दिन तौ सून सुरुज बिनु राति चदा बिनु रे।
बहिनी नैहर सून अपनी मैया बिनु ससुरे पुरुष बिनु रे ॥ १ ॥
गरुई गठरिया केन बँधिहै मैया बिनु रे।
एहो लपकि खबरिया केन लेइ है तो अपने भैया बिनु रे ॥ २ ॥

जैसे सूर्य के बिना दिन सूना है और चन्द्रमा के बिना रात सूनी है, वैसे ही मां के बिना नैहर और पुरुष बिना ससुराल सूनी है ॥१॥

माँ के बिना भारी गठरी बाँधकर कौन देगा ? भाई न हो तो झपटकर बहन के दुख-सुख की ख़बर कौन लायेगा ? ॥२॥

[६३]

कुँअवा खोदाये कवन फल हे मोरे साहब !
झोंकवन भरै पनिहारिन तबै फल होइहै ॥ १ ॥
बगिया लगाये कवन फल हे मोरे साहब !
राहे बाट अमवा जे खैहै तबै फल होइहै ॥ २ ॥
पोखरा खोदाये कवन फल हे मोरे साहब !
गौआ पियै जूड पानी तबै फल होइहै ॥ ३ ॥
तिरिया के जनमे कवन फल हे मोरे साहब !
पुतवा जनम जब लैहै तबै फल होइहै ॥ ४ ॥
पुतवा के जनमे कवन फल हे मोरे साहेब !
दुनिया अनन्द जब होइ तबै फल होइहै ॥ ५ ॥

हे मेरे स्वामी ! कुँवा खोदाने का फल तभी है, जब झुड की झुड पनिहारिने पानी भरे ॥१॥

बाग लगाने का फल तभी है जब राह चलने वाले आम खायँ ॥२॥

तालाब खुदाने का फल तभी है, जब गाये ठडा पानी पीये ॥३॥

स्त्री होने का फल तभी है, जब उसके पुत्र हो ॥४॥

पुत्र होने का फल तभी है, जब ससार आनदित हो जाय ॥५॥

इस गीत का अतिम पद बडा मार्मिक है। 'पुत्र होने का फल तभी है जब संसार आनदित हो जाय।' ससार आनदित तभी होगा जब किसी उत्तम गृहस्थ के घर पुत्र उत्पन्न होगा, जिससे ससार को अपने कल्याण की आशा होगी। अथवा पुत्र उत्पन्न होकर अपने पुरुषार्थ से

ससार का दु ख दूर करे, उसे आनदित करे, तभी उसका जन्म सफल है। कैसी उच्च भावना है ! कुँवाँ खुदाना, तालाब खुदाना और बाग लगाना, गाँवो मे ये तीन काम पुण्य के गिने जाते है। गीत से यह प्रमाणित होता है कि पूर्वकाल मे लोग बाग अपने लिये नही, बल्कि राही-बटोही के आराम के लिये लगाते थे। आजकल बाग का फल बेच लेना एक साधारण बात नही, बल्कि बुद्धिमानी का काम समझा जा रहा है। पर किसी समय फल और दूध का बेचना इस देश मे पाप समझा जाता था। फल और दूध ही नही, पहले शिक्षा, औषधि और न्याय भी मुफ्त मिलता था। समय का फेर है, अब सब के दाम देने पडते है।

[६४]

मोरे पिछवरवाँ जम्हिरिया न लहर लहर करै।
उनकै महर महर आवै बास जम्हिरिया सुहावन ॥ १ ॥
कटबै मै बिरिछ जम्हिरिया न पलगा सलैबै।
सेइ पलँग हम सोइबै सलोनी धन कोरवा।
जेकर कमल फुलै दुनौ नैन बहुत निक लागै ॥ २ ॥
सेजिया से रुठलि तिरियवा जमुन तट ठाढी भई।
केवटा हालि बेगि नइया लेइ आवहु त परवा उतारहु ॥ ३ ॥
जौ मै नइया लैके आवउँ नेवरिया लैके आवउँ।
तिरिया का उतरौनी मोहि देइहौ त परवा उतारौ ॥ ४ ॥
देबूँ मैं हाथ की मुदरिया औ गर कै तिलरिया।
केवटा औ गज मोतिन क हार त परवा उतारौ ॥ ५ ॥
अगिया लगावउँ तोरी मुँदरी बजर परे तिलरी।
तिरिया आजु रैन बसि लेतिउ त परवा उतारौ ॥ ६ ॥

चाँद सुरज अस पियवा मैं सोवत छोडेउँ।
केवटा के तोर मति हरि लीन्ह पाप मन व्यापेउ ॥ ७॥
लहँगा कै बाँधिन मुरायठ ओढनी क पिछौरा।
तिरिया उतरि गई है पार केवट हाथ मींजै ॥ ८॥
जाते की दइयाँ अकेलिन लौटत बिरन सँग।
केवटा खलवा कढ़ाय भूसा भरतेउँ जौन मुख भाखेउ ॥ ९॥

मेरे पिछवाड़े जम्हीरी नीबू का वृक्ष लहालहा रहा है। उसमे से बड़ी मनोहर सुगंध आया करती है। जम्हीरी बड़ा सुन्दर लगता है ॥१॥

पति कहता है—मै उस नीबू को कटवाकर पलँग बनाऊँगा। उस पलँग पर मै अपनी सुन्दरी स्त्री के साथ सोऊँगा, जिसके दोनो नेत्र प्रफुल्लित कमल की तरह सुन्दर है और बहुत प्यारे लगते है ॥२॥

किसी कारण से स्त्री और पुरुष मे विवाद हो गया। सम्भवत नीबू के काटने मे राय नही मिली। इसलिये रूठकर स्त्री जमना के किनारे गई और उसने मल्लाह को कहा—जल्दी आओ, और मुझे पार उतारो ॥३॥

मल्लाह ने कहा—मै नाव लेकर आऊँ और पार उतारू, तो मुझे उतराई क्या दोगी ? ॥४॥

स्त्री ने कहा—मै हाथ की अगूठी दे दूँगी। गले की तिलडी दे दूगी। और यदि इतने पर भी तू सतुष्ट न होगा तो गजमुक्ताओ का हार द दूगी ॥५॥

मल्लाह न कहा—तुम्हारा अंगूठी मे आग लगे। तिलडी पर बज्र गिरे। हे स्त्री ! यदि तुम आज की रात मेरे यहो बस जाओ, तो मै पार उतार दू ॥६॥

स्त्री ने कहा—चाँद और सूर्य की तरह सुन्दर पति को तो मै सोता

छोड आई हूँ। केवट ! तेरी अक्ल किसने हर ली ? तेरे मन मे पाप समा गया है क्या ? ॥७॥

स्त्री ने घाघरे को तो सिर से लपेट लिया और ओढ़नी को पहन लिया। वह नदी मे कूद पड़ी और तैर कर पार हो गई। केवट हाथ मीजकर रह गया ॥८॥

जाते वक्त तो अकेली थी। पर लौटते वक्त उसका भाई साथ था। वापसी मे उसने मल्लाह को डाटा—तू ने उस दिन जो बात मुंह से निकाली थी, उसके बदले मे, मेरे जी मे आता है कि, तेरी खाल खिचवाकर उसमे भूसा भरा दू ॥९॥

इस गीत मे उस समय के हिन्दू-समाज की दशा का वर्णन है जब स्त्रियाँ ऐसी हिम्मतवाली होती थी कि अकेली सफर कर सकती थी और नाव न मिलने पर जमुना ऐसी नदी तैर कर पार हो जाती थी, तथा मल्लाह ऐसे मनचलो की मरम्मत भी कर सकती थी। यह बेचारा एक गीत उस ज़माने की यादगार बनाये हुये है।

[६५]

अलबेली जच्चारानी खूब बनी।
अपने पिया कै सोहागिन खूब बनी।
जैसे रेशम कै लारछा जच्चारानी केश बनी।
जैसे चन्दन कै होरसा जच्चारानी माथ बनी।
अलबेली जच्चा० ॥ १ ॥
जैसे आम केर फाँकिया जच्चारानी नैन बनी।
अपने पिया कै दुलारी जच्चारानी खूब बनी।
मतवाली जच्चारानी खूब बनी।
जैसे सुग्गा कै ठोरवा जच्चारानी नाक बनी।
अलबेली जच्चा० ॥ २ ॥

जैसे अनारे कै दाना जच्चारानी दाँत बनी।
अपने पिया कै सोहागिन जच्चारानी खूब बनी।
जैसे अनार कै कलियाँ जच्चारानी होंठ बनी।
मतवाली जच्चारानी खूब बनी।
अलबेली जच्चा० ॥ ३ ॥

जैसे केरा केर खँभिया जच्चारानी जाँघ बनी।
अपने पिया कै सुहागिन जच्चारानी खूब बनी।
जैसे केरा केर छीमिया जच्चारानी अँगुली बनी।
मतवाली जच्चारानी खूब बनी।
अलबेली जच्चा० ॥ ४ ॥

अलबेली जच्चारानी खूब सुन्दर लगती हैं। अपने पति की प्यारी सुहागिन जच्चारानी बहुत सुन्दर लगती है। जच्चारानी के केश ऐसे सुन्दर है, जैसे रेशम के लच्छे। जच्चारानी का माथा ऐसा सुन्दर है, जैसे चन्दन घिसने का हारसा (गोल शकल का पत्थर, जिस पर चन्दन घिसा जाता है) ॥ १ ॥

जच्चारानी के नेत्र ऐसे सुन्दर है, जैसे आम की फाँकी। अपने पति की प्यारी, रूपगर्विता, जच्चारानी बड़ी ही सुन्दर लगती है। जच्चारानी की नाक ऐसी सुन्दर है, जैसे तोते की चोंच ॥ २ ॥

जच्चारानी के दांत ऐसे सुन्दर है, जैसे अनार के दाने। अपने पति की सुहागिन जच्चारानी बड़ी सुन्दर है। जच्चारानी के होठ ऐसे लाल है जैसे अनार की कली। मतवाली जच्चारानी खूब अच्छी लगती है ॥ ३ ॥

जच्चारानी की जोंघ ऐसी है, जैसे केले का खंभा। सुहागिन जच्चारानी बड़ी सुन्दर है। जच्चारानी की उङ्गलियाँ ऐसी सुन्दर हैं, जैसी केले की फलियाँ। मतवाली जच्चारानी बड़ी सुन्दर हैं ॥ ४ ॥

[६६]

हँसि हँसि पूछै राजा त रानी के राजा हो।
मोरी रानी कहाँ लगाई इती देर बिरस मन होइ गया रे ॥१॥
फूल बिनन गई बगियै वही फुल-बगियै।
ये मोरे राजा बारी को लगन भँवरवा अँचर गहि राखेउ ॥ २ ॥
लावो न ढाल तरवरिया अरि कमर कटरिया।
मोरी रानी मारौं मै बारी को भँवरवा अरि मित्र तुम्हारो
अरि बैरी हमारो है रे ॥ ३ ॥
डारन डारन पिया फिरै पातन भँवरा।
ये मोरे भँवरा उड़ि के न बैठो फुलवरिया राजा तुम्हे मारे ॥ ४ ॥
डेहरी तो सूनि मेहरी बिन मेहरी मरद बिन हो।
जैस बैसे मोरी सूनी फुलवरिया अकेले भवरा बिन ॥ ५ ॥

राजा ने हसकर पूछा—हे मेरी रानी ! तुमने इतनी देर कहा लगाई ? तेरा मन विरस हो गया ॥१॥

रानी ने कहा—मै बाग मे फूल बीनन गई थी। हे राजा ! वहा मेरे बचपन के प्रेमी भौरो ने मेरा आँचल पकडकर रोक लिया था ॥२॥

राजा ने कहा—मेरी ढाल तलवार लाओ। मेरे कमर का कटारी लाओ। मै तुम्हारे बचपन के प्रेमी भौरे को मारूँगा। तुम्हारा मित्र मेरा शत्रु है ॥३॥

मेरे प्रियतम डाल-डाल फिर रहे है और भौरा पात-पात। हे भौरा ! फुलवाड़ी से उडकर चले जाओ न ? राजा तुम्हे मारेगे ॥४॥

रानी कहती है—हाय ! स्त्री बिना डेहरी (ड्योढी, देहली) सूनी है। पुरुष बिना स्त्री सूनी है। वैसे ही अकेले एक भौंरे के बिना फुलवाड़ी सूनी है ॥५॥

[६७]

सुखिया दुखिया दोनों बहिनियाँ।
दोनों बधावा लै आई हरे राजा बीरन ॥ १ ॥
सुखिया जे लाई गंजहरा गोडहरा।
दुखिया दूब कै पोडा हरे राजा बीरन ॥ २ ॥
सुखिया जे पूँछै अपने बीरन से।
बिदा करो घर जाई हरे राजा बीरन ॥ ३ ॥
लेहु न बहिनी कोछ भरि मोतिया।
सैयाँ चढन का घोडा हरे राजा बीरन ॥ ४ ॥
दुखिया जे पूँछै अपने बीरन से।
बिदा करौ घर जाई हरे राजा बीरन ॥ ५ ॥
लेहु न बहिनी कोछ भरि कोदौ।
वहै दूब का पोडा हरे मोरा बहिनी ॥ ६ ॥
गउवाँ गोइँडवा नँघही न पायो।
दुइ आ झरन लागी मोती हरे राजा बीरन ॥ ७ ॥
कोठे चढी ज भोजी पुकारै।
रूठी ननद घर लाओ हरे मोरे राजा ॥ ८ ॥

सुखिया दुखिया दो बहने थी। भाई के पुत्र होने पर दोनो बधावा लेकर आई ॥१॥

सुखिया बालक के लिये हाथ और पैर के कंद ले आई। और दुखिया बेचारी दूब के कुछ डठल खोट कर लाई ॥२॥

सुखिया अपने भाई से पूछती है—हे भाई! विदा करो तो मै घर जाऊँ ॥३॥

भाई कहता है—हे बहन! आँचल भरकर मोती लो और अपने पति के चढ़ने के लिये घोड़ा लो ॥४॥

दुखिया ने भाई से कहा—हे भाई ! विदा करो तो मैं भी अपने घर जाऊँ ॥५॥

भाई ने कहा—हे बहन ! आंचल भरकर कोदो (एक तरह का निकृष्ट चावल) लो और वही दूब का डठल लो ॥६॥

दुखिया बहन अभी गांव की सीमा लांघने भी न पाई थी कि दूब से मोती झडने लगे ॥७॥

उसकी भौजाई कोठे पर चढ़कर पुकारने लगी—मेरी ननद रूठ कर जा रही है। उसे मना लाओ ॥८॥

दुखिया बहन गरीब घर मे ब्याही थी। भाई के बालक के लिये उसके पास देने को कुछ नही था। प्रेम-विवश वह थोड़ी-सी घास लेकर आई थी। सुखिया बहन गहने लेकर आई थी। भाई ने प्रेम का कुछ मूल्य नहीं आंका। केवल गहने और घास का मुक़ाबला किया। उसने दोनो को उनकी लाई हुई चीजो के अनुसार बदला देकर विदा किया। पर सुखिया स्वार्थ-वश आई थी, उसके स्वार्थ को दुखिया के विशुद्ध प्रेम से नीचा दिखाने के लिये ही यह रूपक बांधा गया है। घास से मोती झड़ते देखकर बहू का स्वार्थ फिर प्रबल होता है। दुखिया तिरस्कृत होकर गई थी। अब इसकी ग्लानि बहू को हुई। इस प्रकार स्वार्थ का नग्न नृत्य घर-घर मे हो रहा है। पर शुद्ध प्रेम और चीज़ है। वह घास मे मोती होकर झडता है।

[६८]

देहरी के ओट धन ठुनकई उनुन ठुनुन करई रे।
राजा हमरे तिलरिआ कै साध तिलरिआ हम लेबइ ॥ १ ॥
एक तो कारी कोइलिआ औ दुसरे छछुन्दरि।
रानी तोहरेउ तिलरिआ क साध तिलरिआ काउ करबिउ ॥ २ ॥
एतनी बचन रानी सुनलिन मन मे बिरोग भवा

जियरा दुखति भवा।
रानी कोइँछा मे लिहीं तिल चउरा न देव मनावइँ,
सुरजा मनावइँ ॥ ३ ॥
आठ महीना नौ लगतइ, होरिल जनम लिही,
बबुआ जनम लिहीं रे।
बहिनी बाजइ लागी अनँद बधइया उठन लागे सोहर ॥ ४ ॥
अँगनइ बजत बधइया भितर मोरे सोहर हो।
बहिनी सतरँग बाजइ सहनइया ससुर द्वारे नौबति रे ॥ ५ ॥
हँकड़हु नगर के सोनरा हाली बेगी आवइ,
आरे जल्दी आवइ रे।
सोनरा गढि लाओ सोने क तिलरिआ मै
रानी का मनावऊँ ॥ ६ ॥
हँकड़हु नगरकेबरई हालही बेगी आवइ जल्दीसआवइ।
बरई मोहर क बिरवा लगावउ मै लछनी मनावऊँ ॥ ७ ॥
दहिने हाथे लिहिन तिलरिआ बाये हाथे बिरवाउ रे।
राजा झमकि के चढि गै अटरिआ तो रनियाँ मनावइँ ॥ ८ ॥
सूतल रानिआ मनावइँ जाँघ बैठावइँ।
रानी छोड़ि देव मन कै बिरोग पहिरो रानी तिलरी ॥ ९ ॥
राजा हम तौ कारी कोइलिआ तिलरी नाही सोहइ।
राजा हमरे पलँग मति बैठौ साँवर होइ जाबेउ रे ॥१०॥
राजा होरिला दिहिन भगवान त तुम्हरे धरम से हो।
राजा पाये रतन अनमोल तिलरिआ काउ करबइ हो ॥११॥

देहली की ओट मे स्त्री ठुनक रही है। हे राजा ! मेरे लिये एक तिलड़ी (तीन लड़ का हार) बनवा दो। मुझे तिलड़ी पहनने की बड़ी इच्छा है ॥१॥

पति ने कहा—वाह ! एक तो तुम कोयल ऐसी काली-कलूटी दूसरे छछूंदर ऐसी गंदी । तुम्हे भी तिलडी का शौक चर्राया हे ? तुम तिलडी क्या करोगी ? ॥२॥

यह बात सुनकर स्त्री के मन मे बडा दु ख हुआ । वह आंचल मे तिल और चावल लेकर सूर्य देवता को मनाने लगी ॥३॥

आठवें महीने के बाद नवा लगते ही पुत्र का जन्म हुआ । आनद की बधाई बजने लगी और सोहर होने लगा ॥४॥

आंगन मे बधाई बज रही है । भीतर सोहर हो रहा है । ससुर के द्वार पर शहनाई और नौबत बज रही है ॥५॥

पति ने कहा—नगर के सोनार को बुलाओ । अरे सुनार ! जल्दी आओ । सोने की तिलडी बनाकर जल्दी लाओ । मै अपनी रानी को मनाऊगा ॥६॥

नगर के बरई (तम्बोली) को बुलाओ । तम्बोली ! तुम जल्दी एक-एक मुहर का एक बीड़ा लगाकर लाओ । मै अपनी लक्ष्मी को मनाऊँगा ॥७॥

दाहिने हाथ मे तिलडी और बायें मे बीडा लेकर पति अटारी पर झपटकर चढ गया और स्त्री को मनाने लगा ॥८॥

सोई हुई स्त्री को उसने जगाया, गोद म बैठाया और कहा—मेरी रानी ! मन का विक्षोभ छोड़ दो और यह लो तिलडी पहनो ॥९॥

स्त्री ने कहा—हे राजा ! मै तो काली-कलूटी कोयल हू । मुझे तिलडी अच्छी नहीं लग सकती । हे राजा ! तुम मेरी पलग पर न बैठो, नही तो सांवले हो जाओगे ॥१०॥

हे राजा ! भगवान् ने तुम्हारे धर्म के प्रभाव से मुझे पुत्र दिया है । ऐसा अनमोल रत्न पाकर अब मै तिलडी लेकर क्या करूंगी ॥११॥

[६६]

ननद भौजाई दूनो पानी गई अरे पानी गई।
भौजी जौन रवन तुहै हरि लेइ ग उरेहि देखावहु ॥ १ ॥
जौ मै रवना उरेहौं उरेहि देखावउँ।
सुनि पैहै बिरन तुम्हार त देसवा निकरिहै ॥ २ ॥
लाख दोहइया राजा दसरथ राम मथवा छुवौ।
भौजी लाख दोहइया लछिमन भइया जो भइया से बतावउँ ॥ ३ ॥
मागौं न गंग गँगुलिया गगा जल पानी।
ननदी समुहे कै ओबरी लिपाइउ रवना उरेहौं ॥ ४ ॥
मागिन गाँग गंगुलिया गगा जल पानी।
सीता समुहे के ओबरी लिपाइन रवना उरेहै ॥ ५ ॥
हँथवहु सिरजिन गोडवहु नयना बनाइन।
आइ गये है सिरीराम अँचर छोरी मूँदनि ॥ ६ ॥
जेवन बैठे सिरीराम बहिन लोहि लाइन।
भइया जौन रवन तोर बैरी त भौजी उरेहै ॥ ७ ॥
अरे रे लछिमन भइया बिपतिया कै साथी।
सीता के देसवा निकारह रवना उरेहे ॥ ८ ॥
जे भौजी भूखे के भोजन नागे को बस्तर।
से भौजी गरुहे गरभ से मै कैसे निकारौं ॥ ९ ॥
अरे रे लछिमन भइया बिपतिया के नायक।
सीता क देसवा निकारौ इ त रवना उरेहै ॥ १० ॥
अरे रे भौजी सीतल रानी बडी ठकुराइन।
भौजी आवा है तोहका नेवतवा बिहान बन चलबइ ॥ ११ ॥
ना मोरे नैहर ना मोरे सासुर।
देवरा ! ना रे जनक अस बाप मैं केहि के जइहौ ॥ १२ ॥

कोंछवा के लिहिन सरसइया छिंटत सीता निकसीं।
सरसौ यहीं के अइहीं लछिमन देवरा कँदरिया तोरी खइहीं ॥१३॥
एक बन डाँकिन दुसर बन डाँकिन तिसरे बिन्द्रावन।
देवरा एक बुँद पनिया पिअउतेउ पिअसिया से ब्याकुल ॥१४॥
बैठह न भौजी चँदन तरे चँदना बिरिछ तरे।
भौजी पनिया क खोज करि आई त तुमकाँ पियाई ॥१५॥
बहै लागी जुड़ुली बयरिया कदम जूड़ि छहियाँ।
सीता भुइयाँ परीं कुम्हिलाय पिअसिया से ब्याकुल ॥१६॥
तोरिन पतवा कदम कर दोनवा बनाइन।
टागिन लवँगिया कै डरिया लछन चले घरके ॥१७॥
सोये साये सीता जागी झझकि सीता उठी है।
कहवाँ गये लछिमन देवरा त हमैं न बतायउ।
हिरदइया भर देखतेउँ नजर भर रोउतेउँ ॥१८॥
को मोरे आगे पीछे बैठइ को लट छोरै।
को मोरी जगइ रयनिया त नरवा छिनावइ ॥१९॥
बन से निकरी बन तपसिन सितै समझावै।
सीता हम तोरे आगे पीछे बैठब हम लट छोरब।
हम तोरी जगबै रयनिया त नरवा छिनउबै ॥२०॥
होत बिहान लोही लागत होरिल जनम भये।
सीता लकडी क करहु अँजोर सतति मुख देखहु ॥२१॥
तुम पुत भयहु बिपति मे बहुतै मँसनि मे।
पुत कुसै ओढ़न कुस डासन बन-फल भोजन ॥२२॥
जो पुत होते अजोध्या मे वही पुर पाटन।
राजा दसरथ पटना लुटौते कौसिल्या रानी अभरन ॥२३॥

अरे रे हँकरौ न बन के नउआ बेगिहिं चलि आवहु।
नउवा हमरा रोचन लै जाउ अजोध्यइ पहुँचावउ ॥२४॥
पहिले दिहौ राजा दसरथ दुसरे कौसिल्या रानी।
तीसरे रोचन लछिमन देवरा पै पिए न जनायउ ॥२५॥
पहिले दिहिन राजा दसरथ दुसरे कौसिल्या रानी।
तिसरे लछिमन देवरा पै पिए न जनायेसि ॥२६॥
राजा दसरथ दिहिन आपन घोडवा कौसिल्या रानी अभरन।
लछिमन देवरा दिहिन पाँचौ जोडवा बिहसि नउवा।
घर चल्यौ ॥२७॥

चारिउ खेंट क सगरवा त राम दतुइन करै।
भइया भहर भहर करै माथ रोचन कहं पायउ।
भइया केकरे भये नँदलाल त जिया जुडवायन ॥२८॥
भौजी तो हमरे सितल रानी बसहिं बिन्द्रावन।
उनके भये है नदलाल रोचन सिर धारेन ॥२९॥
हाथ क दतुइन हथ रहि मुख कै मुख रहा।
दुरै लागी मोतियन आँसु पितम्बर भीजै ॥३०॥
हँकरौ न बन के नउआ बेगि चलि आवहु।
नउआ सीता कै हलिया बतावह सीतै लै अउबै ॥३१॥
कुस रे ओढन कुस डासन बनफल भोजन।
साहब लकडी क किहिन अँजोर सतति मुख देखिन ॥३२॥

अरे रे लछिमन भइया बिपतिया के नायक।
भइया एक बेर जातेउ मधुबन क भौजइअउ लै अउतेउ ॥३३॥
अजोध्या के चलि गये मधुबन उतरे।
भौजी राम क फिरा है हँकार त तुम के बुलावैं ॥३४॥

जाव लछन घर अपने त हम नहिं जावै।
जौ रे जिये नदलाल तो उनही क बजिहै ॥३४॥

ननद और भौजाई दोनो पानी के लिये गईं। रास्ते मे ननद ने कहा—हे भौजी ! जो रावण तुम्हे हर ले गया था, उसका चित्र बनाकर मुझे दिखाओ ॥ १ ॥

भौजाई ने कहा—मै रावण का चित्र बनाकर तुम्हे दिखाऊ। पर तुम्हारे भाई सुन पाये, तो मुझे वे देश से निकाल देगे ॥ २ ॥

ननद ने कहा—मै राजा दशरथ की लाख शपथ कर के, राम का माथा छूकर और लक्ष्मण भाई की लाख कसम खाकर कहती हू, भाई से न कहेगी ॥ ३ ॥

भौजाई ने कहा—अच्छा,गगाजल लाओ। और हे ननद ! सामने की कोठरी लीप-पोतकर ठीक कर दो, तो मै रावण का चित्र बनादूँ ॥ ४ ॥

गगा जल आया और सामने की कोठरी लिपाई गई। भौजाई ने रावण का चित्र बनाया ॥ ५ ॥

पहले हाथ बनाया, फिर पैर। फिर आखे बनाई। इतने मे श्रीराम आ गये। सीता ने झटपट आँचल खोलकर उसे ढक लिया ॥ ६ ॥

श्रीराम भोजन करने बैठे। बहन ने चुगली खाई—हे भाई ! रावण, जो तुम्हारा बैरी है, उसका चित्र भौजी ने बनाया है ॥ ७ ॥

राम ने कहा—हे विपत्ति के साथी भाई लक्ष्मण ! सीता रावण का चित्र बनाती है, इसे देश से निकाल दो ॥ ८ ॥

लक्ष्मण ने कहा—जो सीता भूखो को भोजन और नगो को वस्त्र बाँटती है, और जिसे गर्भ भी है, मै उसे देश से कैसे निकालू ? ॥ ९ ॥

राम ने फिर कहा—हे विपत्ति के साथी भाई लक्ष्मण ! सीता रावण का चित्र बनाती है, इसे घर से निकाल दो ॥ १० ॥

लक्ष्मण ने सीता से कहा—हे भौजी ! हे सीतारानी ! हे बडी ठकु-

राइन ! मुझको और तुमको न्यौता आया है। कल बन को चलेंगे ॥ ११ ॥

सीता ने कहा—हे देवर ! मेरा न नैहर है, न ससुराल। न जनक ऐसा बाप ही है। मैं किसके यहा जाऊँगी ?।' १२ ॥

सीता आचल मे सरसो लेकर रास्ते मे बखेरती हुइ निकली। इस विचार से कि लक्ष्मण इधर से आयेंगे तो सरसो के मुलायम डठल तोडकर खायगे ॥ १३ ॥

एक बन को पार किया। दूसरे बन को पार किया। तीसरा वृन्दाबन था। सीता ने कहा—हे देवर ! प्यास लगी है। बहुत व्याकुल हू। एक बूँद पानी कही मिले तो ले आओ ॥ १४ ॥

लक्ष्मण ने कहा—हे भौजा ! इस चदन के वृक्ष के नीचे बैठ जाओ। मै खोजकर पानी ले आऊ, तब तुमको पिलाऊ ॥ १५ ॥

ठडा हवा बहने लगी। कदम्ब की छाया शीतल थी ही। सीता प्यास से व्याकुल होकर, कुम्हलाकर, धरती पर लेट गई ॥ १६ ॥

लक्ष्मण पानी लेकर लौटे। कदम्ब के पत्ते का दोना बनाकर, उसमे पानी भरकर लक्ष्मण ने उसे लवग की डाल से लटका दिया और स्वय घर का रास्ता लिया ॥ १७ ॥

सीता सो-साकर झिझक कर उठी उन्होने कहा—हे लक्ष्मण देवर ! तुम कहा गये ? मुझे नही बतलाया। तुमको मै जी भरकर देख तो लेती और तुमको देखकर आख भरकर रो तो लेती ॥ १८ ॥

हाय ! यहा बन मे मेरे आगे-पीछे कौन बैठेगा ? कौन मेरी लट खोलेगा ? कौन मेरी रात जागेगा ? और कौन बच्चे की नाल काटेगा ? ॥ १९ ॥

सीता का विलाप सुनकर बन की तपस्विनियाँ निकली। वे सीता को समझाने लगीं—हे सीता ! हम तुम्हारे आगे-पीछे रहेंगी। हम

तुम्हारी लट खोलेगी। हम तुम्हारी रात जागेंगी और हम बच्चे की नाल काटेंगी ॥ २० ॥

सबेरा हुआ। पौ फटते ही बालक का जन्म हुआ। नपरिवनियों ने कहा—हे सीता! लकडी जलाकर उसके उजाले मे अपने बच्चे का मुँह तो देखो ॥ २१ ॥

सीता बच्चे से कहने लगी—हे बेटा! तुम विपत्ति मे पैदा हुये हो। कुश ही तुम्हारा ओढना, कुश ही बिछौना और बन-फल ही तुम्हारा आहार है ॥ २२ ॥

हे पुत्र! यदि तुम अयोध्या मे पैदा हुये होते, तो आज राजा दशरथ, सारा शहर और रानी कौशल्या अपने कुल गहने लुटा देतीं ॥ २३ ॥

अरे! बन के नाई को बुलाओ न? जल्दी आवे। हे नाई! मेरा रोचन अयोध्या पहुचाओ ॥ २४ ॥

पहले राजा दशरथ को देना। दूसरे कौशल्या रानी को देना। तीसरे देवर लक्ष्मण को देना। पर मेरे पति को न बताना ॥ २५ ॥

नाई ने पहले राजा दशरथ को दिया। फिर कौशल्या को और फिर लक्ष्मण को। पर राम को नहीं जनाया ॥ २६ ॥

राजा दशरथ ने नाई को अपना घोडा दिया। कौशल्या ने गहना दिया। लक्ष्मण ने पाँचो जोडे (पगडी, अँगरखा, दुपट्टा, धोती और जूता) दिये। नाई खुशी से हँसता हुआ घर लौटा ॥ २७ ॥

चौकोर बड़े तालाब के किनारे राम दातुन कर रहे थे। इतने मे लक्ष्मण आ गये। उनके माथे पर रोचन का तिलक देखकर राम ने पूछा—हे भाई! तुम्हारा माथा खूब दमक रहा है। यह रोचन कहाँ से आया? किसके पुत्र हुआ है? पुत्र ने किसका हृदय शीतल किया है ॥ २८ ॥

लक्ष्मण ने कहा—मेरी भौजी सीता रानी, जो वृन्दावन मे रहती है,

उनके पुत्र हुआ है। उसी का रोचन मैंने माथे पर लगाया है ॥ २९ ॥

यह सुनते ही राम के हाथ की दातुन हाथ ही मे और मुँह की दातुन मुँही मे रह गई। राम की आँखों से मोती ऐसे आँसू ढुलने लगे और उनका पीताम्बर भीगने लगा ॥ ३० ॥

राम ने कहा—बन का नाई कहाँ गया ? बुलाओ। हे नाई ! सीता का समाचार मुझे सुनाओ। मैं सीता को ले आऊँगा ॥ ३१ ॥

नाई ने कहा—हे मालिक ! कुश का ओढ़ना, कुश का बिछौना और बन-फल का आहार है। सीता ने लकड़ी का उजाला करके तब अपने पुत्र का मुँह देखा है ॥ ३२ ॥

राम ने कहा—हे मेरे विपत्ति के नायक भाई लक्ष्मण ! एक बार तुम मधुबन जाओ और अपनी भौजाई को ले आओ ॥ ३३ ॥

लक्ष्मण अयोध्या से चलकर मधुबन मे उतरे। लक्ष्मण ने सीता से कहा—हे भौजी ! तुमको राम ने बुलाया है ॥ ३४ ॥

सीता ने कहा—हे लक्ष्मण ! तुम लौट जाओ। मै नहीं जाऊगी। यदि मेरे लाल जीते रहेगे, तो ये उन्ही के कहलायेंगे ॥ ३५ ॥

ऐसा कौन सहृदय है, जो इस गीत को पढ़कर रो न दे। इसमे ननद का, देवर का, पति का और तपस्विनियों का यथार्थ और अद्‌भुत चित्र खींचा गया है।

इस गीत मे कई बाते ध्यान देने की हैं। पहले तो यह कि हिन्दू स्त्रियो मे चित्रकला का प्रचार इतना अधिक था कि गीतों मे अब तक उसका वर्णन मिलता है।

दूसरे ननद का स्वभाव। ननद ने बार-बार शपथ खाकर भी भौजाई की बात अपने भाई से कह दी। सचमुच बहुत सी ननदे भौजाई की प्रतिष्ठा का ध्यान नहीं रखतीं।

तीसरे देवर का प्रतिवाद। देवर ने भौजाई का पक्ष लिया और बड़े

भाई से एक बार कहा—भौजाई को निकालना नही चाहिये। पर जब बडे भाई ने फिर अपनी आज्ञा दुहराई, तब छोटे भाई ने शिष्टाचार के सामने सिर झुकाया और बडे भाई की आज्ञा का पालन किया।

चौथे तपस्विनियो की सहानुभूति। अपनी मान-मर्यादा का अभिमान छोडकर दु खी के दु ख-निवारण मे तत्पर हो जाना आर्य-सस्कृति की एक ख़ास बात है।

पाँचवे माता की दीन-दशा। हाय! वह कैसा हृदय-विदारक दृश्य था, जब माता ने लकडी का उजाला करके अपने पुत्र का मुँह देखा। इस अवसर पर माता का विलाप पत्थर को भी पिघला देने वाला है।

छठे पति का अनुताप। छोटे भाई के मुँह से पुत्रोत्पत्ति का समाचार पाकर पत्नी की याद मे पति की आखो से जो आसू टपके है, उनमे अनन्त व्यथा और अपार पश्चात्ताप भरा हुआ है।

सातवें स्त्री का आत्म-गौरव। स्त्री ने नाई से कहा—'पियहिं न बतायउ' इस एक वाक्य मे आत्म-सम्मान दूर से एक पर्वत-शिखर की भाँति दिखाई पड रहा है। स्त्री ने पति की बुलाहट का जो उत्तर देवर को दिया है, उसमे भी वेदना का एक विशाल समुद्र लहरे मार रहा है।

इस गीत मे आदि से अन्त तक मनुष्यो के भिन्न-भिन्न स्वभावो के यथार्थ चित्र हैं।

[७०]

जब हम रहे जनक घर राजा रे जनक घर।
सखिया सोने के सुपेलिया पछोरौ मैं मोतिया हलोरौ ॥ १ ॥
जब हम परलीं राम घर राजा दशरथ घर।
जरि बरि भइउँ है कोइलिया त जर के भसम भइउँ ॥ २ ॥

सभवा बैठे हे रामचन्द्र पुछाइन राजा दसरथ।
पुता कौन सितल दुख दिहेउ सखिन सँग रोवै॥ ३॥
हँसि कै धनुख उठाइन बिहँसि कै पैठिन।
सीता अब मुख सोवऊ महलिया गुपुत होइ जावै॥ ४॥
अरे रे लछिमन देवरा बिपतिया के नायक।
देवरा भइया के लावऊ मनाय नाहीं त बिष खावै॥ ५॥
अरे रे भौजी सितल रानी बडी ठकुराइन।
देहना तिरिया कर्मनिया मैं भइया खोजै जैहौ॥ ६॥
ढूँढौं मै नग्र अजाध्या और पुर पाटन।
देवरा ढूँढेउ नाहीं गुपुत तलोवा जहाँ राम गुपुत भये॥ ७॥
केहि के मै सेजिया बिछावौं फूल छितरावौं।
देवरा केहि क मै लागौं टहलिया त दुख बिसरावो॥ ८॥
हमरेन सेजिया बिछावह फूल छितरावहु।
भौजी हमरेन लागौ टहलिया त दुख बिसरावह॥ ९॥
जौने मुख अमवा खायौ अँखिलिया कैसे चीखउँ।
जौने मुख लछिमन कहि गोहरायउँ पुरुख कैसे भाखउ॥ १०॥
अरे रे पापिनी भौजो पाप जनि बोलौ।
भौजी जैसे कौसल्या रानी माता वैसेन हम जानौं॥ ११॥
लाख दोहइया राजा दसरथ राम मथवा छुवौ।
बुड़वी मोर अमिरवा होइ जो धन कहि गोहरावउँ॥ १२॥

सीता ने कहा—जब मै राजा जनक के घर मे थी, तब हे सखियो! मै सोने की सुपेली मे पछोरती और मोती हलोरती थी॥ १॥

अब मै राम के घर मे—राजा दशरथ के घर मे—पड़ी हू। दुःख से जलकर मै कोयल हो गई, राख हो गई हू॥ २॥

रामचन्द्र सभा मे बैठे थे। राजा दशरथ ने पुछवाया—हे पुत्र! तुमने

सीता को क्या दु ख दिया ? जो वह सखियो के सामने रो रही थी ॥३॥

राम ने हंसकर धनुष उठाया। मुसकराते हुए वे घर मे आये। सीता से उन्होने कहा—सीता ! अब तुम महल मे सुख से सोओ। मैं गुप्त हो जाऊँगा ॥४॥

सीता ने कहा—हे मेरे देवर लक्ष्मण ! हे विपत्ति के साथी ! अपने भाई को मनाकर लाओ, नही तो मैं विष खा लूँगी ॥५॥

लक्ष्मण ने कहा—हे भौजी ! हे बडी ठकुराइन ! मेरा तीर-कमान ला दो, मै भाई की खोज मे जाऊंगा ॥६॥

लक्ष्मण ने लौट कर कहा—मैंने सारी अयोध्या नगरी ढूंढ डाली। सीता ने कहा—हा ! तुमने गुप्त सरोवर तो नही ढूंढा, जहां राम गुप्त हुये हैं ॥७॥

हाय ! मै किसकी सेज बिछाऊं ? किसके लिये फूल बखेरूँ ? किसकी सेवा करके अपना दु ख भूलूं ? ॥८॥

लक्ष्मण ने कहा—हे सीता ! मेरी सेज बिछाओ। मेरे लिये फूल बखेरो। हे भौजी, मेरी सेवा करके दु ख भूल जाओ ॥९॥

सीता ने कहा—जिस मुँह से मैने आम नहीं खाया, उस मुँह से इमली कैसे चखूं ? जिस मुँह से मैने तुमको लक्ष्मण कहकर पुकारा, उस मुख से तुमको पति कैसे कहूंगी ? ॥१०॥

लक्ष्मण ने कहा—हे पापिन भौजी ! पाप की बात मुँह से न निकालो। मैं तुमको माता कौशिल्या की तरह समझता हूं ॥११॥

मुझे राजा दशरथ की लाख शपथ है। मैं राम का माथा छूता हूं। गंगाजी में मेरा डुबकी लगाना व्यर्थ जाय, जो मै तुमको अपनी स्त्री कहूँ ॥१२॥

सीता और लक्ष्मण का आदर्श ईश्वर करे, हिन्दू-जाति मे चिरजीवी हो। गीत मे लक्ष्मण ने सीता के प्रति जो मनोभाव प्रकट किया है,

वह स्त्रियो की कल्पना-मात्र नहीं है। उसमे ऐतिहासिक तथ्य भी है। सुमित्रा ने लक्ष्मण को राम के बन जाते समय जो उपदेश दिया था, वाल्मीकि के शब्दो मे वह यह है—

रामं दशरथं विद्धि मांविद्धि जनकात्मजाम्।
अयोध्यामटवीं विद्धि गच्छ तात यथा सुखम्॥

अर्थात—हे पुत्र! राम को दशरथ समझना। सीता को सुमित्रा समझना। बन को अयोध्या समझना। बस, तुम सुख से जाओ।

लक्ष्मण ने सदा सीता को माता के समान समझा था। लक्ष्मण ने एक स्थान पर अपनी यह मानसिक पवित्रता प्रकट भी की थी। सुग्रीव ने जब पहली मुलाकात के अवसर पर सीता के फेंके हुये गहने लाकर राम के सम्मुख रखे थे, तब राम ने लक्ष्मण से पूछा था—लक्ष्मण! देखो, ये गहने सीता ही के है न? तब लक्ष्मण ने कहा था—

नाह जानामि केयूरे नाह जानामि कुण्डले।
नूपुरेत्वभिजानामि नित्य पादाभिवन्दनात्॥

अर्थात, मै इन बाजुओ और कुण्डलो को नही पहचानता। हाँ, नूपुर (बिछियो) को पहचानता हू। क्योकि प्रतिदिन मै चरण छूता था (तब इन्हे देखता था)।

अहा, लक्ष्मण केवल नूपुर को पहचानते थे। बीसो वर्ष साथ रह कर भी लक्ष्मण ने सीता के ऊपरी अगो पर दृष्टि नही डाली थी। कैसा उच्च कोटि का समाज था! और कैसे देवर भौजाई थे!

इस गीत मे, ऊपर की पक्तियो मे एक बात यह भी ध्यान देने की है कि सीता ने सखियो से एक ज़रा सी शिकायत की थी। इतने ही अपराध मे राम घर छोड़कर चले गये। इस प्रकार का स्वभाव देहात के पतियो मे खूब देखने मे आता है। किसी-किसी घर मे तो बहुत ही छोटी छोटी बातो को लेकर स्त्री-पुरुष महीनो मुँह फुलाये रहते हैं।

बात की चोट सब को बडी कडी लगती है। पर बहुत ही कम लोग कड़ी बात कहने मे अपने को रोकते है।

[७१]

माघै कै तिथि नौमी रास जग्गि रोपेन।
रामा ! बिना रे सिता जग्गि सूनि सितै लइ आवौ ॥ १ ॥
अरे रे गुरू बसिष्ठ मुनि पइयाँ तोर लागौं।
गुरु तुमरे मनाये सीता अइहीं मनाय लै आवहु ॥ २ ॥
अगवाँ के घोडवा बसिष्ठ मुनि पाछे लछिमन देवर।
हेरै लागे रिषि की मेहुलिया जहाँ सीता तप करे ॥ ३ ॥
अँगनेहिं ठाढी सीतल रानी रहिया निहारत।
रामा आवत है गुरू हमार त पाछे लछिमन देवर ॥ ४ ॥
पतवा के दोनवा बनाइन गगाजल पानी।
सीता धोवै लागीं गुरुजी के चरन औ मथवाँ चढ़ावै ॥ ५ ॥
येतनी अकिल सीता तोहरे तु बुधि कै आगरि।
किन तुम हरा है गेयान राम बिसराये ॥ ६ ॥
सब कै हाल गुरु जानौ अजान बनि पूछौ।
गुरु अस कै राम मोहिं डाहेनि कि कैसे चित मिलिहै ॥ ७ ॥
अगिया मे राम मोहिं डारेनि लाइ भूँज काढेनि।
गुरु गरुहे गरभ से निकारेनि त कैसे चित मिलिहै ॥ ८ ॥
तुमरा कहा गुरु करबै परग दुइ चलबै।
गुरु अब न अजोध्यै जाब औ बिधि न मिलावै ॥ ९ ॥
हँकरहु नगरा के कँहरा बेगि चलि आवउ हो।
कँहरा चनन क डँड़िया फनावउ सितहि लइ आउब ॥१०॥
एक बन गइले दुसर बन तिसरे बिन्द्राबन।
गुल्ली डडा खेलत दुइ बलकवा देखि राम मोहेन ॥११॥

केकर तू पुतवा नतियवा केकर हौ भतिजवा हो।
लरिकौ कौनी मयरिया कै कोखिया जनमि जुडवायउ हो ॥१२॥
बाप क नौवॉ न जानौ लखन के भतिजवा हो।
हम राजा जनक के है नतिया सीता कै दुलरुआ हो ॥१३॥
इतना बचन राम सुनलेन सुनहू न पउलेनि हो।
रामा तरर तरर चुवै आँसु पटुकवन पोछइँ हो ॥१४॥
अगवै ऋषि क मँदुलिया राम नियरानेनि।
रामा छापक पेड कदम कर लगत सुहावन ॥१५॥
तेहि तर बैठी सितल रानी केसियन झुरवइँ।
पछवाँ उलटि जब चितवै रामजी ठाढे ॥१६॥
रानी छोडि देहु जिअरा बिरोग अजोधिया बसावउ।
सीता तोरे बिन जग अँधियार त जिवन अकारथ ॥१७॥
सीता अखिया मे भरली बिरोग एकटक देखनि।
सीता धरती मे गई समाइ कुछौ नाहीं बोलिन ॥१८॥

माघ की नवमी को राम ने यज्ञ आरभ किया। लोगो ने कहा—हे राम! सीता के बिना यज्ञ सूनी रहेगी। सीता को ले आओ ॥१॥

राम ने कहा—हे वशिष्ट मुनि! मै तुम्हारे चरण छूता हू। हे गुरु! सीता तुम्हारे मनाने से आयेगी। जाकर मना लाओ ॥२॥

आगे के घोडे पर वशिष्ठ और पीछे लक्ष्मण देवर। दोनो बन मे ऋषि का झोपडा ढूँढने लगे, जहा सीता तप करती थी ॥३॥

सीता आँगन मे खडी थी। रास्ते की ओर देख रही थी। उन्होने गुरु वशिष्ठ और लक्ष्मण देवर को आते देखा ॥४॥

सीता बेचारी के पास बन मे बरतन कहाँ थे? सीता ने पत्ते का दोना बनाया। उसमे गंगाजल लेकर सीता ने गुरु के पैर धोये और माथे चढ़ाया ॥५॥

सीता के शिष्टाचार से गुरु बहुत प्रसन्न हुये और बोले—हे सीता ! तुम्हारी इतनी अक्ल है ! तुम तो बुद्धि की आगरि हो। हे सीता ! किसने तुम्हारी मति हरली ? जो तुमने राम को भुला दिया ॥६॥

सीता ने कहा—हे गुरु ! तुम सब जानते ही हो, फिर अनजान की तरह क्यो पूछते हो ? राम ने मुझे ऐसा डाहा कि अब उनसे चित्त कैसे मिलेगा ? ॥७॥

राम ने मुझे आग मे डाला। उसमे जलाकर भूनकर निकाला। जब मै गर्भिणी थी, तब मुझे घर से निकाल दिया। भला, उनसे मेरा मन कैसे मिलेगा ? ॥८॥

हे गुरु ! मै आपका वचन न टालूँगी और अयोध्या की ओर दो क़दम चलूँगी। पर अयोध्या नहीं जाऊँगी। ईश्वर से प्रार्थना है कि वह मुझे राम से मिलावें भी नहीं ॥९॥

वशिष्ठ लौट गये। राम ने कहा—नगर मे कहार बुलाओ। कहारो ! चंदन की पालकी सजाकर लाओ। मै सीता को मनाने चलूँगा ॥ १० ॥

एक बन मे गये, दूसरे बन मे गये। तीसरा वृन्दाबन मिला। वहाँ गुल्ली-डंडा खेलते हुए दो बालको को देखकर राम मुग्ध हो गये ॥ ११ ॥

राम ने पूछा—हे बालको ! तुम किसके पुत्र हो ? किसके पौत्र हो ? और किसके भतीजे हो ? किस माता की कोख से जन्म लेकर तुमने उसे शीतल किया है ? ॥ १२ ॥

लडको ने कहा—हम अपने पिता का नाम नही जानते। हम लक्ष्मण के भतीजे, राजा जनक के पौत्र और सीता देवी के प्राण-प्यारे है ॥ १३ ॥

राम यह वचन पूरा-पूरा सुन भी न पाये कि उनकी आंखो से आँसुओ की धारा बह चली और दुपट्टे से उसे पोछने लगे ॥ १४ ॥

सामने ही ऋषि की कुटी थी। राम उसके समीप पहुँच गये। वहाँ

एक छोटा सा कदम्ब का वृक्ष था, जो बड़ा सुन्दर लगता था ॥ १५ ॥

उसी कदम्ब के नीचे सीता रानी बैठकर अपने केश सुखा रही थीं। पीछे पलट कर वे देखती हैं तो रामचन्द्र खड़े हैं ॥ १६ ॥

राम ने कहा—रानी ! मन की ग्लानि छोड़ दो। चलकर अयोध्या को बसाओ। हे सीता ! तुम्हारे बिना मुझे संसार अंधकारमय लगता है और मेरा जीना व्यर्थ हो रहा है ॥ १७ ॥

सीता की आँखों मे हृदय की वेदना उमड़ आई थी। वे राम की ओर एकटक देखते देखते पृथ्वी मे समा गईं, मुँह से कुछ नहीं बोलीं ॥ १८ ॥

निर्दोष और मनस्विनी सीता के मन की दशा स्त्रियाँ जितनी अच्छी तरह समझ सकती हैं, पुरुष उतना नहीं समझ सकते। सीता को क्या कहना चाहिये, क्या नहीं कहना चाहिये, यह आदर्शवाद स्त्रियों मे नहीं चलता। यहाँ तो मन की स्पष्ट दशा का चित्र खींचा जाता है। 'सीता-राम के मुख को एकटक देखती हुई पृथ्वी मे समा गईं, मुख से कुछ न बोलीं'—इस एकटक देखने और कुछ न बोलने मे ही सीता ने सब कुछ कह डाला।

[७२]

राधे ललिता चन्द्रावलि आवउ जसुमति आवउ हो।
ललना मिलि जुलि चलीं वहि पार जमुन जल भरि लाई हो ॥ १ ॥
कमर मे बाधलें कछौटा हिरदय चन्दन हार हे।
ललना पइरि के पार उतरलीं तिरिय एक रोवइ हो ॥ २ ॥
किए तोरा दारुनि सासु ननद दुख दीअल हे।
बहिनी की तोरा कन्त बसल दुर देस कवन दुख
रोवलु हो ॥ ३ ॥

नहिं मोरा दारुनि सास न ननद दुख दीअल हे।
बहिनी नहिं मोरा कन्त बिदेस कोखिए दुख रोवलुं हो ॥ ४ ॥
सात बलक देव देहलेन कस लइ लेहलेन हो।
बहिनी अठम रहल गरभ से इहौ हरि लेइहै हो ॥ ५ ॥
चुप रहु चुप रहु देवकी आँचर मुंह पोछहु हे।
बहिनी आपन बलक हम मारब तोहरा जिआउब हो ॥ ६ ॥

हे राधे, ललिता, चन्द्रावलि और यशोदा ! आओ, हिलमिलकर उस पार चले और यमुना का जल भर लाये ॥ १ ॥

सबने कमर मे कछौटा बाध लिया। हृदय पर लटकते हुए चन्दन के हार को कस लिया। वे तैर कर पार उतर गईं। वहाँ देखा तो एक स्त्री रो रही थी ॥ २ ॥

उससे पूछा—क्या तुम्हारी सास कठोर हृदय की है ? या ननद ने तुम्हे दु ख दिया है ? या तुम्हारा कंत (पति) दूर देश मे है ? हे बहन ! तुम क्यो रो रही हो ? ॥३॥

स्त्री ने कहा—न मेरी सास कठोर है, न ननद ने ही दु ख दिया है, और न मेरा कत ही दूर देश मे है। हे बहन ! मै कोख के दु ख से रो रही हूँ ॥ ४ ॥

भगवान ने मुझे सात बालक दिये थे। कस ने सातो ले लिये। अब आठवाँ बालक गर्भ मे है। हाय ! वह इसे भी छीन लेगा ॥ ५ ॥

यशोदा ने उसे पहचान कर कहा—हे देवकी बहन ! चुप रहो, मत रोओ। आंचल से मुँह पोछ डालो। मै अपना बालक देकर तुम्हारा यह बालक बचा लूँगी ॥ ६ ॥

दु खी के प्रति सच्ची सहानुभूति इसे कहते है। अपना बालक देकर दूसरी बहन के बालक की रक्षा करना यह आर्य-जाति की नारियो मे ही सँभव है। यशोदा ने अपना वचन अक्षरश पूरा किया था।

[७३]

एक सौ अमवा लगवलीं सवासौ जामुन हो।
अहो रामा तबहुँ न बगिया सोहावन यक रे कोइलि बिनु ॥ १ ॥
नइहर मे पाच भइया त सात भतीजा बाडे हो।
अहो रामा तबहुँ न नइहर सोहावन यक रे मयरिया बिनु ॥ २ ॥
एक कोरा लिहलो मैं भइया दूसरे कोरा भतीजा हो।
अहो रामा तबहुँ न गोदिया सोहावन अपना बालक बिनु ॥३॥
पलँग पर सेजिया डसवलो त फूल छितरइलो हो।
अहो रामा तबहूँ न सेजिया सोहावन एक बलम बिनु ॥ ४ ॥

मैने एक सौ आम के वृक्ष लगवाये और सवा सौ जामुन के। तब भी एक कोयल के बिना बाग सुन्दर नहीं लगता ॥१॥

नैहर मे पाँच तो भाई है और सात भतीजे। पर फिर भी एक माँ के बिना नैहर अच्छा नही लगता ॥२॥

गोद मे एक ओर मैने भाई को ले रक्खा है, दूसरी तरफ भतीजे को। पर अपने पुत्र बिना गोद सुन्दर नही लगती ॥३॥

मैने पलग पर सेज बिछाया, उस पर फूल छितराया। पर स्वामी के बिना सेज सुहावनी नही लगती ॥४॥

[७४]

राहइ पर एक कुँइया सँवारि एक पानी भरै।
घोड़वा चढ़ल इक रजपूत हमसे खिआल करै ॥ १ ॥
केकर अस तुहुँ बिटिया केकरी पतोहिया।
कवने नयक क बहुअवा त भुकवन पानी भरौ ॥ २ ॥
बाबइ कर हम बिटिया ससुर क पतोहिया।
अपने नयक क बहुअवा त भुकवन पानी भरौ ॥ ३ ॥

सासु नॅनद घरवॉ दारुनि पनियॉ भरावै ।
ऐसनि धनि जउ पवतेउँ त हार अस रखतेउँ ॥४॥
जैसे मोरे हरि क पनहिऑ वइसइ तोर मलपट ।
तोहै अस मरद जो पउतेउँ त पनही ढोवउतेउँ ॥५॥
गगरी त लिहेन सिरेह पर लेजुरी हथेह पर ।
सासु घोडवा चढ़ल इक रजपुत हमसे खिआल करै ॥६॥
बहु कैसेन उनकर घोड़वा त कइसनि लगाम लागि ।
बहू कवने बरन बनिजरवा कवनि पाग बॉधइ ॥७॥
लालय वोनकर घोड़वा त करिया लगाम लागि ।
सॉवरे बरन बनिजरवा मुरेरी पाग बॉधइ ॥८॥
मचियै बैठी है सासु विहॅसि बतियॉ बोलइँ ।
बहुवरि के तोरा हरा है गेयान बिदेसिया न चीन्हिउ ॥९॥

रास्ते पर एक कुँवा था । जिस पर एक सुन्दरी पानी भर रही थी घोडे पर चढ़ा हुआ एक राजपूत उधर से निकला । वह उससे हसी करने लगा ॥१॥

ऐसी सुन्दरी तुम किसकी कन्या हो ? किसकी पतोहू हो ? किस नायक की प्यारी स्त्री हो ? जो पानी भर रही हो ॥२॥

स्त्री ने कहा—मै अपने पिता की पुत्री और ससुर की पतोहू हूँ । मैं अपने स्वामी की प्यारी स्त्री हूँ और पानी भर रही हूँ ॥३॥

राजपूत ने कहा—जान पडता है, घर मे सास और ननद बड़ी निठुर है जो तुम से पानी भराती है । मै ऐसी स्त्री पाता तो हार की तरह गले मे लटकाए रखता ॥४॥

स्त्री ने कहा—जैसे मेरे प्राणनाथ की जूती है, वैसे तो तुम्हारे गाल है । तुम्हारे ऐसे मर्द को पाती तो मै जूतियाँ ढोवाती ॥५॥

घडा सिर पर और रस्सी हाथ मे लेकर स्त्री ने सास के पास आकर

कहा—हे सास ! घोडे पर चढा हुआ एक राजपूत मुझ से मज़ाक करता है ॥६॥

सास ने पूछा—हे बहू ! कैसा उसका घोडा है ? और कैसी लगाम लगी है ? वह स्वय किस रंग का है ? और कैसी पगडी बाँधे हुये है ? ॥७॥

बहू ने कहा—लाल रंग का तो घोडा है। काले रंग की उसकी लगाम है। श्याम वर्ण का वह स्वय है और मोडदार पगडी बाँधे हुये है ॥८॥

मचिए पर बैठी हुई सास हँसकर कहने लगी—बहू ! किसने तुम्हारी बुद्धि हर ली ? जो तुम ने अपने परदेशी पति को नही पहचाना ॥९॥

पहचानती कैसे ? ब्याह करने के बाद ही कमाने के लिये पति परदेश चला गया होगा। बारह वर्ष बाद लौटा होगा। स्त्री ने विवाह के बाद फिर कभी उसे देखा होगा हो नही, पहचानती कैसे ? उसने पति को पर- पुरुष समझ कर जो कुछ कहा, वह उचित ही था। अपरिचित पुरुष का किसी स्त्री से इस प्रकार मज़ाक करना सभ्यजनोचित व्यवहार नही कहा जा सकता।

[७५]

चैते की तिथि नौमी कि नौबत बाजै।
राजा राम लिहिन औतार अयोध्या के ठाकुर ॥१॥
दसरथ पटना लुटावै कौशिल्या रानी अभरन।
रानी कैकेइ वस्त्र लुटावै सुमित्रा रानी सुबरन ॥२॥
राम के मथवा झलरिया बहुत निक लागै अधिक छबि लागै।
मानौ कमल कर फूल भँवर सिर लुन करैं ॥३॥
राम के पॉय पैजनियॉ बहुत निक लागै अधिक छबि लागै।
ये हो चलत मधुरियन चाल त रुनि-झुनि बाजै ॥४॥

राम के कमर करधनियाँ बहुत निक लागै अधिक छबि लागै।
सँवरे बदन पर झँगुलिया दमिन चित चोरै ॥ ५ ॥
राम के नयन कजरवा अधिक निक लागै बहुत छबि लागै।
अब दीन्ह फूफू सहोद्रा अँगुरिया नही डोलै ॥ ६ ॥
ऐसी मूरत जौ पउतिउँ हृदया बसउतिवँ।
पीत पितम्बर ओढ़उतिवँ ललन कहि बोलउतिवँ ॥ ७ ॥

चैत्र की नवमी को नौबत बज रही है। अयोध्या के स्वामी राजा राम ने अवतार लिया है ॥१॥

राजा दशरथ गाँव लुटा रहे हैं। रानी कौशिल्या गहने, रानी कैकेयी वस्त्र और रानी सुमित्रा सोना लुटा रही है ॥२॥

राम के माथे पर बाल बहुत सुन्दर लगते है। मानो कमल के फूल पर भौंरे मुग्ध हो रहे हैं ॥३॥

राम के पैर में पैजनी बहुत शोभा दे रही है। जब राम मद-मंद चलते है, तब वह रुन-झुन बजती है ॥४॥

राम की कमर मे करधनी बहुत अच्छी लगती है। साँवले शरीर पर पीली झँगुली बिजली का भी चित्त चुरा रही है ॥५॥

राम की आँखो मे काजल बहुत शोभा दे रहा है। यह काजल राम की फूफू सुभद्रा का दिया हुआ है, जिनकी उँगली काजल देते समय नहीं हिलती ॥६॥

ऐसी मनोहर मूर्ति जो मैं पाती तो हृदय मे बसा लेती। उसे पीताम्बर ओढाती और प्यारे पुत्र कहकर बुलाती ॥७॥

[७६]

सोने के खड़उवाँ राजा दसरथ खुटुरु खुटुरु चले।
राजा गइले केदलिआ के बन मे त काँट गड़ि गइलनि ॥ १ ॥

जे मोरे कँटवा निकलिहे बेदन हरि लीहे।
अरे जवन मगनवाँ जे मँगिहे तवन हम देइब ॥२॥
घर मे से निकले केकैया रानी सोरहो सिंगार कइले।
राजा हम तुहरे कँटवा निकरबै बेदन हरि लेइब ॥३॥
अरे जवन मँगन हम मँगबै तवन रउरे देइब।
अँगुली से कँटवा निकरली बेदन हरि लिहली ॥४॥
राजा जवन मगन हम मँगली तवन रउरे देई।
राजा राम लछन बन जाय भरत राज बेलसै ॥५॥
मँगही के केकई तु मँगलु माँगन नहिं जनलु।
केकई मागै मोरे प्रान अधार कौसिल्या रानी के ओठँगन ॥६॥
जे राम चित से न उतरे पलक से न बिसरे।
से राम बने चलि जैहे त कैसे जिउ बाधव ॥७॥

सोने के खड़ाऊं पर राजा दशरथ खुदुर-खुदुर करते केदली के बन मे गये, तो वहाँ काँटा धँस गया ॥१॥

उन्होने कहा—जो यह काँटा निकाल लेगा और मेरी पीडा हर लेगा, वह जो मागेगा, मै वही दू गा ॥२॥

सोलहो श्रृ गार किये हुये कैकेयी रानी घर में से निकली। उन्होने कहा—हे राजा ! मै काँटा निकालकर तुम्हारी पीड़ा हर लू गी ॥३॥

पर जो मै माँगूँगी, उसे आपको देना पडेगा। यह कहकर उन्होने उँगली से काँटा निकाल लिया और पीडा हर ली ॥४॥

कैकेयी ने कहा—हे राजा ! जो मै माँगती हू, उसे आप दे। मै माँगती हू कि राम, लक्ष्मण बन जायँ और भरत राज करें ॥५॥

दशरथ ने कहा—माँगने को तो तुमने माँगा, पर माँगने नही जाना। कैकेयी ! तुम मेरा प्राणाधार और रानी कौशल्या का जीवनाधार माँगती हो ॥६॥

जो राम चित्त से नही उतरते, पलक से नही दूर किये जा सकते, वे राम यदि बन जायँगे तो मैं धैर्य कैसे धरूँगा ? जी को कैसे समझाऊँगा ? ॥७॥

यद्यपि कैकेयी को यह बरदान एक युद्ध मे मिला था, जिसमे राजा दशरथ राक्षसो से लड रहे थे। रथ पर कैकेयी भी थी। यकायक रथ का धुरा पहिये के पास टूट गया। कैकेयी झट कूद पडी और उसने पहिये को अपनी कलाई पर रोककर रथ को और राजा को गिरने से बचा लिया। राजा को इस घटना की खबर भी न होने पाई। इतने मे उन्होने राक्षसो के सरदार का सिर काट लिया। हर्षोद्रेग मे भाग लेने के लिये जब उन्होने कैकेयी की ओर देखा, उस समय वह कलाई पर रथ सँभाले खडी थी। राजा के लिये यह दूसरे प्रकार का हर्षोद्रेग था और पहले वाले से कहीं अधिक प्रभावोत्पादक था। क्योकि इससे राजा के प्राण की रक्षा ही नहीं हुई, बल्कि एक कोमलाङ्गिनी नारी की वीरता भी प्रकट हुई। इसी खुशी मे राजा ने कैकेयी को दो वर दिये थे। पर गीत बनाने वाली स्त्रियो ने कैकेयी के इस कार्य को शायद स्त्री-जाति के लिये अस्वाभाविक और क्रूर समझकर उसे छोड दिया और एक नई घटना गढ ली, जो पहले से अधिक सरल, अधिक स्वाभाविक और घरेलू है।

[७७]

बाबाजी बियहिन राजा घर बहुत सम्पति घर।
मोरी माइउ खबरिया न लिहीं न बिरना पठाईं ॥ १ ॥
सासु कहै तोरे बाबा नाही ससुर कहै तोरे मावा नाहीं।
आपु प्रभु कहै तोरे भैया नाहीं के तोहरे आवै ॥ २ ॥
अरे गरभैतिन बहुववा गरब जिन बोलो।
तोरे भैया के होरिला जो होते तो ओई तोरे औते ॥ ३ ॥

इतनी बचन सुनि बहुअरि सुरजू मनावै।
सुरजू भैया के होते नँदलाल तो हमरे ओई औते ॥ ४ ॥
होत बिहान पह फाटन होरिला जनम भये।
बाजै लागी अनन बधैया उठै लागे सोहर ॥ ५ ॥
बाबा मोरे गइन बजज घर जोडवा लै आइन।
माई मोरि पियरी रँगावै बीरन लैके आवै ॥ ६ ॥
भौजी मोर चौरा कुटाई ढंढिया बन्हाई।
भौजी मोर पुतरा उरेहै बीरन लैके आवै ॥ ७ ॥
आगे आगे आवै ढंढिया पाछे घिउ गागर।
वहि पाछे भैया असवरवा तो बहिनी के देस जाँय ॥ ८ ॥
जैसे दौरै गैया तो अपने लेरुअवा खातिर।
वैसेन दौरै तो बहिनियाँ अपने बीरन खातिर ॥ ९ ॥
काउ लै आया भैया सासू क काउ गोतिन क।
काउ लै आया भैया भयन क तो काउ तू हमका ॥१०॥
पियरी लै आये बहिनी सासू क ढंढ़िया गोतिन क।
गूँजा गोड़हरा तो भयन का तुहँका तो कुछु नाही ॥११॥

कन्या कहती है—पिता ने मेरा विवाह यद्यपि राजा के घर मे किया, जहां बहुत धन है। पर मेरी माँ ने न मेरी खबर ली और न भैया ही को भेजा ॥१॥

सासु कहती हैं—तेरे पिता नही हैं। ससुर कहते है—तेरे माँ नही है। स्वय पतिजी कहते है—तेरे भाई नही है। कौन आवे ? ॥२॥

अरी अभिमानिनी बहू ! घमड की बात न बोल। तेरे भाई के पुत्र होता तो वही तेरे यहाँ आता ॥३॥

बहू यह सुनकर सूर्य देवता को मनाने लगी—हे सूर्य ! भैया के पुत्र होता, तो वही हमारे यहाँ आता ॥४॥

न ? दोपहर होने आया। बहू ! उठो। देखो, तुम्हारा परदेशी तुम्हारे द्वार पर खडा है ॥ ६ ॥

बहू झिझक कर उठी। केवाडी खोलकर उस ने देखा और पति से कहा—यदि मै पहले से जानती कि तुम आ रहे हो, तो हे प्रियतम ! मै धन्य-धान्य लुटाती और नाच कराती ॥ ७ ॥

हे प्रियतम ! जब से तुम गये, तब से मैने सेज नही बिछाई। अपने ससुर को भोजन करा मै ज़मीन पर पडी लोटा करती थी ॥ ८ ॥

पति ने कहा—हे मेरी प्यारी स्त्री ! मै अपना हाल क्या कहूं ? जब से तुम से अलग हुआ हूं, तब से मैने पान नही खाया, और न किसी पराई स्त्री पर दृष्टि डाली। हे मेरी हृदयेश्वरी ! तुम्हारी पीड़ा को मेरा हृदय ही जानता है, या ईश्वर ॥९॥

यह चरित्रवान् दम्पति का बडा ही स्वाभाविक वर्णन है। माँ ने पुत्र को प्रसन्न करने के लिये यह बडी ही सुन्दर बात कही थी कि 'हे बेटा ! तुम्हारी स्त्री बहुत दुर्बल हो गई, पर उसका मुँह बडा सुन्दर है। अर्थात् विरह के कारण दुबली हो गई है, पर सतवती होने से उसके मुख की कांति, मुख का तेज बढ़ गया है।'

गीत के प्रारभ मे बहू ने घटा से प्रार्थना की है कि हे घटा ! मेरे पति के देश मे जाकर बरसो, जिससे उनका हृदय हुलसे। इस कथन मे एक प्राकृतिक तथ्य छिपा हुआ है। घटा को देखकर, उसकी ध्वनि सुनकर, विरहियो मे मिलने की आकाक्षा बड़ी प्रबल होती है। कालिदास ने मेघदूत मे मेघ से कहलाया है—

यो वृन्दानि त्वरयति पथि श्राम्यता प्रोषितानां।
मन्द्रस्निग्धैर्ध्वनिभिरबलावेणि मोक्षोत्सुकानि ॥

अर्थात मेरी गरज मे यह गुण है कि वह परदेशियो को तुरन्त अपने-अपने घर जाने का चाव दिलाती है, और उनके मन मे उत्सुकता पैदा

करती है कि वे अपने घर पहुँचकर अपनी-अपनी स्त्री की वेणी खोले।

[७६]

सौना भँदौना कै रतिआ देखत डर लागइ हो।
राजा, खोलौ न बजर केवरिया अँगन हम जाबइ हो ॥ १ ॥
की हमरी मइआ जगावइ बहिनि हाँक मारइ हो।
धनिया कवन जरूर तोहै लागि अगनतुहुँ जाबिउ हो ॥ २ ॥
नाही तोहरी मइआ जगावइँ बहिनि न बुलावइ हो।
राजा छोडि देउ हमरा अँचरवा अँगन हम जाबइ हो ॥ ३ ॥
एक लात दिही चड़कठवा दुसरा लात अंगना मे हो।
रामा, बाजै लागै अनँद बधैया उठन लागे सोहर हो ॥ ४ ॥

सावन भादो की रात, देखने मे डर लगता है। हे राजा! बज्र ऐसी केवाडी खोल दो। मै आँगन मे जाऊँगी ॥१॥

मेरी मा जगा रही है, या बहन बुला रही हे? हे प्यारी स्त्री! क्या जरूरत है जो तुम आँगन मे जा रही हो? ॥२॥

न आपकी मा जगा रही है, न बहन बुला रही है। हे राजा! आचल छोड दो। मै आँगन मे जाऊँगी ॥३॥

एक पग चौखट पर रखा। दूसरा पग आँगन मे। इतने मे (पुत्र पैदा होने से) आनद की बधाई बजने लगी और सोहर गाया जाने लगा ॥४॥

अन्न-प्राशन का गीत

जिस दिन बच्चे को पहले-पहल अन्न खाने को दिया जाता है, उस दिन जो उत्सव होता है, उसे अन्न-प्राशन कहते हैं। यह उत्सव अब सम्पन्न और पुरानी परिपाटी पर चलने वाले घरो मे ही मनाया जाता है। साधारण गृहस्थो मे अब इसका महत्त्व नहीं रह गया है।

गाँवों में इस उत्सव के भी बहुत से गीत प्रचलित हैं उनमें से एक यहां दिया जाता है —

[१]

आजु मोरे लीपन पोतन, औ अन्नप्रासन हो ॥ १ ॥
सासु अरगन नेवतह परगन, नैहर सासुर,
औ अजियाउर औ ननियाउर रे ॥ २ ॥
अरगन आयनि परगन, और ननिआउर
औ अजियाउर हो।
सासु एक नहिं आये बिरन भैया, कैसे जियरा बोधौं रे ॥ ३ ॥
सासु भेटहि आपन भैया, ननद आपन देवर हो।
सासू छतिया जे मोरी घहरानी, मैं केहि उठि भेटौं रे ॥ ४ ॥
झरकि के चढ़ल्यूँ अटरिया, खिरिकियन झाँक्यो हो।
ननदी जनु भैया आवै पहनैया, पगडिया फहरावै रे ॥ ५ ॥
दुअराई घोडा हिहियाने, पथर घहराने हो।
बहुआ मिलि लेह भैया बेदनैता,
सोहर अब सुनो सगुन पर बैठौ रे ॥ ६ ॥
(फतहपुर)

आज मेरे घर में लीपने-पोतने का काम हो रहा है। आज अन्न-प्राशन है ॥१॥

हे सासजी ! अरगन-परगन (आर्यगण और प्रजागण अथवा अपने और पराये सब), नैहर, सासुर, अजियाउर और ननियाउर सबको न्यौता भेज दो ॥२॥

अरगन-परगन वाले आये, ननिआउर और अजियाउर के लोग आये। हे सास ! मेरा भाई नहीं आया, मैं जी को कैसे धैर्य दूँ ? ॥३॥

सासजी अपने भाई को भेंट रही हैं। ननद मेरे देवर को भेंट

रही है। हे सासजी ! मेरी छाती मे आग धधक रही है, मै उठकर किसे भेटूँ ? ॥४॥

मै झमककर अटारी पर चढ़ी। खिडकी से झाँका। हे ननद ! जान पडता है, भैया पहुनाई करने आ रहे हैं। पगडी फहरा रही है ॥५॥

दरवाजे पर घोडा हिनहिनाया, मानो पत्थर घहराया। हे बहू ! अब अपने वेदनावाले भाई को मिल लो, सोहर सुनो और सगुन पर बैठो ॥६॥

इस गीत की पहली ही कडी मे अन्न-प्राशन की चर्चा है, सही तो यह गीत प्राय प्रत्येक उत्सव मे, जिसमे सगे-सबधी न्यौते जाते है, गाया जा सकता है। इसमे भाई के लिये बहन के हृदय की वेदना का बडा मार्मिक वर्णन है।

मुण्डन के गीत

जन्म के तीसरे, पाँचवे या सातवे वर्ष मे पहले-पहल जब बच्चे के सिर के बाल उतारे जाते है, उसे मुण्डन कहते है। हिन्दू-समाज के सोलह सस्कारो मे यह एक सस्कार है।

पहले ज्योतिषी से मुण्डन का दिन और समय नियत किया जाता है। फिर नियत दिन पर देव-पूजन, हवन और ब्राह्मणो और मित्रो को भोजन कराया जाता है और ब्राह्मणो को दक्षिणा दी जाती है।

मुण्डन हो जाने के बाद बच्चो की बहन को, और अगर बहन न हुई तो उसकी फूफी को, जो बाल बटोरती है, तथा मुण्डन करने वाले नाई को नेग चुकाये जाते है और उन्हे खुश किया जाता है। बहन को नेग मे नक़द रुपये, बरतन या गाय या बछिया-बछडे दिये जाते है। नाई को नकद रुपये-पैसे, कोई एक बरतन या कपडे दिये जाते हैं। नेग गृहस्थ के घर की माली हालत पर निर्भर है। गरीब गृहस्थ के घर मे

कुछ पैसो ही से बच्चे की बहन और नाई को सतोष करना पडता है।

घर की स्त्रियो टोले-महल्ले की स्त्रियो को जमाकर, सब के साथ गा-बजाकर मुण्डन सस्कार को एक सुखमय उत्सव का रूप दे देती हैं। इस प्रसंग के बहुत से गीत उनमे प्रचलित है, जिनमे निकट सम्बन्धियों के परस्पर के प्रेम-भाव और मुण्डन की क्रियाओ का भी वर्णन होता है।

यहाँ मुण्डन के अवसर पर गाये जाने वाले कुछ गीत दिये जाते हैं —

[१]

सभवहिं बैठे सिर साहब, बोलै जन्चारानी रे।
साहेब मोरे नैहर लोचना पठावो
पियरिया भैया भेजै, होरिलवा के मूंडन ॥ १ ॥
तोहर नैहरवा धन दूरि बसै, कोसवन को गनै हो।
रानी, घर ही मे रॅगहु पियरिया, चौक पर बैठहु,
होरिलवा के मूॅडन रे ॥ २ ॥
तोहर पियरिया राजा नित के,निति उठि पहिरब हो।
राजा, हमरे भैया कै पियरिया सगुन के,
चउक पर बैठब हो, होरिलवॉ के मूॅडन हो ॥ ३ ॥
हॅकरहु नगर के नौवा बेगहिं चली आवहु रे।
नौवा रगि रगि पीसहु हरदिया, रोचन पहुँचावहु,
होरिलवा के मूॅडन रे ॥ ४ ॥
सभवहिं बैठे है बीरन भैया, नौवा से पूॅछइॅ रे।
नौवा केकरे भयन नन्दलाल, रोचन कहॉ पायो हो ॥ ५ ॥
बड़हर कै हम नौवा, सुजन घरवॉ आये हो।
तोहरी बहिनी के भये नन्दलाल,
लोचन लैके आये हो ॥ ६ ॥

हरखि के उठेनि बीरन भैया, धन जी से पूँछै हो।
रानी, बहिनी के भये नन्द लाल, लोचन हमको आवाहो,
पियरिया लैके जावै रे ॥ ७ ॥
येहि पेटरवा के कु जिया ना जानों कहाँ गिरि गई हो।
राजा नाहीं रे बजजवा यहि गाँव,
पियरिया कहाँ पौव्यो रे ॥ ८ ॥
बेचवै मै ढाली तरवरिया, अरे फाँडे कै कटरिया रे।
रानी,सौ साठि पियरी रँगौबे,चौक पर पचहुँचव हो ॥ ९ ॥

घर के मालिक सभा मे बैठे है। जच्चारानी ने उनसे कहा—हे स्वामी ! मेरे नैहर को रोचन भेजो, ताकि मेरे भैया पियरी (पीली धोती) भेजें। बच्चे का मुण्डन है ॥१॥

हे धन ! तुम्हारा नैहर बडी दूर है। कितने कोस है ? कौन गिनती करे। हे रानी ! घर ही मे पियरी रँग डालो, और उसे पहनकर चौक पर बैठो। बच्चे का मुण्डन है ॥२॥

हे राजा ! तुम्हारी दी हुई पियरी तो हमेशा की है। सदा उठकर पहनूँगी। हे राजा ! मेरे भैया की सगुन की पियरी है। उसी को पहनकर चौक पर बैठूँगी। बच्चे का मुण्डन है ॥३॥

नगर के नाई को बुलाओ। जल्दी आये। हे नाई ! खूब घिस-घिसकर हल्दी पीसो और रोचन ले जाओ। बच्चे का मुण्डन है ॥४॥

भैया सभा मे बैठे है। नाई से पूछते है—हे नाई ! किसके पुत्र हुआ है ? रोचन कहाँ पाया ? ॥५॥

मैं बड़हर (गाँव का नाम) का नाई हूँ। आप सज्जन के घर आया हूँ। आपकी बहन के पुत्र हुआ है। उसी का रोचन लेकर आया हूँ ॥६॥

भैया प्रसन्न होकर उठे। उन्होने अपनी स्त्री से पूछा—हे रानी ! बहन के पुत्र हुआ है। रोचन आया है। मै पियरी लेकर जाऊँगा ॥७॥

स्त्री ने कहा —पेटारे की कुञ्जी तो न जाने कहां गिर गई। हे राजा! इस गाँव मे बजाज भी तो नही है, पियरी कहाँ पाओगे? ॥८॥

मै ढाल-तलवार बेच दूँगा, कमर की कटारी बेच दूँगा। हे रानी! सैंकडो पियरियाँ रँगाकर और लेकर चौक पर पहुचूँगा ॥९॥

इस गीत मे भाई और बहन के प्रेम का सरस वर्णन है। साथ ही स्त्री-स्वभाव की भी झलक है। भाई की स्त्री की इच्छा नही थी कि उसकी ननद को पियरी भेजी जाय।

यह गीत उस जमाने का है, जब हमारे घरो मे ढाल-तलवार और कमर की कटारी थी।

[२]

ना बाबा बजना बजायो न सुजना बुलायो।
बड़े रे कलप कै लफरिया तौ चोरिया मुडायो॥ १॥
हम नाती बजना बजैबै, और सुजना बुलैबै।
बडेरे कलप कै लफरिया, मै हरषि मुडैबै॥ २॥
सोने के खडौवाँ भैया साहेब, बहिनि बहिनि करै।
कहाँ गइउ बहिनि हमारि, तौ लोइया बटोरै॥ ३॥
भितरौं से निकरी है बहिनि तौ हाथ भरि लोइया लिहे।
देव भैया नेग हमार, तौ लोइया बटोरउँ॥ ४॥
देबै गले कै तिलरिया दूनौ काने बिरिया।
देबै बहिनि सोरहौ सिंगार, बिहँसि घर जायो॥ ५॥

(प्रतापगढ)

हे बाबा! न तुमने बाजा बजवाया, न सुजनो (भले आदमियो) को बुलाया। बड़े लटो की लफरी (लट) को चुपके-से मुँडाया॥१॥

हे नाती! हम बाजा बजवायेगे, सुजनो को बुलायेंगे बडी लटो को बडे हर्ष से मुँडवायेगे॥२॥

भाई सोने के खडाऊँ पर चढ़कर बहन, बहन पुकार रहा है। हे मेरी बहन ! कहाँ हो ? लटें बटोरो ॥३॥

बहन भीतर से निकली। हाथो मे भरकर लटे लिये है। हे भाई ! मेरा नेग दो तो लटें बटोरूँ ॥४॥

भाई ने कहा—मै तुम्हारे गले के लिये तिलरी और कानो के लिये बिरिया (कान का एक गहना) दूँगा। हे बहन ! मै सोलहो शृ गार का सामान दूँगा, तुम प्रसन्न होकर घर जाना ॥५॥

[३]

हाथी चढो बाबा हाथी चढो, बाबा कवन रामा हो।
तुमरे नतिया कै लगन समीप, तौ लफरी मुँड़ाओ हो ॥ १ ॥
हाथी चढ़ो दादा हो हाथी चढ़ो, दादा कवन रामा हो।
तुम रे दुलरू कै लगन समीप, तौ लफरी मुँडावउ हो ॥ २ ॥
नौआ गा हइ काशी, तौ बॉभनु बनारस हो।
मोरी धिया गइ है ससुरारि, तौ कैसे मुँडावउँ हो ॥ ३ ॥
असी कोस कै ननदिया बधौवा लैकै आई हो।
मोरी भौजी ने हना है केवंडिया, इहाँ कहाँ आइउ हो ॥ ४ ॥
की भौजी होब जागिनि, की होब भॉटिनि हो।
की होब जंगल पतुरिया, दुवारे तुम्हरे नाचौ हो ॥ ५ ॥
नाहीं ननदी मोर जागिनि, नाही होउ भॉटिनि हो।
ननदा, बड़े रे छयल कै बहिनियॉ,आदर बिन आइउ हो ॥ ६ ॥

(इटावा)

हे बाबा ! हाथी पर चढ़ो। हाथी पर चढ़ो। तुम्हारे नाती के मुण्डन की साइत समीप है, मुण्डन करा दो ॥१॥

हे दादा ! हाथी पर चढ़ो, हाथी पर चढ़ो। तुम्हारे दुलारे की साइत समीप है, मुण्डन करा दो ॥२॥

नाई तो काशी गया है, पंडित बनारस गये हैं, मेरी बेटी ससुराल गई है, मुण्डन कैसे कराऊँ ? ॥३॥

अस्सी कोस पर ब्याही हुई ननद बधावा लेकर आई है। भावज ने केवाडे बन्द कर लिये और कहा— यहाँ कहाँ आई हो ? ॥४॥

ननद ने कहा—अब या तो मै जागिन होकर या भांटिन या जगत की पतुरिया (नाचने वाली) होकर तुम्हारे द्वार पर नाचूँगी ॥५॥

भावज ने कहा—हे मेरी ननद ! न जागिन हो, न भाटिन हो। हे ननद ! तुम बडे छैला (उसके पति) की बहन हो, बिना सूचना दिये आई हो ॥६॥

ननद ने अपने भाई को सामाजिक मान-मर्यादा का ध्यान नहीं रक्खा और वह बिना सूचना दिये आगई, इससे उसका उचित स्वागत-सत्कार नही हो सका। इससे गाँव मे ननद के भाई की हँसी हुई होगी। स्त्रियो को अपने कुटुम्ब की इज्ज़त का कितना ध्यान रहता है !

जनेऊ के गीत

जनेऊ शब्द यज्ञोपवीत का अपभ्रंश है। यज्ञोपवीत को ब्रह्मसूत्र भी कहते हैं। जनेऊ पहनना आर्य-जाति की बहुत पुरानी प्रथा है।

यज्ञोपवीत का यह श्लोक प्रत्येक द्विज को याद कराया जाता है—

यज्ञोपवीत परमं पवित्र
प्रजापतेर्यत्सहज पुरस्तात्।
आयुष्यमग्र्य प्रतिमुञ्च शुभ्र
यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेज॰ ॥

भावार्थ—यज्ञोपवीत परम पवित्र है, जो प्राचीनकाल मे प्रजापति के साथ उत्पन्न हुआ था। यह आयु, बल और तेज का देने वाला है।

पारसी लोग भी जो आर्यों के सजातीय हैं और ईरान मे जाकर बस

गये थे, यज्ञोपवीत पहनते हैं। यज्ञोपवीत का उनका मंत्र यह है —

फ्राते मज़दाओ बरत् पौरवनिम् आयभ्य ओंघनेम स्तेहर पाएसघेम् मैन्यु-तस्तेम बंधुहिम दायनम् मजदयास्निम।

अर्थात्, हे मज़दा, यासनिन धर्म के चिह्न ! तारों से जड़े हुये यज्ञोपवीत ! तुझे पूर्वकाल मे मज़दा ने धारण किया है।

पूर्वकाल मे,उपनयन सस्कार मे यज्ञोपवीत धारण करके तब ब्रह्मचारी आचार्य के पास विद्याध्ययन के लिये जाता था। यज्ञोपवीत धारण करने के दिन से ब्रह्मचारी को कुछ व्रतो अर्थात् नियमो का पालन करना अनिवार्य हो जाता था, इसलिये इसे व्रत-बन्ध भी कहते हैं। यज्ञोपवीत धारण करने के बाद ही मनुष्य की द्विज सज्ञा होती है। नहीं तो, मनु महाराज के निर्णय के अनुसार, यज्ञोपवीत होने के पहले मनुष्य-मात्र शूद्र हैं।

जन्मना जायते शूद्र सस्काराद्द्विज उच्यते। मनुस्मृति॥

यज्ञोपवीत क्यो पहना जाता है ? इसका उत्तर कौपीतकि ब्राह्मण के इस मत्र मे मिलता है—

यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्य त्वा यज्ञोपवीतेनोपनह्यामि दीर्घायुत्वाय बलाय वर्चसे।

आचार्य कहता है—हे ब्रह्मचारी ! मै तुझे दीर्घायु, बल और तेज के लिये यज्ञोपवीत से बाँधता हूँ।

यज्ञोपवीत मे तीन तागे होते है। इसका अभिप्राय यह है कि ब्रह्मचारी ब्रह्मचर्य, गृहस्थ और वानप्रस्थ तीनो आश्रमो के नियमो को अच्छी तरह पालन करने के लिये प्रतिज्ञाबद्ध होता है। साथ ही प्रत्येक व्यक्ति के साथ जन्म से ही तीन ऋण लगे हुये है—ऋषि-ऋण, देव-ऋण और पितृ-ऋण।

जायमानो ह वै ब्राह्मणास्त्रिभिर्ऋणैर्ऋणवान जायते।
ब्रह्मचर्येण ऋषिभ्यो यज्ञेन देवेभ्य प्रजया पितृभ्य इति॥
(ब्राह्मण ग्र थ)

अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य तीनो तीन ऋणो से ऋणी ही पैदा होते है। ब्रह्मचर्य धारण करके, ऋषियो के बनाये ग्र थो का स्वाध्याय करके, ऋषि-ऋण से, यज्ञो के द्वारा देव-ऋण से और सतान उत्पन्न करके पितरो के ऋण से छुटकारा मिलता है। सन्यासी इन तीनो ऋणो से मुक्त होता है। इससे उसे यज्ञोपवीत-धारण की आवश्यकता नही रहती। यज्ञोपवीत मे तीन तागे होने का एक अभिप्राय यह भी बताया जाता है कि इसका सम्बध ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य तीन ही वर्णों से है। शूद्र के लिये यज्ञोपवीत का विधान नही है।

यज्ञोपवीत ९६ अगुल लम्बा होना चाहिये। ९६ अगुल लम्बा होने का तात्पर्य यह है—

तिथिर्वारश्च नक्षत्र तत्वं वेदा गुणत्रयम्।
कालत्रयञ्च मासाश्च ब्रह्मसूत्रञ्च षण्णव॥

तिथि १५, वार ७, नक्षत्र २८, तत्व २४, वेद ४, गुण ३, काल ३, मास १२। कुल मिलाकर ९६ हुये। इन सब के साथ नियम निबाहने के लिये प्रतिज्ञाबद्ध होने के प्रमाण-स्वरूप ९६ अगुल का सूत्र पहना जाता है। कुछ विद्वानो का यह भी कथन है कि ९६ अगुल का यज्ञोपवीत वेद के ९६००० मत्रो के अध्ययन का एक प्रमाण है।

यज्ञोपवीत कमर से नीचे नही आना चाहिये। इस सम्बन्ध मे छन्दोग परिशिष्ट मे लिखा है—

स्तनादूर्ध्वमधो नाभेर्न धार्यं तत्कथञ्चन।
ब्रह्मचारिण एकं स्यात् स्नातस्य द्वे बहूनि वा॥

अर्थात्, यज्ञोपवीत स्तन से ऊपर और नाभि से नीचे न पहने। ब्रह्म-

चारी एक और गृहस्थ दो यज्ञोपवीत पहने।

मूत्र और पुरीष त्याग के समय यज्ञोपवीत को दाहिने कान पर तीन बार लपेट लिया जाता है। यह केवल शुद्धता के लिये किया जाता है। एक लाभ यह भी है कि यज्ञोपवीत धारण करने के अवसर पर की हुई प्रतिज्ञाये—खास कर ब्रह्मचर्य के सम्बन्ध की प्रतिज्ञाये—बार बार याद आती रहे। प्रतिज्ञाये ये हैं —

१—दिवा मा स्वाप्सी ।

दिन मे मत सोना।

२—आचार्याधीनो वेदमधीष्व।

आचार्य के अधीन रहकर वेद का अध्ययन कर।

३—क्रोधानृते वर्जय।

क्रोध और झूठ को छोड दे।

४—मैथुन वर्जय।

मैथुन को छोड दे।

५—उपरि शय्या वर्जय।

भूमि से ऊपर पलँग आदि पर सोना छोड दे।

६—कौशीलव गन्धाञ्जनानि वर्जय।

गाना-बजाना, नृत्य आदि तथा इत्र इत्यादिक का सूँघना और आंखो मे अंजन लगाना वर्जित है।

७—मॉस रूक्षाहार मद्यादिपान च वर्जय।

मास, रूखा-सूखा भोजन और मद्य आदि नशीली चीज़ो का सेवन मत कर।

८—अन्तर्ग्राम-निवासोपानछत्रधारणं वर्जय।

गांव के बीच मे, बसना जूता और छाता धारण करना वर्जित है।

९—अकामत स्वयमिन्द्रियस्पर्शेन वीर्यस्खलनं विहाय वीर्य

शरीरे सरक्त्योर्ध्वरेता सतत भव।

लघु शंका के सिवा कभी उपस्थ इन्द्रिय का स्पर्श मत कर। न वीर्य स्खलित होने दे। ऊर्ध्वरेता बन।

१०—सुशीलो मितभाषी सभ्यो भव।

सुशील, थोड़ा बोलनेवाला और सभा मे बैठने योग्य गुणो वाला बन।

समाजरूपी शरीर मे वैश्य का स्थान कमर कहा गया है। अतएव वैश्य तक यज्ञोपवीत पहनने के अधिकारी है। शूद्रो को अधिकार नही है। अत. कमर से नीचे यज्ञोपवीत का पहनना वर्जित है।

यज्ञोपवीत मे जो गाँठ दी जाती है, उसका नाम ब्रह्म-ग्रन्थि है। देहात मे इसे ब्रह्म गाँठ कहते है। गाठें भी तीन दी जाती है।

यज्ञोपवीत के सम्बध मे एक नियम और भी है। वह यह है कि यज्ञोपवीत अपने काते हुये सूत का होना चाहिये। बाज़ार से खरीदे हुये सूत का यज्ञोपवीत अपवित्र माना जाता है। इससे प्रत्येक द्विज को सूत कातने की प्रक्रिया का जानना अनिवार्य है। आजकल तो लोग बाजार से खरीदे हुये विलायती सूत का यज्ञोपवीत बनाते और पहनते हैं। शहरो मे तो जर्मनी से बने-बनाये यज्ञोपवीत आते और बिकते हैं। तीर्थ-स्थानो मे, घाटो पर बहुत से ब्राह्मण बैठे जनेऊ बेंचा करते है। वे प्राय वही जनेऊ बनाया भी करते हैं। कपड़ा सीने की रीलें वे बाज़ार से खरीद लेते हैं और उसे तिहरा करके उसमे मामूली गाँठ दे लेते हैं। उनको आजकल के बहुत से अंग्रेज़ी पढ़े हुए बाबू लोग (वेरी फाइन) जनेऊ कहकर ख़रीदते और पहनते हैं। इस प्रकार यज्ञोपवीत पहनने का उद्देश्य सर्वथा नष्ट हो गया है। अब कुछ लोग तो समाज के भय-वश, कुछ रूढ़ि-वश और कुछ अन्धविश्वास से जनेऊ पहनते हैं। यज्ञोपवीत की यह दुर्दशा शोचनीय है।

ब्राह्मण-बालक का यज्ञोपवीत ८ वर्ष की अवस्था मे होना चाहिये। क्षत्रिय का ११ वें वर्ष मे, और वैश्य का १२ वें वर्ष मे यज्ञोपवीत होना शास्त्र-सम्मत है। उपनयन-सस्कार के समय के विषय मे शतपथ ब्राह्मण का यह वचन है —

वसन्ते ब्राह्मणमुपनयेत्। ग्रीष्मे राजन्यम्। शरदि वैश्यम्। सर्वं काल मेके॥

ब्राह्मण का वसन्त मे, क्षत्रिय का ग्रीष्म मे और वैश्य का शरद् ऋतु मे यज्ञोपवीत करना चाहिये। अथवा सब ऋतुओ मे भी हो सकता है। दिन मे प्रात काल ही नियमित है।

देहातो मे अब भी यज्ञोपवीत-सस्कार धूमधाम से मनाया जाता है। सस्कार मे नाते-रिश्ते के प्राय सब लोग एकत्र होते है। यज्ञोपवीत धारण करने के दिन से ब्रह्मचारी को केवल भिक्षा पर जीवन-निर्वाह करके विद्याध्ययन करने का नियम है। समाज का अन्न खाकर जो ब्रह्मचारी विद्याध्ययन करता था, वह जीवन भर समाज का ऋण अपने ऊपर समझता था और ऋणमुक्त होने के लिये जीवन भर समाज की सेवा किया करता था। भिक्षा का वह लक्ष्य अब केवल आधे घंटे मे ही प्राप्त कर लिया जाता है। साथ ही विद्याध्ययन के पंद्रह-सोलह वर्ष भी आँगन से ड्योढ़ी तक ही समाप्त हो जाते है। ब्रह्मचारी विद्याध्ययन के लिये काशी जाने को तैयार होता है। दो चार कदम चलता है कि घरवाले वापस बुला लेते है। इस तरह हिन्दू-समाज मे यज्ञोपवीत का यह ढकोसला चला जा रहा है।

ब्रह्मचारी को भिक्षा देना पूर्वकाल मे बड़े पुण्य का काम समझा जाता था। भिक्षा देने की इस प्रथा से बड़े-बड़े गुरुकुलो का खर्च सहज ही मे चल जाता था। फड के लिये न किसी अधिवेशन की आवश्यकता होती थी, और न अन्य प्रकार के किसी आयोजन की। उस प्रथा को

त्याग देने ही से आजकल शिक्षा महँगी, संकुचित और केवल स्वार्थमूलक हो गई है।

जनेऊ के अवसर पर जो गीत गाये जाते हैं, वे प्राय सोहर ही छंद के होते है। पर लय मे कुछ अतर होना है।

यहो जनेऊ के कुछ गीत दिये जाते है।

[१]

देहु न माता मोहिं सतुवा और गुड गेडुवा।
जैहो मै कासी बनारस वेद पढ़ि अइहो॥ १॥
नाहीं मोरे सतुवा नाही गुड गेडुवा।
तोरा दादा है विद्वान घर ही वेद पढिल्यो॥ २॥
देहु न काकी मोहिं सतुवा और गुड़ गेडुवा।
जैहो मै काशी बनारस वेद पढ़ि अइहो॥ ३॥
नाही मोरे सतुवा नाही गुड़ गेडुवा।
तोरा काका है विद्वान घरही वेद पढिल्यो॥ ४॥
देहु न बूवा मोहिं सतुवा और गुड गेडुवा।
जैहो मै काशी बनारस वेद पढ़ि अइहो॥ ५॥
नाही मोरे सतुवा नाही गुड गेडुवा।
तोरा फूफा है विद्वान घरही वेद पढ़िल्यो॥ ६॥

ब्रह्मचारी कहता है— हे माता! मुझे सतुआ, गुड़ और लोटा दो। मै काशी जाकर वेद पढ़ आऊँ॥ १॥

माता कहती है—हे बेटा मेरे सतुवा, गुड़ और लोटा नही है। तेरे पिता विद्वान् हैं, उनसे ही घर पर वेद पढ़ लो॥ २॥

इसी प्रकार ब्रह्मचारी अपनो काकी और बुआ आदि से निवेदन करता है और एक सा उत्तर पाता है कि घर पर ही वेद पढ़ानेवाले विद्वान् हैं, यही वेद पढ़ लो।

यह गीत प्राचीन भारत का एक अनुपम दृश्य हमारी आँखो के आगे लाकर खडा कर देता है, जब एक-एक घर मे दो-दो, चार-चार वेदज्ञ विद्वान रहते थे। विद्या की रुचि इतनी थी कि बालक स्वयं काशी जाकर वेद पढ आने के लिये आग्रह करता था। ब्रह्मचारी एक मामूली जल पात्र के साथ घर से निकल जाता था और भिक्षावृत्ति से जीवन-निर्वाह करके गुरुकुल से पूर्ण विद्वान होकर घर लौटता था। अब उसकी स्मृति एक सुख स्वप्न के समान जान पडती है।

[२]

इमली क पेड सुरूहुर अवरी ढुरूहुर।
तेहि तर ठाढी कवनी देई दैव मनावइँ ॥ १ ॥
जनि दैव अर्जहु गरजहु जनि देव बरिसहु।
आवत होइहे मोर स्वामी भिसी बुनिअाँ भिजी जइहे ॥ २ ॥
केतनो तु ए दैव गरजहु केतनो तु बरिसहु।
हमरे जे सारे क जनेउ भिजत हम जाबइ ॥ ३ ॥
भिजे मोरे माँथे क मुरायठ हिरदै कर चदन।
भिजे मोरे सोरहो सिगार जनेउवा के कारन ॥ ४ ॥

इमली का वृक्ष सीधा और घनी छाया वाला होता है। उसके नीचे खडी अमुक देवी देवता मना रही है ॥१॥

हे दैव ! न गरजो, न तरजो, न बरसो। मेरे स्वामी आते होगे, जो नन्ही-नन्ही बूँदो से भीग जायगे ॥२॥

उस देवी का स्वामी कहता है—हे दैव ! तुम कितना ही गरजो और बरसो। मेरे साले का यज्ञोपवीत है। मै भीगता हुआ भी जाऊँगा ॥३॥

मेरे सिर की पगडी और हृदय का चदन भीग रहा है। जनेऊ के लिये मेरा सोलहो शृङ्गार भीग रहा है ॥४॥

इस गीत मे यह दिखलाया गया है कि मार्ग मे चाहे जैसी भी बाधा उपस्थित हो, पर जनेऊ मे अवश्य पहुंचना चाहिये।

[३]

द्वारेन द्वारे बरुवा फिरै बखरी पूछै बबा की हो।
द्वारेन उनके है कुइँया भीती चित्र उरेही हो॥
आँगन तुलसी क बिरवा वेदवन झनकारी है हो।
सभवन बैठे बाबा तुम्हरे बैठे पुरवै जनेउवा हो॥

नोट—पितामह से लेकर जितने लोग ब्रह्मचारी से बडे दर्जे के होते हैं, हरएक का नाम लेकर इन्ही पदो की आवृत्ति की जाती है।

ब्रह्मचारी द्वार-द्वार फिर रहा है और बाबा का घर पूछ रहा है। कोई उसको पता बता रहा है कि उनके द्वार पर कुँवा है। दीवार पर चित्र अकित हैं। उनके आंगन मे तुलसी का वृक्ष है। वेद-ध्वनि हो रही है। सभा मे बैठे हुये तुम्हारे बाबा जनेऊ बना रहे है।

इस गीत मे एक उच्च कोटि के ब्राह्मण गृहस्थ के घर की व्याख्या है। द्वार पर कुँवा, आंगन मे तुलसी, दीवारो पर चित्र, घर मे वेद-ध्वनि की गूँज और अपने हाथ मे जनेऊ कातना यह दृश्य अब बिरले ही कहीं देखने को मिलता है।

[४]

गंगा जमुन बिच आँतर चन्दन एक रुखवा है हो।
तेहि तर ठाडे फूफा उनके काते जनेउना हो॥
सात सखी मिलि पूछे किन्ह कातै जनेउना हो।
आठ बरिस के (अमुक राम) उन्हे पडित करबै हो।
हमरे दुलेरुवा (अमुक राम) उन्हे पंडित करबै हो॥

गंगा और जमुना के मध्य मे चन्दन का एक वृक्ष है। उसके नीचे अमुक व्यक्ति के फूफा खडे जनेऊ कात रहे हैं। सात सखी मिलकर

पूछती है कि किसके लिये जनेऊ काता जा रहा है ? फूफा ने कहा—आठ वर्ष के मेरे दुलारे अमुक राम हैं, उनको पंडित बनाऊँगा।

अपने हाथ से काता हुआ यज्ञोपवीत ही पहनने का माहात्म्य है।

[५]

सोने के खडाऊँ राजा दसरथ ठाढ पंडित पुकारे हो।
अरे अरे पंडित वशिष्ट जी मेरी अरज ओनाव॥
आठ बरिस के रमइया उन्हे देतउ जनेउना॥१॥
इतना सुनिन है वशिष्ठ जी मलिआ बुलावै।
माली पानेन मडवा छवावौ कलस धरावौ॥२॥
आठ बरिस कै दुलरुवा मडये तर ठाढे।
सिर वाके घाम लागै पॉव भूँभुरि लागै हो॥३॥
अरे अरे माय कौशिल्या रानी उठि भीख सँवारौ।
आठ बरिस के रमइया। चन्द्र मँड़ये तर ठाढे॥४॥

राजा दशरथ सोने के खडाऊँ पर खडे है और पंडित को बुला रहे हैं। हे पंडित वशिष्ट मुनि ! मेरी प्रार्थना सुनिये। आठ बरस के राम हो गये। अब इन्हे जनेऊ (यज्ञोपवीत) देना चाहिये॥१॥

इतना सुनते ही वशिष्ठ ने माली को बुलावाया और आज्ञा दी—पान का मडवा छवाओ और कलश रखवाओ॥२॥

आठ बरस के लाडले राम मडवे के तले खडे है। उनके सिर पर घाम लग रहा है और पैर जलती धूल से जल रहे है॥३॥

हे हे रानी कौशल्या ! उठो और भीख की तैयारी करो। आठ बरस के राम मोढौ के तले खड़े है॥४॥

आठ वर्ष की अवस्था मे यज्ञोपवीत हो जाने का नियम शास्त्रानुकूल है। राम की अवस्था आठ वर्ष की होते ही दशरथ चिंतित हुये और उन्होने वशिष्ठ से राम को यज्ञोपवीत दिला दिया।

[६]

नदिया के ईरे तीरे बरुवा से बरुवा पुकारे।
आजा पठय देव नाव नेवरिया बरुवा चला आवै ॥ १ ॥
ना हमरे नाव नेवरिया नाही घर खेवट।
जेकर जनेउआ के साध पउँरि नदिया आवई ॥ २ ॥
भीजै मोर आगे की अँगिवाँ सिर कै पगिया।
भीजै मोर सोरहौ सिंगार जनेउवा के साध ॥ ३ ॥
देब्यौ मै आगे के अगिवाँ सिर कै पगिया।
देब्यौ मैं सोरहौ सिंगार जनेउवा के कारन ॥ ४ ॥

नदी के किनारे एक ब्रह्मचारी पुकार रहा है—हे पितामह ! नाव भेज दो, तो मै पार उतर आऊँ ॥१॥

पितामह ने कहा—न मेरे नाव है, न केवट। यज्ञोपवीत की जिसकी लालसा हो, वह नदी तैर कर आवे ॥२॥

ब्रह्मचारी कहता है—मेरा अगरखा भीग रहा है, सिर की पगडी भीग रही है, जनेऊ के लिये मेरा सोलहो शृ गार भीग रहा है ॥३॥

पितामह ने कहा—मै अँगरखा दूँगा। मै पगडी द गा। मै जनेऊ के लिये सोलहो शृङ्गार दूँगा ॥४॥

जनेऊ के गीतो मे नदी तैर कर आने का ज़िक्र अक्सर मिलता है। जान पडता है, आठ वर्ष की उम्र तक तैरना सीख लेना ब्रह्मचारी के लिये पूर्वकाल मे अनिवार्य समझा जाता था।

[७]

गयाजी मे बरुआ पुकारेले हथवाँ जनेउवा ले ले।
है कोई गयाजी क ठाकुर हमके जनेउवा दिहे ॥ १ ॥
गयाजी क ठाकुर गजाधर उहे उठि बोललें।
हम अहीं नम्र क ठाकुर हमही जनेउवा देबों ॥ २ ॥

काशी मे बरुआ पुकारेले हथवाँ जनेउवा लेले।
है कोई काशी क ठाकुर हमके जनेउवा दिहे॥ ३॥
काशी क ठाकुर विश्वनाथ बाबा उहे उठी बोललें।
हम अही काशी क ठाकुर हमहीं जनेउवा देबो॥ ४॥
विन्ध्याचल मे बरुवा पुकारेले हथवाँ जनेउवा ले लें।
है कोई विन्ध्याचल मे ठाकुर हमके जनेउवा दिहे॥ ५॥
विन्ध्याचल क ठाकुर भवानी त उहे उठि बोलेलीं।
हम अही विन्ध्याचल क ठाकुर हमहीं जनेउवा देबों॥ ६॥

अर्थ स्पष्ट है। बहुत से ब्रह्मचारी, जिनका यज्ञोपवीत सस्कार किसी कारण से घर पर नही होता गया, काशी या विन्ध्याचल आदि तीर्थ-स्थानो मे चले जाते है और यज्ञोपवीत धारण कर लेते हैं। यह प्रथा अब भी प्रचलित है। पर अब केवल गरीब और अनाथ ब्राह्मण ही ऐसा करते है। क्योकि आजकल यज्ञोपवीत सस्कार मे गृहस्थ को बहुत ख़र्च करना पड़ता है। जो ख़र्च नही कर सकते, वे ही तीर्थ मे जाकर जनेऊ पहन लेते है।

[८]

करो न माया मेरी लहुआ और कछू सतुआ जू।
जावो मै काशी बनारस वेद पढ़ि आवहिं जू॥ १॥
काहे को जैहो पूता काशी काहे बनारस जू।
घरहीं अजुल मेरे वेदी तो वेद पढाय देहे जू॥ २॥
आजुल न हो मेरे अजुला तुहीं मोर अजुला जू।
आजुल अहिर गडरिया पढ़ाय बह्मन करि लीयो जू॥ ३॥

ब्रह्मचारी कहता है—हे माँ! लड्डू और कुछ सत्तू दो न? मै काशी जाकर वेद पढ़ आऊँ॥१॥

माँ कहती है—बेटा ! काशी क्यो जाओगे ? घर मे ही तुम्हारे पितामह बडे वेदज्ञ है, वे वेद पढा देंगे ॥२॥

ब्रह्मचारी कहता है—हे पितामह ! तुम मेरे पितामह हो, तुमने अहीर गडरियों को पढाकर ब्राह्मण बना दिया है, मुझे भी पढा दो ॥३॥

यह गीत उस समय का स्मरण दिला रहा है, जब विद्वान् होना ही ब्राह्मणत्व का प्रमाण था।

[६]

राजा दसरथ अंगना मूँजि कौशिल्या रानी भल चीरै।
लपकि झपकि चीरै दूनौ हाथे चीरै॥
रामचन्द्र बरुवा भुइयाँ लोटि जाय जनेउवा के कारन॥ १॥
राजा दसरथ झारिन भूरिनि जाँघ बैठाइनि।
देबै बेटा सोने कै जनेउ जनेउवा बड़ा उत्तिम॥ २॥
राजा दसरथ अगना मूँजि सुमित्रा रानी भल चीरै।
लपकि झपकि चीरै दूनौ हाथे चीरै॥
रामचन्द्र बरुवा भुइयाँ लोटि जायँ जनेउवा के कारन॥ ३॥
राजा दशरथ झारिनि भूरिनि जाँघ बैठाइनि।
देबै बेटा सोने कै जनेउ जनेउवा बडा उत्तिम॥ ४॥
राजा दसरथ आँगन मूँजि केकई रानी भल चीरै।
लपकि झपकि चीरै दूनौ हाथे चीरै।
रामचन्द्र बरुवा भुइयाँ लोटि जायं जनेउवा के कारन॥ ५॥
राजा दसरथ झारिनि भूरिनि जाँघ बैठाइनि।
देबै बेटा सोने के जनेउ जनेउवा बड़ा उत्तिम॥ ६॥
वशिष्ठ मुनि अंगना मूँजि गुरुआइनि भल चीरै।
लपकि झपकि चीरै दूनौ हाथे चीरै।
रामचन्द्र बरुवा भुइयाँ लोटि जायँ जनेउवा के कारन॥ ७॥

वशिष्ठ मुनि झारिनि झूरिनि जाँघ बैठाइनि।
देबै बेटा सोने कै जनेउ जनेउवा बड़ा उत्तिम ॥८॥

राजा दशरथ के आँगन मे मूँज है। कौशिल्या रानी उसे अच्छी तरह चीर रही हैं। लपक-झपक कर चीरती हैं। दोनो हाथो से चीरती हैं। ब्रह्मचारी राम जनेऊ के लिये भूमि पर लोट-लोट जाते हैं ॥१॥

राजा दशरथ ने राम को उठाया। धूल पोंछी। जांघ पर बैठा लिया और कहा—बेटा! मैं तुम्हे पहनने के लिये सोने का जनेऊ दूँगा, जो बहुत उत्तम होता है ॥२॥

ऐसी ही बातें सुमित्रा, कैकेयी और वशिष्ठ मुनि ने भी कहीं। इस गीत मे राम के बहाने यह बताया गया है कि बालकों मे जनेऊ लेने की उत्सुकता कैसी होती है।

[१०]

काहे को हरुला काहे की है माछ।
सोने को हरुला, रूपे की है माछ।
राम लछिमन दोनो जोते खेत।
काहे की डलिया काहे की है ढाँक।
राइयो रुक्मिन बीज लै जाँय।
राम लछिमन दोनों बोवै कपास।
एक पत्ता दो पत्ता तीसरे कपास।
काहे की है चरखी काहे की है डंडी।
चन्दन चरखी सोने की है डडी।
राइयो रुक्मिनि ओटै कपास॥
काहे की है धुनियाँ काहे की है ताँत।
सोने की धुनियाँ रेसम की है ताँत।
राइयो रुक्मिनि धुनै कपास॥

काहे की है रहटा काहे की है माल।
चन्दन रहटा रेसम की है माल।
राइयो रुक्मिन कातै सूत॥
एक तागा, दो तागा, तीसरे जनेउ।
तीन तागा, चार तागा, पाँचवे जनेउ।
पाँच तागा, छ तागा, सातये जनेउ।
सात तागा, आठ तागा, नौवे जनेउ॥
पहिलो जनेउ गनेसजी को देव।
दुसरो जनेउ ब्रह्माजी को देव॥
तीसरे जनेउ महादेवजी को देव।
चौथो जनेउ विष्णुजी को देव॥
पाँचवो जनेउ सब देवतन देव।
छठवो जनेउ सब पुरखन देव॥
सातवो जनेउ बरुआ को देव।
अहिर गडरिया बम्हन कर लेव॥

यह गीत इटावा जिले का है। इसमे कपास बोने से लेकर सूत बनने और सूत से फिर जनेऊ बनने तक का क्रम वर्णित है। अन्त मे कहा गया है कि इसी सूत के प्रभाव से अहीर गडरिये भी ब्राह्मण हो सकते हैं।

इस गीत से यह भी अभिप्राय निकलता है कि हरएक द्विज को स्वयं हल चलाना, कपास बोना, ओटना, धुनना, चरखा चलाना, सूत कातना और सूत से जनेऊ बनाना जानना चाहिये। घर-घर मे चरखे की रक्षा के लिये ही तो कहीं यह नियम नहीं बनाया गया था?

[११]

गंगा किनारे बरुआ फिरै केऊ पार उतारइ हो।
पठइ दे आजा नवरिया बरुआ चढि आवइ हो॥

न मेरे नाव न नवरिया नाहीं घर केवट हो।
जेकरे जनेऊ के साध पवरि दह आवइ हो॥
गगा किनारे बरुआ फिरै केऊ पार उतारहु हो।
पठई दो पिताजी नावरिया बरुआ चढ़ि आवइ हो॥
न मेरे नाव न नवरिया नाही घर केवट हो।
जेकरे जनेउआ के साध पवरि दह आवइ हो॥
गंगा किनारे बरुआ फिरै केऊ पार उतारहु हो।
पठई दे भइया राम नावरिया बरुआ चढि आवइ हो॥
न मोरे नाव न नवरिया नाहीं घर केवट हो।
जेकरे जनेउआ के साध पवरि दह आवइ हो॥

गगा के किनारे ब्रह्मचारी फिर रहा है कि मुझे पार उतार दो। हे पितामह ! नाव भेज दो तो ब्रह्मचारी उस पर चढ़कर इस पार आ जाय।

पितामह ने कहा—न मेरे नाव है, न केवट। जिसको जनेऊ की लालसा हो, वह दह तैरकर इधर आ जाय।

इसी प्रकार ब्रह्मचारी अपने पिता और भाई से भी प्रार्थना करता है और वही उत्तर पाता है जो पितामह ने दिया था।

पूर्वकाल मे यज्ञोपवीत होने से पहले ब्रह्मचारी को तैरना जानना आवश्यक समझा जाता था। देश मे नदी-नालो की अधिकता और पुलो की कमी से तैरना जानना शिक्षा का एक अङ्ग माना जाता था।

[१२]

चनन कै बिरछा हरेर तौ देखतै सुहावन।
त्यहिं तर ठाढ़ि देई आजी दैवा मनावै।
दैवा आज बदरिया न होयव आजु मोरे नतिया कै जनेव॥ १॥

चनन कै बिरछा हरेर तौ देखतै सुहावन।
त्यहिं तर ठाढ़ि दीदी देई दैवा मनावै।
दैवा आजु बदरिया न होयव आजु मोरे पुतवा कै जनेव ॥ २ ॥
चनन कै बिरछा हरेर तौ देखतै सुहावन।
त्यहिं तर ठाढ़ि देई काकी दैवा मनावैं।
दैवा आजु बदरिया न होयव आजु मोरे पुतवा कै जनेव ॥ ३ ॥
चनन कै बिरछा हरेर तौ देखतै सुहावन।
त्यहिं तर ठाढ़ि बहिनि देई दैवा मनावै।
दैवा आजु बदरिया न होयव आजु मोरे भैया कै जनेव ॥ ४ ॥

चन्दन का हरा वृक्ष है, जो देखने मे बड़ा सुन्दर लग रहा है। उसकी छाया मे देवी पितामही खडी होकर ईश्वर से विनय कर रही हैं—हे भगवान्! आज बदली न हो। आज मेरे पौत्र का जनेऊ है ॥१॥

यही पद दीदी, काकी और बहन के नाम से भी गाया जाता है। सब का अर्थ वही है, जो ऊपर दिया गया है।

[१३]

मलिया मौर नाहीं गाछै बेइलिया के फूल बिना।
मोरे लाल जनेउवा नाहीं पहिरै तो अपने आजा बिना ॥
मलिया मौर अब गांछै बेइलिया के फूल पाये।
मोरे लाल जनेउवा अब पहिरै तौ आजा अब आये ॥
मलिया मौर नहिं गांछै बेइलिया के फूल बिना।
मोरे लाल जनेउवा नाहीं पहिरै तौ अपने दादा बिना ॥
मलिया मौर अब गाछै बेइलिया के फूल पाये।
मोरे लाल जनेउवा अब पहिरै तौ दादा अब आये ॥
मलिया मौर नाहीं गाछै बेइलिया के फूल बिना।

मोरे लाल जनेउवा नाही पहिरै तौ अपने काका बिना ।।
मलिया मौर अब गाछै बेइलिया के फूल पाये ।
मोर लाल जनेउवा अब पहिरै तौ काका अब आये ।।
मलिया मौर नाहीं गाछै बेइलिया के फूल बिना ।
मोर लाल जनेउवा नाही पहिरै तौ अपने फूफा बिना ।।
मलिया मौर अब गाछै बेइलिया के फूल पाये ।
मोर लाल जनेउवा अब पहिरै तौ फूफा अब आये ।।

माली लता के फूल बिना मौर नही बना रहा है। मेरा प्यारा लडका भी पितामह की उपस्थिति बिना जनेऊ नहीं पहन रहा है।

इसी प्रकार दादा, काका और फूफा के नाम से अगले पद गाये जाते है। यज्ञोपवीत के अवसर पर इन सब का उपस्थित रहना आवश्यक होता है।

[१४]

ऊँच ओसरवा कवन रामा आले बाँस छाई ।
ग्वँभिया ओठँघली दुलहिन सुनो पिया पण्डित ।
बरहा बरिसवा कै लाल भये ब्राभन कै देतेउ ।।
चाही तो ये धन चाही दस धोती अँगोछा ।
चाही तौ ये धन चाही दस ब्राभन भोजन ।
चाही तो ये धन चाही अमृत फल नरियल ।।
ऊँच ओसरवा कवन रामा आले बाँस छाई ।
ग्वँभिया ओठँघली दीदी कवनि देई सुनो पिया पडित ।
बरहा बरिसवा के लाल भये ब्राभन कै देतेउ ।।
चाही तौ ये धन चाही दस धोती अँगोछा ।
चाही तौ ये धन चाही दस ब्राभन भोजन ।
चाही तौ ये धन चाही अमृत फल नरियल ।।

ऊँच बखरिया काका राम आले बाँस छाई।
खँभिया ओठँघली चाची कर्वान देई सुनौ पिया पडिएत।
बरहा बरिसवा के लाल भये ब्राभन कै देतेउ।।
चाही तौ ये धन चाही दस धोती अँगौछा।
चाही तो ये धन चाही दस ब्राभन भोजन।
चाही तो ये धन चाही अमृत फल नरियल।।

अमुक व्यक्ति का ऊँचा ओसारा है, जो हरे बाँसों से छाया हुआ है। उसकी स्त्री खंभे की आड मे खडी होकर कहती है—हे प्रियतम! प्यारा लडका बारह वर्ष का हो गया, उसे ब्राह्मण बना दो।

पति ने कहा—हे प्यारी स्त्री! दस धोती और दस अंगोछा चाहिये। कम से कम दस ब्राह्मणो को भोजन कराने की सामग्री चाहिये। अमृत जैसा मीठा नारियल का फल चाहिये।

इसी प्रकार दीदी और चाची ने भी अपने-अपने पतियो से कहा और सब को उपर्युक्त उत्तर मिला।

यज्ञोपवीत संस्कार मे साधारणत किन-किन चीज़ो की ज़रूरत पड़ती है, यही इस गीत मे बताया है।

[१५]

यक तो मोतिया दुरहुर देखतै सुहावन।
वैसहि दुरहुर बरुवा तो मागै बरूवा नौ गुन।।
आजी मोरि मारै गरियावै दादुल झझकोरै।
आजा कवन राम परमोधै देबै नाती नौ गुन।।
एक तौ मोतिया दुरहुर देखतै सुहावन।
वैसहि दुरहुर बरूआ राम तौ मागै नौ गुन।।
मैया मोर मारै गरियावै दादुल झिझकोरै।
दाता कवन राम परमोधै देबै बेटा नौ गुन।।

नोट—इसमें कवन की जगह आजा, दादा, फूफा, चाचा, मामा इत्यादि का नाम जोडा जाता है।

जैसे मोती गोल और देखने मे सुन्दर होता है, वैसा ही ब्रह्मचारी है। वह नौगुणो से युक्त यज्ञोपवीत मांग रहा है।

पितामही मारती है। दादा झकझोरते है। पर पितामह ढाढ़स देते है कि हे पौत्र! मै तुमको नौगुण दूँगा।

यही अर्थ आगे के पदो का भी है। अन्तर इतना ही है कि उनमे पितामह के स्थान पर क्रम से दादा, फूफा, चाचा, मामा इत्यादि के नाम जोडे लिये जाते है।

यज्ञोपवीत पहनकर व्रती बनने की रुचि बालको मे बचपन ही से होती थी। इस गीत मे ब्रह्मचारी ने यज्ञोपवीत मांगा। पितामही और दादा ने उसे रोका। क्योकि वे उसे बहुत प्यार करते थे और अभी किसी व्रत मे बंधने देना नही चाहते थे। पर प्रपितामह, जो सस्कारो की मर्यादा के रक्षक थे, उन्होने उसे आश्वासन दिया कि उसे यज्ञोपवीत दिया जायगा। इस गीत मे कुटुम्बियो की मनोदशा का चित्र है।

[१६]

गलिया कै गलिया पडित घूमैं हथवा पोथिया लिहे।
कवन बखरिया राजा दसरथ तौ रामा कै जनेउ॥ १॥
बॉसन धोतिया सुखत होइहै बरुवा जेवत होइहै
पंडित वेद पढ़ै रे।
आँगन ढोल धमाकै, दइव अस गरजै॥
उहै बखरिया राजा दसरथ तौ रामा कै जनेउ॥ २॥
गलिया कै गलिया नाऊ घूमै हथवा किसबतिया लिहे।
कवन बखरिया राजा दसरथ तौ रामा कै जनेउ॥ ३॥

बॉसन धोतिया सुखत होइहै, बरूवा जेवत होइहै,
पंडित वेद पढ़ै रे।
आँगन ढोल धमाकै, दइव अस गरजै।
उहै बखरिया राजा दसरथ तौ रामा कै जनेउ ॥ ४ ॥
गलिया के गलिया बढ़ैया घूमै हथवा पटुलिया लिहे।
कवन बखरिया राजा दसरथ तौ रामा कै जनेउ ॥ ५ ॥
बॉसन धोतिया सुखत होइहै, बरूवा जेवत होइहै,
पंडित वेद पढ़ै रे।
आँगन ढोल धमाकै दइव अस गरजै।
उहै बखरिया राजा दसरथ तौ रामा कै जनेउ ॥ ६ ॥
गलिया के गलिया कुम्हरवा घूमै हथवा बरौवा लिहे।
कवन बखरिया राजा दसरथ तौ रामा कै जनेउ ॥ ७ ॥
बॉसन धोतिया सुखत होइहै बरूवा जेवत होइहै,
पंडित वेद पढ़ै रे।
आँगन ढोल धमाकै दइव अस गरजै।
उहै बखरिया राजा दसरथ तौ रामा कै जनेउ ॥ ८ ॥
गलिया के गलिया फूफा घूमै हथवा जनेउवा लिहे।
कवनि बखरिया राजा दसरथ तौ रामा कै जनेउ ॥ ९ ॥
बॉसन धोतिया सुखत होइहै, बरूवा जेवत होइहै,
पंडित वेद पढ़ै रे।
आँगन ढोल धमाकै दइव अस गरजै।
उहै बखरिया राजा दसरथ तौ रामा कै जनेउ ॥१०॥

पंडित हाथ मे पुस्तक लिये गली-गली मे घूम रहे है और पूछ रहे हैं—राजा दशरथ की बखरी (घर) कौन सी है ? जहाँ राम का जनेऊ होने वाला है ॥१॥

जहाँ बाँस पर धोतियाँ सूखती होंगी, ब्रह्मचारी भोजन कर रहे होंगे, पंडित वेदोच्चार कर रहे होंगे, आँगन में ढोल बज रही होगी, मानो बादल गरज रहा है, वहीं राजा दशरथ की बखरी है, जहाँ राम का जनेऊ है ॥२॥

इसी प्रकार हाथ में किरबत (उस्तरा आदि रखने का थैला) लिये हुये नाई, पटुली (काठ की तख्ती, जिस पर लड़के लिखना सीखते हैं) लिये हुये बढ़ई, कुल्हड़ लिये हुये कुम्हार, और जनेऊ लिये हुये फूफा राजा दशरथ का घर पूछते हैं और वहीं उत्तर पाते हैं।

[१७]

ऐ कनउजवा के ब्राहम्न हमरेहूँ आएहु ।
पोथिया पतरवा लैके आएहु हमरे बरत-बन्ध ॥१॥
कैसे क तोहरे आइब घरवा नहिं चीन्हौ,
नाम न जानौ ॥२॥
आँगन मोरे माँडव ओसरवाँ मोरे कोहबर ।
हरदीक घेवरल कवन लाल कवन लाल द्वारे आएहु ॥३॥
ऐ जवने बन सिंकिया न डोलै भवंरा न गुञ्जरइ ।
ऐ तवने बन पैठत कवन राम परास डण्डा तोरै ॥४॥
ऐ काहे की टागिया तुहुँ कटबेउ केथुआ सिहुरबेउ ।
ऐ केकरे मण्डप बोठँघउबेउ केकर बरत-बन्ध ॥५॥
ऐ सोनवाँ की टेंगिया हम कटबई रुपवा सिहुरबई ।
राजा दसरथ मण्डप बोठँघउबै राजा रामचन्द्र क,
बरत-बन्ध ॥६॥
(फतहगढ़)

हे कन्नौज के ब्राह्मण ! हमारे यहां भी आना । पोथी पत्रा लेकर आना । हमारे यहा व्रतबन्ध-संस्कार है ॥ १ ॥

मै तुम्हारे यहां कैसे आऊँगा ? मै घर तो पहचानता ही नहीं, और नाम भी नही जानता ॥ २ ॥

मेरे आंगन मे मोंडौ छाया है। ओसारे मे कोहबर है। हल्दी लपेटे हुए अमुक लाल (बालक का नाम) खडे होगे। अमुक लाल (पिता का नाम) के द्वार पर आना ॥ ३ ॥

जिस बन मे सीक नही डोलती, भौरा भी गुञ्जार नही करता। उस सघन बन मे अमुक राम (पिता का नाम) पैठकर ढाक का डडा तोड रहे है ॥ ४ ॥

किस चीज़ की बनी हुई कुल्हाडी से डडे को काटोगे ? किससे छीलोगे ? किसके मंडप मे मौरा खडा करोगे ? और किसका व्रत-बन्ध है ॥ ५ ॥

सोने की कुल्हाडी से काटूँगा। रूपे की कुल्हाडी से छीलूँगा। राजा दशरथ के मडप मे उसे खडा करूँगा। राजा रामचन्द्र का व्रत-बन्ध है ॥ ६ ॥

[१८]

चैतहि बरुआ तेज चले, बइसाख मे पहुँचन हो ॥ १ ॥
मैं तोहसे पूँछहुँ ए बरुआ, तुहुँ जाबेउ कवने घर हो ॥ २ ॥
जाबेउँ जाबेउँ मै वोही घरा, जहाँ दाता बसै सब लोग ॥ ३ ॥
जो मै जनतेउँ ए बरुआ, हमरे घर अउबेउ हो।
बलुहर खेत जोतवतेउँ, घन मोतिया बोअवतेउँ हो ॥ ४ ॥
मोतियन थार भरवतेउँ, भिखिया उठि देतेउँ हो ॥ ५ ॥

(जौनपुर)

बरुआ (ब्रह्मचारी) चैत मे चलकर बैसाख मे पहुंचे ॥ १ ॥

हे बरुआ ! मैं तुमसे पूछता हूँ कि तुम किस घर को जाओगे ? ॥ २ ॥

मैं उस घर को जाऊँगा, जहाँ के सब लोग दाता हो ॥ ३ ॥

हे बरुआ ! यदि मै जानता कि तुम मेरे घर आओगे तो मै बलुआ खेत जोतवा कर उसमे घनी मोती बोवा देता और मोतियो से थाल भरकर तुमको उठकर भोग देता ॥४॥

प्राचीन काल मे ब्रह्मचारियो को भिक्षा देना एक गृह-धर्म समझा जाता था। गृहस्थो मे ब्रह्मचारियो को भिक्षा देने की कैसी उत्सुकता रहती थी, इस गीत मे उसका आभास मिलता है।

[१६]

सभवाँ बइठल तोहे बाबा अमुक बाबा
करि घालू हमर जनेव।
बिना रे जनेउआ बाबा न सोभे कान्हा
नहिं रउरी जतिया के जोग ॥ १ ॥
जाँघ नहिं जोड थ भइया रे अमुक भइया,
जिनि भइया दाहिन बाँह।
ग्वाली जनेउआ बरूआ न सोभे कान्हा,
न होयब जतिया के जोग ॥ २ ॥
नित उठि अरे बाबू गगा नहायब,
सुरूज अरघ हम देब हे।
साँझ सबेरे बाबू गायत्री सुमिरब
तब होयब जतिया के जोग हे।
जाँघ भला जोड़िहै भइया अमुक भइया,
जिन भइया दाहिन बाँह ॥ ३ ॥
(बलिया)

सभा मे बैठे हुए हे बाबा (बाप का नाम) ! मेरा जनेऊ कर डालो। हे बाबा ! जनेऊ बिना कन्धा सुन्दर नहीं लगता और न मैं आप

की जाति-पाँति मे बैठ सकता हू ॥ १ ॥

मेरे भाई (भाई का नाम), जो मेरी दाहिनी भुजा है, (भोजन के समय) जोघ नही जोडते। जनेऊ बिना ब्रह्मचारी सुन्दर नहीं लगता, और न स्वजाति मे बैठने योग्य होता है ॥ २ ॥

हे बाबू ! नित्य उठकर गगा नहाऊँगा, रोज़ सूर्य को अर्घ्य दूँगा और प्रात काल और सध्या को गायत्री का जप करूँगा, तब जाति के योग्य होऊँगा। तब भाई (नाम लेकर) जाँघ जोड़ेंगे, जो मेरी दाहिनी भुजा है ॥ ३ ॥

इस गीत मे जनेऊ के लिये बालक की स्वाभाविक उत्सुकता प्रकट की गई है।

[२०]

नव दुअरिया नव खभा गडावे रे।
ताही नीचे सुतहिं कवन बाबा सुख नींन री ॥१॥
आहो पैठि जगावइँ कवन देई।
सुनु पिया पडित रे ॥ २ ॥
बरहा बरिस के ललनवा,
बरुवा देइ घालहु रे ॥ ३ ॥
अरे धना सुलछनी बरुवा कुछु चाहेल रे।
अछत, चनन, मोतिया गठि बन्हन रे ॥ ४ ॥
लाख टका, लाख धोती।
मोतिया गँठि बन्हन रे ॥ ५ ॥

पुत्र बारह वर्ष का हो गया है। माता अपने पति को जगाकर कह रही है कि जनेऊ कर दो। पति कह रहा है कि हे सुलक्षणा देवी, जनेऊ करने के लिये अच्छत, चंदन, मोती, लाख रुपये और लाख धोतिया गठबंधन के लिये चाहिये।

नहछू

नहछू विवाह के पहले और कहीं कहीं पीछे भी होता है। यहां एक गीत दिया जाता है, जिसमें इसका वर्णन कुछ विस्तार के साथ आ गया है।—

[१]

घर घर घुमहि नउनिया तौ गोतिनी बुलावै।
राम लछन कै नहछु सभै कोई आयो॥ १॥
पॉच पाट कै जाजिम झारि बिछाओ।
जेकरे जहॉ मनु होय तहॉ ते बैठो॥ २॥
केई दीना चुटकी मुँदरिया केई दीना रूप।
केई दीना रतन जडाऊ ता भरिगा है सूप॥ ३॥
केकई ने चुटकी मुँदरिया कौशिल्या रानी रूप।
सुमित्रा रानी रतन जडाऊ तौ भरिगा है सूप॥ ४॥
पातर पातर अगुली तौ नाउनि गोरी।
करत राम जीव कै नहछु तौ घूँघुट खोली॥ ५॥
नौआजे झगरै नउनिया से यह सब थोर।
राम लछन जी कै नहछु लेबौ मै घोड॥ ६॥
जनि झगरौ नौआ रे जनि झगरौ यह सब थोर।
राम ब्याहि घर लौटे तौ देबौ मै घोड॥ ७॥

(एटा)

नाइन घर-घर घूम रही है, गोतिनो को बुला रही है, आज राम और लक्ष्मण का नहछू है, सब कोई आना॥ १॥

पॉच परत (तह) का जाजिम झाड़ कर बिछा दो। जिसका जहां मन हो वह वहा बैठे॥ २॥

किसी ने अँगूठी दी, किसी ने रूपा (चाँदी) दिया, किसी ने जड़े हुये रत्न दिये और इस प्रकार सूप भर गया ॥ ३ ॥

कैकेई ने अँगूठी दी। कौशिल्या ने रूपा दिया। सुमित्रा रानी ने जड़े हुये रत्न दिये और इस प्रकार सूप भर गया ॥ ४ ॥

नाइन की उँगली पतली-पतली है और वह गौर वर्ण की है। घूँघट खोलकर वह रामचन्द्र का नहछू कर रही है ॥ ५ ॥

नाई, नाइन से झगड़ा कर रहा है कि यह सब थोड़ा है। राम-लक्ष्मण का नहछू है, मैं घोड़ा लूँगा ॥ ६ ॥

ऐ नाई ! झगड़ा मत करो कि यह सब थोड़ा है। राम जब ब्याह करके वापस आयेंगे तो मैं घोड़ा दूँगी ॥ ७ ॥

इस गीत में दिखाया गया है कि जनेऊ के समय नहछू में प्रजा-गण अधिक से अधिक इनाम पाने के लिये झगड़ते हैं। उनके इस झगड़ने में भी आनन्द आता है। उन्हें निराश न कर भविष्य में फिर किसी उत्सव पर देने को कह कर राज़ी कर लिया जाता है।

विवाह के गीत

हिन्दुओ मे विवाह एक धार्मिक प्रथा है। यह केवल वासना की तृप्ति के लिये नही किया जाता, बल्कि मनुष्य-धर्म का उचित रीति से पालन करना ही इसका एकमात्र उद्देश्य है। हिन्दुओ मे विवाह-कर्म इतना पवित्र माना गया है कि एक बार केवल पाणि-ग्रहण कर लेने ही से स्त्री-पुरुष दोनो जीवन भर धर्म के बंधन मे बंध जाते है। हिन्दुओ के इतिहास मे कितने ही उदाहरण ऐसे हैं, जिनमे स्त्री ने पति को मन मे वरण कर लिया था और उसने उसे पाणि-ग्रहण से अधिक महत्त्व दिया था। जैसा सावित्री, रुक्मिणी, और सयोगिता ने किया था। वैवाहिक पवित्रता की रक्षा के ऐसे उदाहरण ससार मे दुर्लभ है।

मनुस्मृति मे आठ प्रकार के विवाहो का उल्लेख है। जैसे—

चतुर्णामपि वर्णानां प्रेत्य चेह हिताहितान्।
अष्टाविमान्समासेन स्त्रीविवाहान्निबोधत ॥ १ ॥
ब्राह्मो दैवस्तथैवार्ष. प्राजापत्यस्तथासुर ।
गान्धर्वो राक्षसश्चैव पैशाचश्चाष्टमोऽधम ॥ २ ॥
आच्छाद्य चार्चयित्वा च श्रुतिशीलवते स्वयम।
आहूय दान कन्याया ब्राह्मो धर्म प्रकीर्तित ॥ ३ ॥
यज्ञे तु वितते सम्यगृत्विजे कर्म कुर्वते।
अलकृत्य सुतादान दैव धर्म प्रचक्षते ॥ ४ ॥
एक गोमिथुन द्वे वा वरादादाय धर्मत ।
कन्याप्रदान विधिवदार्षो धर्म स उच्यते ॥ ५ ॥
सहोभौ चरतां धर्ममिति वाचानुभाष्य च।
कन्या प्रदानमभ्यर्च्य प्राजापत्यो विधि स्मृत ॥ ६ ॥

ज्ञातिभ्यो द्रविणं दत्वा कन्यायै चैव शक्तित ।
कन्याप्रदानं स्वाच्छन्द्यादासुरो धर्म उच्यते ॥ ७ ॥
इच्छयान्योन्यसंयोग कन्यायाश्च वरस्य च ।
गान्धर्व स तु विज्ञेयो मैथुन्य कामसभव ॥ ८ ॥
हत्वा छित्वा च भित्वा च क्रोशन्ती रुदती गृहात् ।
प्रसह्य कन्याहरण राक्षसो विधिरुच्यते ॥ ९ ॥
सुप्ता मत्तां प्रमत्ता वा रहो यत्रोपगच्छति ।
स पापिष्ठो विवाहाना पैशाचश्चाष्टमोऽधम ॥१०॥

अर्थात्—लोक और परलोक मे चारो वर्णों के हित और अहित के साधक-रूप जो आठ प्रकार के विवाह है । उन्हे सक्षेप से कहता हू ॥१॥

१—ब्राह्म, २—दैव, ३—आर्ष, ४—प्राजापत्य, ५—आसुर, ६—गान्धर्व, ७—राक्षस, ८—पैशाच । पैशाच सब मे अधम है ॥२॥

अच्छे शीलवान्, गुणवान् वर को स्वय बुलाकर उसे भूषण-वस्त्र से अलकृत और पूजित करके कन्या देना ब्राह्म-विवाह है ॥३॥

यज्ञ मे सम्यक् प्रकार से कर्म करते हुये ऋत्विज को अलङ्कारादि से पूजित कर कन्या देने को दैव-विवाह कहा है ॥४॥

वर से एक या दो जोड़े गाय, बैल धर्मार्थ लेकर विधिपूर्वक कन्या देने का नाम आर्ष-विवाह है ॥५॥

"तुम दोनो साथ मिलकर गृह-धर्म का पालन करो" वर से यह कह कर और पूजन करके जो कन्या-दान किया जाता है, वह प्राजापत्य-विवाह कहलाता है ॥६॥

कन्या के बाप या चाचा आदि को और कन्या को भी यथाशक्ति धन देकर स्वच्छन्दता-पूर्वक कन्या का ग्रहण करना आसुर-विवाह कहलाता है ॥७॥

कन्या और वर की इच्छा से उनका संयोग होना गान्धर्व-विवाह है ।

यह काम-भोग की इच्छा से होता है और मैथुन के लिये है ॥८॥

मारकर, घायलकर, गृह आदि को तोडकर, रोती-विलपती कन्या को जबरदस्ती हरण कर ले जाने का नाम राक्षस-विवाह है ॥९॥

नीद मे सोई हुई या मदमाती, या पागल कन्या के साथ एकान्त में उपभोग करना अत्यन्त पाप-पूर्ण पैशाच-विवाह कहलाता है ॥१०॥

इनमे पहले के चार तो श्रेष्ठ और अन्त के चार निकृष्ट है। हिन्दुओ के इतिहास मे निकृष्ट विवाहो के भी उदाहरण मिलते है। जैसे—

कन्या-विक्रय के रूप मे आसुर-विवाह तो आज-कल बहुत होने लगा है।

शकुन्तला और दुष्यंत का गन्धर्व-विवाह लोक-प्रसिद्ध है।

भीष्म ने काशिराज की कन्या का हरण लड़-झगड कर ही किया था। आल्हा-ऊदल के ज़माने मे इस प्रकार के राक्षस-विवाह तो क्षत्रियों मे खूब होने लगे थे।

पुराणो मे पैशाच-विवाह के भी उदाहरण मिलते है।

आजकल जो विवाह प्रचलित है, उसे ब्राह्म और दैव का मिश्रण ही कहना चाहिये। परन्तु उसमे भी बाहरी आडबर इतना मिल गया है कि उसकी सच्ची व्याख्या करनी कठिन है।

विवाह मे सप्तपदी, जिसे भांवर घूमना या फेरे लेना भी कहते हैं, मुख्य है। सप्तपदी का अर्थ बड़ा ही महत्वपूर्ण है। यहां सप्तपदी के वाक्य उद्धृत किये जाते है—

१—इष एक पदी भव। सा मामनुव्रता भव।

वर कहता है—हे वधू! इच्छाशक्ति प्राप्त करने के लिये एक पग चल। मेरा व्रत पूर्ण करने मे सहायता कर।

कन्या कहती है—मैं तुम्हारे प्रत्येक सत्य संकल्प मे सहायता करूँगी।

२—ऊर्जे द्विपदी भव । सा मामनुव्रता भव ।
तेज प्राप्त करने के लिये दूसरा पग चल । मेरा व्रत पूर्ण करने मे सहायता कर ।

३—रायस्पोषाय त्रिपदी भव । सा मामनुव्रता भव ।
कल्याण की वृद्धि के लिये तीसरा पग चल । मेरा व्रत पूर्ण करने मे सहायता कर ।

४—मायोभव्याय चतुष्पदी भव । सा मामनुव्रता भव ।
आनन्दमय होने के लिये चौथा पग चल । मेरा व्रत पूर्ण करने मे सहायता कर ।

५—प्रजाभ्य पचपदी भव । सा मामनुव्रता भव ।
प्रजा के लिये पांचवां पग चल । मेरा वत पूर्ण करने मे सहायता कर ।

६—ऋतुभ्य षट्पदी भव । सा मामनुव्रता भव ।
नियम-पालन के लिये छठाँ पग चल । मेरा व्रत पूर्ण करने मे सहायता कर ।

७—सखा सप्तपदी भव । सा मामनुव्रता भव ।
हम दोनो मे परस्पर मैत्री रहे, इसके लिये सातवां पग चल । मेरा व्रत पूर्ण करने मे सहायता कर ।

कन्या वर के प्रत्येक आदेश के उत्तर मे उसके सभी सत् सकल्पो मे सहायता देने की प्रतिज्ञा करती है ।

यही सात पदो की प्रतिज्ञा है जो हिन्दू स्त्री-पुरुष को जीवन भर के लिये धर्म मे बांध देती है । विवाह के इतने सुन्दर नियम ससार की शायद ही किसी अन्य जाति मे प्रचलित हों ।

आजकल के विवाहो मे बहुत से नये रस्म-रिवाजो का मिश्रण हो गया है । जैसे, वर का जामा पहनना—यह मुसलमानो की नकल है ।

जामा शब्द ही विदेशी है। तरह तरह के बाजे बजना—पूर्व काल मे वीणा आदि सुमधुर बाजे ही बजते थे। मुसलमानी काल मे ताशा और दफला आया। अँगरेजी राज मे अब बैंड भी विवाह का एक अग हो गया है। इस तरह हिन्दू-विवाह की विशुद्धता जाती रही।

विवाह के गीतो मे एक प्रथा का और भी वर्णन मिलता है, जो आजकल योरप मे प्रचलित है। वह है, वर का कन्या के कुटुम्बियो से विवाह का प्रस्ताव करना। हमारे पास कुछ गीत ऐसे है, जिनमे वर कन्या के आँगन मे जाकर बैठा है और आने का कारण पूछे जाने पर उसने कहा है कि इस घर मे एक कुमारी कन्या है, मै उससे विवाह करना चाहता हू। इस प्रकार का एक गीत आगे दिया भी गया है। आजकल की प्रथा तो यह है कि कन्या का पिता वर की खोज करता है और योग्य वर मिलने पर वह कन्यादान करता है। वर के लिये कन्या के पिता की परेशानी का जैसा चित्र गीतो मे खीचा गया है, वैसा शायद ही कोई महाकवि खीचने मे समर्थ हो।

विवाह के गीतो मे दो प्रकार के गीत है। एक तो कन्या के घर मे गाये जाने वाले, दूसरे वर के घर मे गाये जाने वाले। कन्या-पक्ष के गीत वर-पक्ष के गीतो से अधिक करुण और मधुर है। खास कर बेटी की विदा के गीत तो पत्थर को भी पिघला देने वाले है। वर-पक्ष के गीत ज्यादातर शोभा-सजावट और धूमधाम के होते है।

विवाह के गीतो मे सबसे अधिक महत्त्व-पूर्ण बात यह है कि उनमे ऐसे वर-कन्या के मनोभाव वर्णित हैं, जो अल्पवयस्क नहीं होते, बल्कि युवक और युवती होते है। कही-कही तो वर स्वय कन्या खोजता फिरता है, और कही-कही कन्या स्वयं वर के लिये लालायित होती है। कही-कही कन्या स्वयं यह कहती हुई मिलती है कि 'हे पिता! मेरे लिये ऐसा वर खोजना।' अल्पवयस्का कन्या ऐसा नही कह सकती। इससे प्रकट होता

है कि ये गीत हिन्दू-समाज मे बाल-विवाह प्रचलित होने से पहले के हैं। समाज बदल गया, पर गीत ज्यों के त्यों रहे। गीत स्त्री-धन है, इससे पुरुषों ने उसमे हाथ नही लगाया।

विवाह के गीतो मे भाई-बहन के अकृत्रिम प्रेम-सम्बन्धी गीत भी बड़े मनोहर है। बहन अपने बेटे या बेटी के विवाह मे अपने भाई और भौजाई को निमन्त्रित करती है। भाई न्योता लेकर आता है। इससे बहन का हृदय उमड आता है। इस प्रसग के हृद्गत भावो का वर्णन गीतों मे बडी ही सरसता से किया गया है।

विवाह के गीतो मे खाने-पीने की चीज़ो की एक लम्बी सूची भी रहती है। विवाह के अवसर पर चाहे सभी चीज़ें न बनती हो, पर बर के जीमते समय व्यञ्जनो के नाम तो गिना ही दिये जाते हैं।

यहाँ विवाह के कुछ गीत दिये जाते है—

[१]

कौन की ऊँची अँटरिया सुरुज मुख छाई।
किन घर कन्या कुँवारी त दुलहो चाहिए ॥१॥
अजुल की ऊँची अँटरिया सुरुज मुख छाई।
बबुल घर कन्या कुँवारी त दुलहो चाहिए ॥२॥
कौन को पूत तपसिया अँगन मेरे तपु करै।
सजना को पूत तपसिया अँगन मेरे तपु करै ॥३॥
भीतर से निकसी अजिया थार भर मोती लिहे।
भीतर से निकसी मैया थार भर मोती लिहे ॥४॥
भीतर से निकसीं भौजिया थार भर मोती लिहे।
लेहु न पूत तपसिया अँगन मेरो छोड़ौ ॥५॥
कहा करौ थार भर मोतिया अँगन नहिं छाडौ।
तुम घर कन्या कुँवारी तु हमका ब्याहि देव ॥६॥

बाहर ते आये बिरन भइया हाथ खडग लिहे।
मारौ मैं पूत तपसिया बहिन मोरी माँगै ॥७॥
भीतर से निकसीं लाडली मोतियन माँग भरे।
जिन मारौ पूत तपसिया जनम मेरो को खेइहै ॥८॥

यह ऊँची अटारी किसकी है ? जिसका द्वार पूर्व ओर है। किसके घर में क्वारी कन्या है ? जिसे दूलहा चाहिये ॥ १ ॥

यह ऊँची अटारी आजा (पितामह) की है, जो पूर्वाभिमुख छाई है। बाबा के घर में क्वारी कन्या है, जिसे वर चाहिये ॥ २ ॥

यह किसका तपस्वी पुत्र है ? जो मेरे आंगन में तप कर रहा है। यह पुत्र सजन (समधी) का है, जो आंगन में तप कर रहा है ॥३॥

पितामही थाल भरकर मोती लिये भीतर से निकली। माता थाल भरकर मोती लिये भीतर से निकलीं। भावज थाल भरकर मोती लिये भीतर से निकली। सब ने कहा— हे तपस्वी पुत्र ! यह मोती लो और मेरा आंगन छोड़ दो ॥ ४,५ ॥

मैं थाल भरकर मोती क्या करूँ ? मैं आगन नहीं छोड़ूँगा। तुम्हारे घर में क्वारी कन्या है, वह मुझे ब्याह दो ॥ ६ ॥

बाहर से भाई हाथ में तलवार लेकर आया। उसने कहा—मैं इस तपस्वी को मार डालूँगा, जो मेरी बहन मांग रहा है ॥ ७ ॥

भीतर से लाड में पली हुई कन्या निकली, जिसकी मांग मोतियों से भरी थी। उसने कहा—हे भाई ! इस तपस्वी को मत मारो। इसे मार डालोगे तो मेरे जीवन की नैया खेकर पार कौन लगायेगा ? ॥ ८ ॥

यह गीत उस समय का स्मरण दिला रहा है, जब वर और कन्या दोनों विवाह के लिये स्वतन्त्र थे। ससार-यात्रा सुख-पूर्वक और निर्विघ्न समाप्त करने के लिये दोनो अपनी-अपनी रुचि के अनुकूल साथी चुनते थे। इस गीत में वर स्वय कन्या की खोज में निकला है और एक ऐसे

घर के आँगन मे आ बैठा है, जिसमे एक क्वारी कन्या रहती है। जान पडता है, कन्या की स्वीकृति वह पहले ले चुका था, जैसा कि कन्या ने उस समय,जब कन्या का भाई वर को मारने चला है,आगे बढकर कहा है कि तुम इसको मारोगे तो मेरा जीवन खेकर कौन पार लगायेगा ? अब कन्या के माता-पिता की स्वीकृति अतिम थी, जिसके लिये वर आया है। यह प्रथा भारत देश मे नही है। योरप मे है। वहा कन्या की स्वीकृति लेकर वर उसके माता-पिता से विवाह का प्रस्ताव करता है। जब वे स्वीकार कर लेते है, तब विवाह होता है।

गीत मे जिस प्रथा का चित्र है, वह हिन्दू-सभ्यता मे एक नई वस्तु है। क्योकि हिन्दुओ के इतिहास और काव्यो मे जैसा वर्णन मिलता है, उसके अनुसार कन्या ही पहले वर पर आसक्त होती है। जैसे सावत्री सत्यवान् पर, सीता राम पर, रुक्मिणी श्रीकृष्ण पर और सयोगिता पृथ्वीराज पर पहले आसक्त हुई थी। यही यहा का आदर्श है, और सस्कृत के कवि सदा इसी आदर्श को महत्त्व देते रहे है। गीत मे इसके विपरीत जिस प्रथा का वर्णन है, वह प्रथा भी कभी हिन्दुओ मे रही होगी, जो अब बिलकुल उठ गई है।

उस प्रथा का वर्णन इस गीत की प्राचीनता का सब से प्रबल प्रमाण है।

इस गीत से यह भी स्पष्ट होता है कि विवाह कम से कम उस उम्र मे होता था, जब कन्या यह कह सकती थी कि "जनम मेरो को खेइहै" मेरा जन्म कौन खेयेगा ? जिस अवस्था मे कन्या के हृदय मे अपने भावी जीवन की चिंता उत्पन्न हो जाती है और वह अनुभव करने लगती है कि मुझे एक ऐसे योग्य साथी की आवश्यकता है जिसके साथ मै अपना जीवन सुख-पूर्वक बिता सकूँ, उस अवस्था मे यह विवाह हुआ था, जिसका वर्णन इस गीत मे है।

हमे इस गीत से और भी कई बातो का पता चलता है। जैसे, घर का द्वार पूर्व ओर होना चाहिये। देहात के लोग प्राय पूर्व ओर द्वार रखना बहुत पसन्द करते है और शुभ समझते है। दूसरे तलवार का उपयोग आज जिस तरह लाठी घर-घर मे है, उसी तरह पूर्वकाल मे प्रत्येक पुरुष के पास होती थी।

भाई तलवार लेकर मारने क्यो दौडा ? क्योंकि वह अभी नादान था। बहन के मनोभाव को समझ नहीं सकता था। वह तो केवल इस लिये दुखी था कि उसकी बहन को कोई उससे छीन ले जायगा। प्रकृति कन्या को उसके भाई की पहुच से बहुत दूर निकाल लाई है। अबोध भाई का यह क्रोध कितना करुणाजनक है !

[२]

सावन सुगना मै गुर घिउ पाल्यो चैत चना कै दालि।
अब सुगना तू भयउ सजुगवा बेटी क बर हेरइ जाव ॥ १ ॥
उडत उडत तू जायो रे सुगना बैठेउ डरिया ओनाय।
डरिया ओनाय बैठा पखना फुलायउ चितया नजरिया घुमाय ॥२॥
जे वर सुगना तु देखउ सुन्दर जेकरि चाल गम्हीर।
जेहि घरा सुगना तु सम्पति देख्यो वोह घर रचेउ बिआह ॥३॥
हेरेउँ वर मै सजुग सुलच्छन भहर भहर मुँह जोति।
साठि वरद मै चन्नि मे देखेउँ वाही घर रचहु बिआह ॥४॥

हे सुआ ! तुम को मैने सावन मे गुड, घी और चैत मे चने की दाल खिला कर पाला। अब तुम समझदार हुये। जाओ बेटी के लिये वर ढूढ आओ ॥ १ ॥

हे सुआ ! तुम उड़ते उडते जाना और पेड़ की डाल झुकाकर बैठना। डाल झुकाकर बैठना, पंख फुलाना और इधर-उधर दृष्टि दौड़ाकर देखना ॥ २ ॥

हे सुआ ! जिस वर को तुम सुन्दर देखना, जिसकी चाल मे गभीरता देखना और जिस घर मे धन देखना वही विवाह ठीक करना ॥ ३ ॥

सुआ कहता है—मैंने अच्छे लक्षणोवाला और चैतन्य वर ढूढ़ लिया है। जिसके मुँह पर ब्रह्मचर्य की आभा दमक रही है। उसके घर मे साठ बैल मैंने चन्नि या चरनी (बैल जहा पर बांधकर खिलाये जाते है) मे देखे। उस घर मे विवाह करो ॥ ४ ॥

इस गीत से कई बातो का पता चलता है। पहले तो यह कि देहात के लोग किस ऋतु मे तोते को क्या-क्या खिलाते है। दूसरे विवाह-योग्य वर और घर की व्याख्या। इस व्याख्या मे वर की गभीर चाल और उसके मुँह की ज्योति विशेष ध्यान देने योग्य है। गभीर चाल से वर के विचारवान् होने का और मुँह की ज्योति से उसकी युवावस्था का और विशुद्ध ब्रह्मचर्य का पता चलता है। वर मे ये दो विशेषताये काफी हैं। और घर मे ३० हल चलते है। इससे जान पड़ता है कि वह अच्छा किसान है।

[३]

बाबा जे चलेन मोर वर हेरेन पाट पितम्बर डारि।
छोटे देखि बाबा करबै न करिहै बडा नाही नजरि समाय ॥ १ ॥
अरे अरे बाबा सुघर बर हेरेव हम बेटी तोहरी दुलारि।
तीनि लोक मा हम बड़ि सुन्दरि हँसी न करायउ मोरि ॥ २ ॥
उसरा माँ गोड़ि गोड़ि ककरी बोवायों ना जानौ तीत न मीठ।
देसवा निकरि बेटी तोर बर हेरौ ना जानौ करम तोहार ॥ ३ ॥
पूरब हेरेउँ पछुवाँ मैं हेरेउँ हेरेउँ मैं दिल्ली गुजरात।
तुमहिं जोग बर कतहुँ न पावा अब बेटी रहहु कुँवारि ॥ ४ ॥
पूरब हेरेव पछुवाँ मे हेरेव हेरेव दिल्ली गुजरात।
चारि परग भुइयाँ नगर अयोध्या दुइ बर अहै कुँवार ॥ ५ ॥

वै वर मांगैं बेटी घोडा औ हाथी मागै मोहर पचास।
वै बर मागै बेटी नौलख दायज मोरे बृते देइ न जाइ ॥ ६ ॥
जेकरे न होय बाबा हाथी औ घोडा नहिं होय मोहर पचास।
जेकरे न होय बाबा नौ लख रूपैया ते वर हेरै हरवाह ॥ ७ ॥
हर जोति आवै कुदार गोडि आवै बइठै मंह लटकाय।
उनही क तिलक चढाया मोरे बाबा वै बर दयजा न लेयँ ॥ ८ ॥
आसन देखि बाबा डासन दीहौ मुख देखि दीहौ बीरा पान।
अपनी सपति देखि दाइज दीहौ बर देखि दिहौ कन्या दान ॥ ९ ॥

रेशमी पीताम्बर ओढकर बाबा मेरे लिये वर खोजने चले है। छोटे वर से तो वे मेरा विवाह करेंगे ही नहीं। बडा उनकी आंख मे समायगा ही नहीं ॥१॥

हे बाबा ! सुघर वर ढूढना। मै तुम्हारी दुलारी बेटी हू। मै तीनो लोको मे सबसे अधिक सुन्दरी हू। देखना, मेरी हसी न कराना ॥२॥

बाबा ने कहा—ऊसर को गोड-गोडकर मैने ककडी बोआई है। पर मालूम नहीं ककडियां तीती होगी या मीठी ? इसी तरह हे बेटी ! मै देश-विदेश जाकर तुम्हारे लिये वर ढूँढता हू। पता नही, तुम्हारे भाग्य मे क्या बदा है ? वर अच्छा मिलता है या अयोग्य ॥३॥

बाबा ने कहा—मैने पूरब ढूँढा, पश्चिम ढूँढा, दिल्ली और गुजरात भी ढूँढ लिया। पर हे बेटी ! तुम्हारे अनुरूप कही वर नही पाया। अब तुम कुमारी रहो ॥४॥

बेटी ने कहा—हे पिता ! तुमने पूरब भी ढूँढ डाला, पश्चिम भी ढूँढ डाला, दिल्ली और गुजरात भी ढूँढ लिया। पर चार ही क़दम पर अयोध्या नगरी है, जहां दो वर कार है ॥५॥

बाबा ने कहा—हे बेटी ! वे वर घोड़ा-हाथी और पचास मोहरें

तथा नौ लाख का दहेज माँगते है। मेरी हिम्मत तो इतना देने की नही है ॥६॥

बेटी ने हंसी किया—हे पिता ! जिसके हाथी-घोडा न हो, पचास मोहरें न हो और जो नौ लाख का दहेज न दे सके, वह हल जोतने वाला वर ढूंढे ॥७॥

जो हल जोतकर आवे, कुदार से खेत गोडकर आवे तो मुँह लटकाकर बैठे। हे बाबा ! उन्ही को तिलक चढाना। वे वर दहेज नही लेते ॥८॥

जैसे आसन हो, वैसा डासन (बिछौना) देना। मुँह देखकर पान का बीडा देना। अपना धन देखकर दहेज देना। और वर देखकर कन्या-दान देना ॥९॥

इस गीत की कन्या इतनी सयाना हो चुकी है कि अपने बाबा के मन की पसद का उसे पता है। साथ ही कन्या को यह भी पता है कि योग्य वर कहां कहां है ? वह अपने बाबा से कहती भी है कि तुम सब जगह तो दौड आये, पर वहां नही गये। वह इतनी समझदार भी हो चुकी है कि किसान के जीवन की आलोचना कर सकती है। जैसा उसने हलवाहे का मज़ाक उडाया है। खासकर मुँह लटकाकर बैठने वाली बात तो बड़ी ही विनोद-पूर्ण है।

[४]

पहिलै मँगन सीता मांगैली से हो बिधि पुरवहु हो।
ललना मागैली जनकपुर नैहर अवधपुर सासुर हो ॥ १ ॥
दुसर मँगन सीता मागैली से हो बिधि पुरवहु हो।
ललना मांगैली कौसिल्या ऐसन सासु ससुर राजा दसरथ हो ॥ २ ॥
तिसर मँगन सीता मांगैली से हो बिधि पुरवहु हो।
ललना मांगैली पुरुष रामचंद्र देवर बबुआ लछिमन हो ॥ ३ ॥

चौथा मँगन सीता मागैली रहो विधि पुर वैलै हो।
ललना लव कुश ऐसन मागै पूत जनम अहिवाती हो ॥ ४॥

सीता ने पहला मांगन यह मांगा, जिसे ब्रह्मा पूरा करें, कि जनकपुर नैहर और अवधपुर ससुराल हो ॥१॥

सीता ने दूसरा मांगन यह मांगा, जिसे ब्रह्मा पूरा करें, कि कौशिल्या ऐसी सास और राजा दशरथ ऐसे ससुर मिले ॥२॥

तीसरा मांगन सीता ने यह मांगा, जिसे ब्रह्मा पूरा करे, कि पति भगवान् रामचन्द्रजी हो और देवर लक्ष्मण ॥३॥

चौथा मांगन सीता ने यह मांगा, जिसे ब्रह्मा पूरा करे कि लव, कुश ऐसे पुत्र हो और मै जन्म भर सौभाग्यवती रहू ॥४॥

प्रत्येक हिन्दू-परिवार मे दशरथ, कौशिल्या, राम, सीता, लक्ष्मण और भरत आदर्श-रूप होते है। हिन्दुओं ने अपने आदर्श को प्रत्येक घर मे प्रतिविम्बित कर रक्खा है।

[५]

कौन गरहनवाँ बाबा साँझे जे लागै कौन गरहन भिनुसार।
कौन गरहनवाँ बाबा औघट लागै कब धौ उगरह होइ ॥ १॥
चन्द्र गरहनवा बेटी साझे जे लागै सुरुज गरहनवा भिनुसार।
धेरिया गरहनवा बेटी औघट लागै कब धौ उगरह होइ ॥ २॥
कॉपइ हाथी रे कॉपइ घोड़ा कॉपइ नगरा के लोग।
हाथ मे कुस लिहे कॉपइँ बाबा कब धौ उगरह होइ ॥ ३॥
रहँसइँ हाथी रे रहँसइँ घोड़ा रहँसइँ सकल बरात।
मड़ये मुदित मन समधी रे बिहँसइ भले घर भयहु बिआह ॥ ४॥
गंगा पैठि बाबा सुरुज से बिनवइँ मोरे बूते धेरिया जिनि होइ।
धेरिया जनम तब दीहा विधाता जब घर सम्पति होइ ॥ ५॥

कन्या पूछती है—हे पिता! कौन ग्रहण रात मे लगता है?

कौन दिन मे ? और कौन ग्रहण बेवक्त लगता है ? और कब छूटता है ? ॥१॥

पिता कहता है—हे बेटी ? चन्द्र ग्रहण रात मे लगता है और सूर्य-ग्रहण दिन मे। कन्या-ग्रहण का कोई ठिकाना नही कि कब लगे और कब छूटे ॥२॥

हाथी कांप रहे है, घोडे कांप रहे है, नगर के लोग काप रहे है, हाथ मे कुश लिये बाबा कांप रहे है। न जाने कब छुट्टी मिलेगी ॥३॥

हाथी प्रसन्न है, घोडे प्रसन्न है, सारी बारात प्रसन्न है। मांडो के नीचे बैठा हुआ समधी (वर का बाप) प्रसन्न है कि अच्छे गृहस्थ के यहां मेरे पुत्र का विवाह हुआ है ॥४॥

पिता गंगाजी मे खडे होकर सूर्य से विनय करते है—हे सूर्य ! मेरे बल पर कन्या न देना। कन्या का जन्म तभी हो, जब घर मे सम्पत्ति हो ॥५॥

गीत के अन्त मे कन्या के पिता ने कैसी मार्मिक बात कही है। जब वर और कन्या अपनी पसंद के अनुसार विवाह कर लेते थे, तब उनके पिताओं पर इतना भार नहीं पडता था। पर जब से पिताओं ने यह जिम्मेदारी अपने ऊपर ले ली है, तब से उनकी चिन्ता बढ़ गई है। और आजकल तो कन्या के पिता को इतना कष्ट, इतना अपमान सहना पडता है कि कन्या का पिता होना पूर्वजन्म के किसी अपराध का फल ही समझना चाहिये।

[६]

देउ न मोरी माई बासे क डेलैया फुलवा लोढ़न हम जाब।
फुलवा लोढ़त भइली खड़ी दुपहरिया हरवा गछत
भइली साँझ रे ॥ १ ॥

घुमरि घुमरि सीता फुलवा चढ़ावैं शिव बाबा देलेन असीस।
जौन माँगन तुहुँ मांगौ सीतल देई उहै माँगन हम देब ॥ २ ॥
अन धन चाहै जो दिहा शिव बाबा स्वामी दिहा सिरी राम।
पार लगावै जे मोरि नवरिया जेहि देखे हिअरा जुडाइ ॥ ३ ॥

हे मेरी माँ ! बांस की डलिया मुझे दो। मैं फूल लोढ़ने (चुनने, तोडने) जाऊँगी। फूल लोढने मे दुपहरी हो गई और हार गांछने (बनाने) मे शाम हो गई ॥१॥

घूम-घूम कर सीता फूल चढ़ा रही है। शिव बाबा ने प्रसन्न होकर कहा—हे सीता देवी ! जो तुम मांगो, मै वही दूंगा ॥२॥

सीता ने कहा—हे शिव बाबा ! अन्न और धन तो चाहे तुम जितना देना, पर स्वामी श्रीरामचन्द्र देना। जो मेरी नाव को खेकर पार लगावे और जिन्हे देखकर हृदय शीतल हो जाय ॥३॥

सच है, स्त्री को तो केवल एक योग्य स्वामी चाहिये, जो उसकी नाव को खेकर पार लगा दे।

[७]

पुरुब पछिम मोरे बाबा क सगरवा पुरइनि हालर देइ।
तेहि घाटे दुलहे धोतिया पखारै पूछै दुलहिन देई बात ॥ १ ॥
केकर अहे तुँ नतिया रे पुतवा कौने बहिनिया क भाय।
कौने बनिजिया चले बर सुन्दर केकरे सगरे नहाउ ॥ २ ॥
अजवा कौन सिंह क नतिया रे पुतवा कौन कुँवरि कर भाइ।
सेन्दुर बनिजिया चले हम सुन्दरि ससुर के सगरे नहाउँ ॥ ३ ॥
येतनी बचन सुनि दुलही कौन कुँवरि धाय माया लगे जायँ।
जेबर मोरे माया नगरा ढुंढाये से बर सगरे नहायँ ॥ ४ ॥
राम रसोइयाँ भौजी कौन कुँवरि धाय भौज लग जाय।
जे बर भौजी नगरा ढुंढाये से बर सगरे नहायँ ॥ ५ ॥

आवहु ननदोइया पलँग चढ़ि बैठहु कुँचहु मोहोबे के पान।
अपने कामिनिया क डॅडिया फॅदावहु लै जाउ बैरिनि हमारि ॥ ६॥
की भौजी तोर नोनवा चुरायउँ की तेल दिह्यो ढरकाय।
की भौजी तोर भइया गरिआयउँ कौने गुन बैरिनि तोहारि ॥ ७॥
ना ननदी मोर नोनवा चुरायउ न तेलवा दिह्यो ढरकाय।
ना ननदी मोर भइया गरिआयउ बोली गुन बैरिनि हमारि ॥ ८॥

पूरब से पच्छिम तक खूब लम्बा चौडा मेरे बाबा का तालाब है। जिसमे पुरइन (कमल का पत्ता) लहरा रहे है। उसी तालाब के घाट पर दुलहा धोती पछार रहा है। उससे दुलहिन बात पूछती है ॥१॥

तुम किसके नाती और किसके पुत्र हो ? तुम किस बहन के भाई हो ? हे सुन्दर वर ! किस चीज का व्यापार करने के लिये तुम निकले हो ? और किसके तालाब मे नहा रहे हो ? ॥२॥

वर कहता है—अमुक सिह मेरे पितामह है और अमुक देवी का मै भाई हूँ। हे सुन्दरी ! सिन्दूर का व्यापार करने के लिये हम निकले है और अपने ससुर के तालाब मे नहा रहे है ॥३॥

यह बात सुनते ही कन्या अपनी माँ के पास दौडकर गई और कहने लगी—माँ, जिस वर के लिये सारे शहर ढूँढ़ डाले गये, वह वर तो तालाब पर नहा रहा है ॥४॥

कन्या की भौजाई रसोई मे थी। वह उसके पास जाकर बोली—भौजी ! जिस वर के लिये सारे शहर ढूँढ़ डाले गये, वह वर तो तालाब पर नहा रहा है ॥५॥

भौजाई ने कहा—आओजो ननदोई जी ! पलँग पर बैठो और महोबे का पान कूँचो। अपनी कामिनी के लिये पालकी सजाओ और मेरी इस बैरिन को ले जाओ ॥६॥

ननद ने कहा—हे भौजी ! तुम मुझे बैरिन क्यो कहती हो ? क्या

मैंने तुम्हारा नमक चुराया था ? या तेल गिरा दिया था ? या तुम्हारे भाई को गाली दी थी ? ॥७॥

भौजाई ने कहा—हे ननद ! न तुमने मेरा नमक चुराया, न तेल तुलकाया और न मेरे भाई ही को गाली दी। केवल बोली के कारण से तुम मेरी बैरिन हो ॥८॥

इस गीत से यह बात मालुम होती है कि कन्या अवस्था मे इतनी बडी हो चुकी थी कि वह अपने भावी पति के रूप और गुण की प्रशंसा सुनकर उस पर हृदय से आसक्त हो चुकी थी। उधर वर भी कन्या की खोज मे चला हुआ जान पडता है। पहले से उसे कन्या और उसके पिता आदि का हाल ज्ञात न होता तो वह कैसे कहता कि 'ससुर के सगरे नहाऊँ'। मालूम होता है, वह कन्या को एक बार अपनी आँखो से देखने आया था।

दूसरी बात इस गीत मे यह है कि भौजाई ने ननद को अपनी बैरिन बताया है। कारण पूछने पर उसने ननद को बताया है कि तुम बहुत कटुवचन बोलती हो। ननद भौजाई मे प्राय झगड़े हुआ करते हैं और इसमे प्रधान कारण कटुवचन ही होता है।

[८]

पिया अपने को प्यारी, पिया अपने को प्यारी,
सो अपने पिया पै सिंगार करो ॥ १ ॥
पहिरो धर्म की जेहरि, पहिरो धर्म की जेहरि,
सो भजन की दुन्दुभि बाजि रही ॥ २ ॥
ओढ़ो चुप्प चुनरिया, ओढ़ो चुप्प चुनरिया,
सो ज्ञान को घाँघरो घूम रहो ॥ ३ ॥
पहिरो अकिल की अँगिया, पहिरो अकिल की अँगिया,
सो श्रुति स्मृति दोऊ बंद लगे ॥ ४ ॥

पहिरो हरी पीरी चुरियाँ, पहिरो हरी पीरी चुरिया,
सो बीच बँगलियाँ अजब बनी ॥ ५ ॥
पहिरो दसहु मुँदरिया, पहिरो दसहु मुँदरिया,
सो पोरन पोरन पहिर लई ॥ ६ ॥
पहिरो शील को सूता, पहिरो शील को सूता,
सो दया की हमेल गले मे डरी ॥ ७ ॥
पहिरो नेह नथुनिया, पहिरो नेह नथुनिया,
सो प्रेम को लटकन झूम रहो ॥ ८ ॥
करो मान को काजर, करो मान को काजर,
सो विरह की बेंदी लिलार दई ॥ ९ ॥
पाँचो तत्व को तेलवा, पाँचो तत्व को तेलवा,
सो सुमति की डोरी मे चोटी गुही ॥ १० ॥
इतनो धन पहिरो, इतनो धन पहिरो,
तब रूठे पिया को मनावै चलो ॥ ११ ॥
साईं मो तन हेरो, साईं मो तन हेरो,
सो उठ के कबीरा गुरु बाँह गही ॥ १२ ॥

हे अपने प्रियतम की प्यारी स्त्री ! अपने प्रियतम के लिये यह शृङ्गार करो।

पतिव्रत-धर्म की माला पहनकर, भजन का नगाडा बजाकर, चुप की चुनरी, ज्ञान का घांघरा, बुद्धि की अंगिया—जिसमे श्रुति और स्मृति दो बद लगे है, हरी पीली चूडियो, दसो उँगलियो मे अंगूठियाँ, शील के सूत मे दया की हमेल, स्नेह की नथनी, प्रेम का लटकन, मान का काजल, विरह की बेंदी पहनकर, पांचो तत्वो का तेल लगा कर, सुमति की डोरी से चोटी गूँथकर हे स्त्री ! अपने प्रियतम को मनाने चलो।

इस गीत का अभिप्राय यह है कि धातु के गहनो से शरीर की

शोभा नही बढ सकती और न उसे देखकर पति ही प्रसन्न हो सकता है। बल्कि गुणो के गहनो ही से स्त्री की शोभा बढती है। गुणवती स्त्री ही पति को प्यारी हो सकती है। इस गीत का आध्यात्मिक अर्थ भी है, जो जीव को स्त्री और ब्रह्म को पति मानकर किया जाता है।

[६]

सासु तो चली है निहारन झीने झीने कापड।
केकरे मै आरती उतारौ कवन वर सुन्दर ॥१॥
ओढे है पीत पितम्बर और बघम्बर।
सिर की मउरिया लपकत आवइ, इन्हई के आरती
उतारौ यही वर सुन्दर ॥२॥
सासु तौ अरती उतारिन बिनती बहुत करै।
अबै मोर धिया लरिका अजान कुछौ नाहिं जानै ॥३॥
तोरि धिया लरिका अजान कुछौ नाहिं जानै।
हमहूँ कमल कर फूल दुहूँ जन बिहँसब ॥४॥

बारीक कपड़े पहनकर सास देखने चली है। वह सुन्दर वर कौन है ? मै किसकी आरती उतारूँ ? ॥ १ ॥

जो पीताम्बर और बाघम्बर ओढे है, जिनके सिर पर मौर चमक रहा है, ये ही सुन्दर वर है। इनकी आरती उतारो ॥ २ ॥

सास ने आरती उतारी और बडी विनती की कि अभी मेरी कन्या बहुत नादान है, कुछ नही जानती ॥ ३ ॥

पति ने कहा—तुम्हारी कन्या नादान है और कुछ नही जानती तो क्या हुआ ? मै भी तो कमल के फूल सा हूँ। दोनो जन प्रसन्न होंगे ॥ ४ ॥

[१८]

राजा जनक अइले नहाई के मनहिं उदासल।
कवन चरित्र आज भइले धनुष तर लीपल ॥१॥
हम नहिं जानीला ए हरि पुछि ल सीताजी से।
सीता के सखिआ बहुती जनकजी के आँगन ॥२॥
जनक सीता बलावेले जान्ह बैठावेले।
बेटी कवने हाथ धनुष उठाव कवन हाथे लीपेलु ॥३॥
बाँये हाथे धनुषा उठाइ दहिने हाथ लिपीला।
इहे चरित्र आज भइले धनुष तर लीपल ॥४॥
जनक मन पछितालनी मन मे दुखित भयें।
अब सीता रहेली कुंवारी जनम कैसे बीती ॥५॥
काहे के बाबा पछिताला त मन मे दुखित होला।
अब हम पुजबो भवानी त राम बर पाइब ॥६॥
कचन थाली गढावेला आरती साजेली।
चलीं न सखि फुलवारी त पूजे भवानी ॥७॥
घुमरि घुमरि सीता पूजेली पूजेली भवानी।
परसन होई न भवानी त पुरब मनोरथ ॥८॥
देवि जे हँसली ठठाई के बडे परसन से।
पुजिहे मनेक मनोरथ राम बर पावेलु ॥९॥

जनक स्नान करके उदास मन से घर आये। पूछने लगे कि आज यह क्या अद्‌भुत काम हुआ कि धनुष के नीचे लीपा हुआ है ॥ १ ॥

जनक की रानी ने कहा—हे नाथ! मैं नहीं जानती। देखिये, सीता से पूछती हूँ। जनक जी के घर मे सीता की बहुत सी सखियां हैं ॥ २ ॥

जनक ने सीता को बुलाया, प्यार से जाघ पर बैठाकर पूछा—बेटी! किस हाथ से धनुष उठाया और किस हाथ से लीपा?

सीता ने कहा—बायें हाथ से धनुष उठाकर दाहिने से लीपा है। आज धनुष के नीचे लीपा है। यही बात है ॥ ४ ॥

जनक मन ही मन पछताने लगे कि अब सीता कुँवारी रहेगी। इसका जन्म कैसे बीतेगा ? ॥ ५ ॥

सीता ने कहा—पिता ! पछताते क्यों हो ? दुःखित क्यों होते हो ? अब मैं देवी की पूजा करूँगी और राम को वरूँगी ॥ ६ ॥

सीता ने सोने की थाली बनवाई, आरती सजाया और सखियों से कहा—सखियो ! फुलवारी में चलो, देवी की पूजा करें ॥ ७ ॥

सीता घूम-घूम कर, बार-बार देवी की पूजा करती है और प्रार्थना करती है—हे देवी ! प्रसन्न हो, मनोरथ पूर्ण करो ॥ ८ ॥

देवी बहुत प्रसन्न होकर, ठठाकर हसी और बोली—बेटी ! तुम्हारे मन का मनोरथ पूर्ण होगा और तुम को राम वर मिलेंगे ॥ ९ ॥

हिन्दू-स्त्रियों में सीता के विवाह के लिये जनक के चिन्तित होने की कथा इसी तरह प्रचलित है। इससे प्रकट होता है कि सीता जब इस अवस्था को पहुँची कि बायें हाथ से धनुष उठा सकी, तब जनक को उनके विवाह की चिन्ता हुई। आश्चर्य है कि ऐसे गीत गा गाकर भी स्त्रियाँ नन्ही-नन्ही बच्चियों का विवाह पसंद करती हैं।

[११]

सात सखी सीता चढि गई अटरिया इन्द्र झरोखे लाग।
कौन दुल्हा कौन दुल्हे क बाबा कौन दुलहे जेठ भाय ॥१॥
माती हथिनिया रे घुमरत आवै घुमरि-घुमरि डारै पाँव।
सोने कै मटुकवा बिराजत आवै वै दुलहे कर बाप ॥२॥
नदिया के ईरे तीरे घोड़ा दौडावै मोछिया भँवर मननाय।
हाथे सुबरना गरे मोती माला वै दुलहे जेठ भाय ॥३॥

चनना कै डँडिया चमाकत आवै जूमत चारिउ कहाँर।
पीत पितम्बर झलाकत आवै आई अहै दुलरू दमाद ॥४॥

सात सखियो के साथ सीता अटारी पर चढ गई। अटारी इतनी ऊँची थी कि उसके झरोखे से इन्द्र झाँक सकता था। सीता पूछती है—कौन वर है? कौन वर का पिता है? और कौन वर का जेठा भाई है? ॥ १ ॥

सखियाँ कहती हे—मतवाली हथिनी झूमती आती है, और घूम-घूम कर पाँव रखती है। उस हथिनी पर वर का बाप है, जिस के सिर पर सोने का मुकुट शोभायमान है ॥ २ ॥

जो नदी के किनारे-किनारे घोडा दौडा रहा है, जिसकी मोछ भौंरे के समान काली है, और जिसके हाथ मे सोने का कडा और गले मे मोती की माला है, वह वर का जेठा भाई है ॥ ३ ॥

चन्दन की पालकी चमकती हुई आ रही है। उसको उठाये हुए चार कहार झूमते हुये आ रहे हैं। जिसका पीला रेशमी वस्त्र झलक रहा है, वही प्यारे दामाद है ॥ ४ ॥

[१२]

नीले नीले घोड़वा छैल असवरवा कुरुखेते हनइ निसान।
खिरकी उघेरि के अम्मॉ जौ देखै धिया दस आउरि होइँ ॥१॥
होइगा बियाह परा सिर सेंदुर नौ लख दाइज थोर।
भितरॉ कइ भाँड़ बाहर दइ मारी सतरू के धिया जिनि होइ ॥२॥

नीले घोडे पर जो छैल सवार है, वह ऐसा वीर है कि कुरुक्षेत्र (रणभूमि) मे विजय का झडा खडा करता है, या रण भूमि मे शत्रु का झंडा तोड़ डालता है। उसे जब खिड़की खोलकर माँ देखती है, तब उसका जी हुलसता है और वह चाहती है कि दश कन्याये और होती तो ठीक था। ॥ १ ॥

पर जब ब्याह हो गया, माँग मे सिंदूर पड़ गया और नौ लाख का दहेज भी थोड़ा समझा गया, तब माँ ने भीतर का बरतन-भाँडा बाहर पटक दिया और कहा—शत्रु को भी कन्या न हो ॥ २ ॥

इन चार पंक्तियो मे कन्या के विवाह का वर्तमान चित्र बहुत अच्छी तरह खीचा गया है। तरुण और रणबाँकुरा दामाद देखकर कन्या की माँ का हृदय आनंद से उमड़ आता है, यह स्वाभाविक ही है। पर दहेज की कुप्रथा से जो कष्ट कन्या के मां-बाप को उठाना पडता है, और उससे जो विक्षोभ पैदा होता है, उसका बहुत ही तथ्य-वर्णन गीत की चौथी पक्ति मे आ गया है।

गीत से यह भी मालूम होता है कि जिस समय का यह गीत है, उस समय बाल विवाह नही होता था। ७, ८ वर्ष का बालक न छैल ही हो सकता है, न घोड़े की सवारी ही कर सकता है, और न कुरुक्षेत्र मे झडा ही गाड़ सकता है।

[१३]

घोडे चढु दुलहा तू घोडे चढु यहि रन बन मे।
दुलहा बाधि लेहु ढाल तरुवारि त यहि रन बन मे ॥ १ ॥
पहिनौ पियरी पीतामर यहि रन बन मे।
दुलहा बाधि लेहु लटपट पाग त यहि रन बन मे ॥ २ ॥
कैसे के बाँधौ पाग त यहि रन बन मे।
दुलहिनि मरम न जान्यों तोहार त यहि रन बन मे ॥ ३ ॥
जतिया तो हमरी पंडित कै यहि रन बनै मे।
दुलहा मुगुल के डरिया लुकानि त यहि रन बन मे ॥ ४ ॥
मारि डारेन भाई औ बाप त यहि रन बन मे।
दुलहा मुगुल के डरिया लुकानि त यहि रन बन मे ॥ ५ ॥

यतनी बचनिया के सुनतइ यहि रन बन मे।
दुलहा घोडे पीठि लिहेनि बैठाय त यहि रन बन मे॥ ६॥
यक बन गैलै दुसर बन यहि रन बन मे।
दुलहा तिसरे मे लागी पियास त यहि रन बन मे॥ ७॥
अरे अरे जनम सँघाती त यहि रन बन मे।
दुलहा बुँद यक पनिया पियाव त यहि रन बन मे॥ ८॥
ताल औ कुइयाँ सुखानी त यहि रन बन मे।
पनिया रकत के भाव बिकाय त यहि रन बन मे॥ ९॥
उँचवै चढ़ि के निहारेनि यहि रन बन मे।
दुलहिनि झरना बहै जुड पानि त यहि रन बन मे॥१०॥
दुलहिनि झरना बहै जुड पानि त यहि रन बन मे।
दुलहिनि ठाडे है मुगुल पचास त यहि रन बन मे॥११॥
अरे अरे जनम सँघाती त यहि रन बन मे।
दुलहा बुँद एक पनिया पिआउ त यहि रन बन मे।
दुलहा मोरी तोरी छूटै सनेहिया त यहि रन बन मे॥१२॥
यतना बचन सुनि पायेन त यहि रन बन मे।
दुलहा खींचि लिहेनि तरवरिया त यहि रन बन मे॥१३॥
ठाढ़े एक ओर मुगुल पचास त यहि रन बन मे।
दुलहा एक ओर ठाढ़े अकेल त यहि रन बन मे॥१४॥
रामा जूझे है मुगुल पचास त यहि रन बन मे।
राजा जीति के ठाढ़ अकेल त यहि रन बन मे॥१५॥
पतवा के दोनवा लगायनि यहि रन बन मे।
दुलहिनि पनिया पियहु डभकोरि त यहि रन बन मे॥१६॥
पनिया पियै दुलहिन बैठी त यहि रन बन मे।
दुलहा पटुकन करै बयारि त यहि रन बन मे॥१७॥

दुलहा मोर धरम लिहेउ राखि त यहि रन बन मे।
दुलहा हम तोहरे हाथ बिकानि त यहि रन बन मे ॥१८॥
यतनी बचनिया के साथ त यहि रन बन मे।
दुलहिन मलवा दिहिन गर डारि त यहि रन बन मे ॥१९॥

हे दुलहा ! घोडे पर चढ़ लो, घोडे पर चढ़ लो। इस निर्जन और भयानक बन मे ढाल-तलवार बांध लो ॥१॥

पीला पीताम्बर पहन लो और जल्दी-जल्दी पगडी बांध लो ॥२॥

पुरुष ने कहा—मै कैसे पगड़ी बांधू ? मै तो जानता ही नहीं कि तुम कौन हो ? ॥३॥

स्त्री ने कहा—मै तो ब्राह्मण-कन्या हू। मुगलो के डर से इस जगल मे छिपी हू ॥४॥

मुगलो ने मेरे भाई और बाप को मार डाला। मै मुगलो के डर से इस जगल मे लुकी हू ॥५॥

इतना सुनते ही पुरुष ने स्त्री को घोड़े पर बैठा लिया ॥६॥

वे एक बन से दूसरे मे गये। तीसरे बन मे स्त्री को प्यास लगी ॥७॥

स्त्री ने कहा—हे जीवन के संगी ! बडी प्यास लगी है। एक बूँद पानी पिलाओ ॥८॥

पुरुष ने कहा—इस बन मे सभी ताल और कुएं सूख गये हैं। पानी तो लोहू के भाव का हो गया है ॥९॥

पुरुष ने ऊँचे चढ़कर देखा तो बन मे ठंडे पानी का एक झरना बहता दिखाई दिया। उसने कहा—हे दुलहिन ! ठडे पानी का एक झरना बह तो रहा है ॥१०॥

पर वहाँ पचास मुगल खड़े है ॥११॥

स्त्री ने कहा—हे दुलहा ! हे जीवन के संगी ! इस घोर बन मे तुम

मुझे एक बूँद पानी पिलाओ। हे दुलहा ! नहीं तो हमारी तुम्हारी प्रीति अब छूट रही है ॥१२॥

इतना सुनते ही पुरुष ने हाथ मे तलवार खींच ली ॥१३॥

उस बन मे एक ओर तो पचास मुगल खडे है और एक ओर अकेला दुलहा ॥१४॥

पचासो मुगलो को मारकर दुलहा राजा युद्ध जीतकर अकेला खडा है ॥१५॥

पत्ते के दोने मे दुलहे ने दुलहिन को पानी दिया और कहा—दुलहिन ! खूब तृप्त होकर पानी पिओ ॥१६॥

दुलहिन बैठकर पानी पीती है और दुलहा दुपट्टे के छोर से हवा कर रहा है ॥१७॥

दुलहिन ने कहा—हे दुलहा ! तुमने मेरा धर्म रख लिया। मै तुम्हारे हाथ बिक गई हू ॥१८॥

इतना कहकर दुलहिन ने दुलहे के गले मे अपनी माला डाल दी। अर्थात् उसको वरण कर लिया ॥१९॥

यह गीत मुगलो के ज़माने का जान पडता है। मुगलो ने किसी ब्राह्मण की रूपवती कन्या को ज़बरदस्ती छीन लेने की नीयत से उसका घर घेर लिया, और कन्या देना अस्वीकार करने पर कन्या के बाप और भाई को मार डाला था। कन्या भागकर एक बन मे छिप गई थी। मुगल उसे ढूँढ़ते-ढूँढते एक झरने के पास पहुँचे थे। उसी समय कन्या के पास से कोई हिन्दू वीर निकलता है, जो कन्या का कष्ट सुनकर उसे घोडे पर बैठाकर ले चलता है। रास्ते मे कन्या को प्यास लगती है। पानी के लिये युवक झरने के पास पहुंचता है और पचासो मुगलों को मारकर कन्या को पानी पिलाता है। युवक उसकी थकान मिटाने का प्रयत्न भी करता है। युवक ने कन्या का धर्म और प्राण दोनों बचाये।

उसके बाप और भाई की मृत्यु का बदला भी लिया तथा अकेले पचास मुगलो से लडकर और उसे मारकर अपनी शूरता का भी परिचय दिया। इससे हिन्दू-कन्या का हृदय स्वाभाविक कृतज्ञता से उमड आया। उसने वही उस वीर और सहृदय युवक को सब उपकारो के बदले मे अपना हृदय समर्पण कर दिया और उसके गले मे जयमाला डालकर उसे वरण कर लिया।

एक समय वह था, जब हमारे घरो मे ऐसे युवक पैदा होते थे, जो पचास-पचास से अकेले लडकर विजयी होते थे। इस गीत मे उस समय की एक क्षीण-आभा वर्तमान है।

[१४]

ऊँच ऊँच बखरी उठाओ मोरे बाबा ऊँच ऊँच राखो मोहार।
चाँद सुरुज दोनो किरनी बसत है निहुरै न कन्त हमार॥ १॥
अम्मर सेनुरा मँगावो मोरे बाबा पिया से भरावो मोरी माँग।
सूघर बँभना से गँठिया जोरावहु जनम जनम अहिवात॥ २॥
अम्मर डँडिया फनाओ मोरे बाबा बिदवा करावो हमार।
सात परग सँग चलि के हो बाबा अब मैं भइउँ पराइ॥ ३॥

हे बाबा ! ऊँची ऊँची बखरी (घर) बनवाओ और उसमे ऊँचे-ऊँचे मोहार (दरवाज़े) रक्खो। जिससे मेरे स्वामी को निहुरना (झुकना) न पड़े॥१॥

हे बाबा ! अमर करने वाला सिन्दूर मँगाओ और प्रियतम से मेरी माँग भराओ। सुघर ब्राह्मण से मेरी गाँठ जोड़ाओ, जिससे जन्म-जन्मान्तर तक मेरा सुहाग बना रहे॥२॥

हे बाबा ! अमर करने वाली पालकी सजाओ और मुझे विदा करो। सात पग साथ चलकर अब मैं पराई हो गई हूँ॥३॥

सात पग साथ चलकर पराई हो जाने वाली कन्या धर्म के महत्त्व

को समझती है। इसी से कहा है—

सता सप्तपदी मैत्री।

सात कदम साथ चल लेने ही से सज्जनो मे मैत्री हो जाती है।

[१५]

ऊँच ऊँच कोठवाँ उठइहा मोर बाबा हो बिचबिच झँझरी लगाइ।
बियहन अइहे बाबा तिन लोक राजा हो रहिहे झँझरिया
लोभाइ हे ॥१॥
सब कोइ देखेल बाग बगइचा देखेल फूल फुलवारि हो।
रामचन्द्र देखेले बाबा के झँझरी के अइसन झँझरी उरेह हे ॥२॥
दान दहेज सासु कुछ नाही लेबौ हो ना लेबो चढने के घोड हे।
जउन तिवइया यहि झँझरी उरेहले तिन्हकाँ मैं सँग लइ
जाब हो ॥३॥
दान दहेज बाबू सब कुछ देबो हो देबो मैं चढने के घोड़ हे।
बेटी सीता देई झँझरी उरेहली तिन्हहूँ क सँग लइ जाहु हो ॥४॥

हे बाबा! ऊँचे ऊँचे कोठे बनवाना, और बीच-बीच मे खिडकी लगवाना। तीन लोक के मालिक विवाह करने आवेंगे। वे खिड़की देख-कर लुभा जायँगे ॥१॥

बारात के लोग बाग-बगीचा और फूल-फुलवाडी देख रहे है। पर रामचंद्र बाबा की खिडकी देख रहे हैं और मोहित हो रहे है कि ऐसी खिड़की पर चित्र किसने बनाये है? ॥२॥

रामचन्द्र ने कहा—हे सास! मै न दान लूँगा, न दहेज। न चढ़ने के लिये घोडा ही लूँगा। जिसने इस खिड़की पर चित्र बनाये हैं, उसे मै साथ ले जाऊँगा ॥३॥

सास ने कहा—हे बेटा! दान-दहेज भी मै दूँगी और चढ़ने को घोड़ा भी दूँगी। सीता बेटी ने ये चित्र बनाये है, उसे भी दूँगी। उसे

अपने साथ ले जाओ ॥४॥

प्राचीन भारत मे चित्रकला का घर-घर प्रचार था। चित्रकला का जानना कन्या की शिक्षा का एक अग समझा जाता था। कन्यायें ऐसा चित्र बना सकती थीं, जो देखने वालो का चित्त हरण कर लेते थे और वर भी उत्तम चित्र की पहचान ही नही करते थे, बल्कि उस पर मुग्ध होने वाला हृदय भी रखते थे।

[१६]

उत्तर हेरयो दक्खिन ढूँढ्यो ढूँढयों मै कोसवा पचास रे।
बेटी के वर नहिं पायो मालिनि मरि गयो भुखिया पियास ॥ १ ॥
बैठो न बाबूजी चनन चौकिया पियौ न गेडुअवा जुड पानि रे।
कइसन घर रौरा चाही ये बाबू कइसन चाही दमाद ॥ २ ॥
सभवा बैठ हम समधी जे चाहिल जैसे तरैया मे चाँद रे।
मचिया बैठलि हम समधिन चाहिल खोलि खोलि बिरवा
चबाति ॥ ३ ॥
मातहिं पाँच हम देवर चाहिल ननद जे चाही अकेल।
दमदा जे चाहिल सब कर नायक सभा बिच पडित होय रे ॥ ४ ॥

मैने उत्तर ढूढा, दक्खिन ढूढा, पचास कोस तक मै ढूढता फिरा। पर हे मालिन ! अपनी बेटी के उपयुक्त वर मैने नही पाया। भूख-प्यास मे मै मर गया ॥१॥

मालिन ने कहा—हे बाबूजी ? इस चन्दन की चौकी पर बैठिये, ठडा जल पीजिये। आपको कैसा घर और कैसा वर चाहिये ? ॥२॥

बाबूजी ने कहा—हे मालिन ? मै ऐसा समधी चाहता हू जो सभा के बीच इस तरह बैठता हो, जैसे तारो के बीच मे चन्द्रमा। और मचिया पर बैठी हुई ऐसी समधिन चाहता हू, जो खोल-खोलकर पान के बीड़े खाती हो ॥३॥

मैं अधिक नहीं, पाँच, सात देवर ही चाहता हूं और एक ही ननद। दामाद ऐसा चाहता हूँ, जो सब का नायक हो और सभा के बीच में विद्वान् हो ॥४॥

सभा के बीच में विद्वान् कहलाना योग्यता की एक बहुत बड़ी पहचान है।

[१७]

काहे बिन सून अगनवाँ ये बाबा काहे बिन सून लखराउँ।
काहे बिनु सून दुअरवा ये बाबा काहे बिनु पोखरा तोहार ॥ १ ॥
धिया बिनु सून अँगनवा ये बेटी कोइलरि बिनु लखराउँ।
पूत बिनु सून दुअरवा ये बेटी हँस बिनु पोखरा हमार ॥ २ ॥
कैसे के सोहै अँगनवा ये बाबा कैसे सोहै लखराउँ।
कैसे के सोहै दुअरवा ये बाबा कैसे सोहै पोखरा तोहार ॥ ३ ॥
धरम से बेटी उपजिहै ये बेटी सेवा से आम तैयार रे।
तप सेती पुतवा जनमिहै ये बेटी दान से हसा भँऊधार ॥ ४ ॥
का देइ बोधव्यो बेटी ये बाबा का देइ अमवा के गाछ।
का देइ पुतवा समोधव्या ये बाबा का देइ हसा मऊधार ॥ ५ ॥
धन देइ बिटिया समोधबै ये बेटी जल देइ समोधौ लखराउँ रे।
भुइँ देइ पुतवा समोधबै ये बेटी अन देइ हसा भँऊधार ॥ ६ ॥
का देखि मोहै जनवास ये बाबा का देखि रसना तोहार।
का देखि हियरा जुड़ैहै ये बाबा का देखि नैना जुड़ाय ॥ ७ ॥
धिया देखि मोहै जनवसवा ये बेटी अमवा से रसना हमार।
पुतवा से हियरा जुड़ैहै ये बेटी हसा देखि नैना जुड़ाय ॥ ८ ॥

कन्या ने पूछा—हे पिता! किसके बिना आँगन सूना है? और किसके बिना लखरांव (लाख आम के पेड़ो का बाग) सूना है? किसके बिना द्वार सूना है? और किसके बिना तुम्हारा तालाब सूना है? ॥१॥

पिता ने कहा—हे बेटी ! कन्या के बिना आँगन, कोयल बिना लखरांव, पुत्र बिना द्वार और हंस बिना तालाब सूना है ॥२॥

कन्या ने पूछा—आँगन कैसे शोभित हो सकता है ? लखरांव कैसे शोभित हो सकता है ? तुम्हारा द्वार कैसे शोभित हो सकता है ? और तुम्हारा तालाब कैसे शोभित हो सकता है ? ॥३॥

पिता ने कहा—हे बेटी ! धर्म से कन्या पैदा होती है। सेवा से आम पैदा होता है। तप से पुत्र पैदा होता है। और दान से हंस मँझधार में जीते हैं ॥४॥

कन्या ने पूछा—हे पिता ! क्या देकर तुम कन्या को सन्तुष्ट करोगे ? क्या देकर आम के वृक्ष को ? और क्या देकर पुत्र को ? तथा क्या देकर मँझधार में हंस को सन्तुष्ट करोगे ? ॥५॥

पिता ने कहा—धन दे कर कन्या को, जल देकर लखराव को, भूमि देकर पुत्र को और अन्न देकर हंस को सन्तुष्ट करूँगा ॥ ६ ॥

कन्या फिर पूछती है—हे पिता ! जनवासे के लोग क्या देखकर मोहित होंगे ? किस चीज से तुम्हारी जीभ लुभायेगी ? क्या देखकर हृदय शीतल होगा ? और क्या देखकर नेत्र तृप्त होंगे ॥ ७ ॥

पिता ने कहा—कन्या को देखकर जनवास मोहित होगा। आम से जीभ प्रसन्न होगी। पुत्र से हृदय शीतल होगा और हंस को देखकर नेत्र तृप्त होंगे ॥ ८ ॥

पूर्वकाल में परदा नहीं था। कन्या को सब लोग देख सकते थे और उसके रूप और गुण पर मुग्ध हो सकते थे।

[१८]

कहेवहिं के गढ़ थवई जिन्ह महल उठाये।
कहवहिं के पतिसहवा गढ़ देखन आये ॥ १ ॥

बाहर होइ गढ देखलो जैसे चित्र उरेहल।
भीतर होइ गढ़ देखलो जैसे कुन्दन कुँदावल॥ २॥
ताही पैठि सुतले कवन बाबा रानी बेनियाँ डोलावे।
केवरही बोललीं कवन बेटी बाबा नीद भल आवै॥ ३॥
कुछ रे सुतिला कुछ जागिला बेटी नीदो न आवे।
जाहि घरे कन्या कुँवारि बेटी नीद कैसे आवे॥ ४॥
लेहुना कवन बाबा धोतिया हाथे पान क बीडा।
करु ना समधिया मे मिलनी सिर माथ नवाय॥ ५॥
गिरि नवे पर्वत नवे हम नौ ना नइयो।
बेटी! तोहरे कारन हम जग मे माथ नवाये॥ ६॥

वह थवई (राज, स्थपति) कहां का था? जिसने यह महल उठाया है। वह बादशाह कहां के है? जो गढ़ देखने आये हैं॥ १॥

बाहर से गढ देखा, तो ऐसा जान पड़ा, मानो चित्र खीचा हुआ है। भीतर से देखा, तो ऐसा जान पडा, मानो कुन्दन किया हुआ है॥ २॥

उसी गढ़ मे प्रवेश करके राम सो रहे हैं। रानी पखी झांक रही रही है। किवाड़े की आड से बेटी ने कहा—पिताजी! आपको नीद खूब आ रही है॥ ३॥

पिता ने कहा—बेटी! कुछ-कुछ सो रहा हूं, कुछ-कुछ जाग रहा हूँ। जिसके घर मे क्वारी कन्या हो, भला, उसे नींद कैसे आ सकती है?॥ ४॥

कन्या ने कहा—हे पिता! हाथ मे धोती और पान का बीड़ा लेकर और सिर नवाकर समधी से भेंट करो न?॥ ५॥

पिता ने कहा—गिरि नै (झुक)गया पहाड नै गया, अब तक मैं नहीं (झुका) था। पर हे बेटी! तुम्हारे कारण मुझे सिर (झुकाना) पडा है॥६॥

बेटी के विवाह के लिये पिता को कितनी चिन्ता होती है, 'जाहि घरे कन्या कुँवारि बेटी नींद कैसे आवे' मे वह बडी ही मार्मिकता से कहा गया है। इस गीत को कन्या के पिता बडे मनस्वी जान पड़ते हैं। उन्होने कभी किसी के सामने सिर नहीं झुकाया था, पर कन्या के पिता को सिर झुकाना ही पडता है।

[१६]

बाबा बाबा गोहरावौं बाबा नाहीं जागे।
देत सुनर एक सेंदुर भइउँ पराई॥ १॥
भैया भैया गोहरावौं भैया नाहीं बोलै।
देत सुघर एक सेंदुर भइउँ पराई॥ २॥
बन माँ फूली बेइलिया अतिहि रूप आगरि।
मलियै हाथ पसारा तौ होबौ हमारि॥ ३॥
जनि छुवो ये माली जनि छुवो अबहीं कुंवारि।
आधी राति फुलबै बेइलिया तौ होब तुम्हारि॥ ४॥
जनि छुवो ये दुलहा जनि छुवो अबहीं कुंवारि।
जब मोर बाबा सकलपै तौ होब तुम्हारि॥ ५॥

बाबा, बाबा कहकर पुकार रही हूँ। बाबा जागते ही नहीं। कोई एक सुन्दर पुरुष सेंदुर दे रहा है। मै पराई हुई जा रही हूँ॥ १॥

भैया, भैया कहकर पुकार रही हूँ। भैया बोलते ही नही। कोई एक चतुर पुरुष सेंदुर दे रहा है। मै पराई हुई जा रही हूँ॥ २॥

बन मे अत्यंत रूपवती लता फूली है। माली ने उस पर हाथ पसारा और कहा—तुम मेरी हो॥ ३॥

हे माली! अभी मत छुओ, अभी मत छुओ। मै अभी बालिका हूँ, कुमारी हूँ। आधीरात को जब लता फूलेगी, तब वह तुम्हारी होऊगी॥ ४॥

हे दूल्हा ! मत छुओ, मत छुओ। अभी मै बालिका हूँ, कुमारी हूँ। जब मेरे बाबा समर्पण करेंगे, तब मै तुम्हारी होऊँगी ॥ ५ ॥

कैसा भाव-पूर्ण यह गीत है। कन्या ने वर को 'सुन्दर और सुघर' दो विशेषणो से व्यक्त किया है। हमने ऊपर सुघर शब्द का अर्थ चतुर दे दिया है। पर सुघर शब्द अपना अलग अर्थ रखता है, जो बहुत व्यापक है। चतुर शब्द उसका पर्यायवाची नही हो सकता। और उस का पर्यायवाची दूसरा शब्द है भी नही। वर के रूप और गुण का बखान कर के फिर कन्या अपनी तुलना लता से और वर की माली से करती है। स्त्री लता की तरह फूले-फले और पुरुष माली की तरह उसे सींचे, सँभाले, सँवारे और उसका सुख भोगे। कैसी अर्थयुक्त तुलना है।

अत मे कन्या कहती है कि जब तक पिता नही समर्पण करता, तब तक वह दूसरे की नही हो सकती। इस गीत के समय मे कन्या स्वतत्र नहीं रह गई कि वह अपनी इच्छा से योग्य वर स विवाह कर सके। गीत मे आदि से लेकर अत तक करुण-रस लहरा रहा है।

[२०]

की हो दुलहे रामा अमवा लुभाने की गये बटिया भुलाइ।
कब से रसोइया लिहे हम बैठी जोवउँ मैं एकटक राह ॥१॥
दुलहिन रानी न अमवा लुभाने ना गये बटिया भुलाइ।
बाबा के बगिया कोइलि एक बोलै कोइलि सबद सुनौ ठाढ ॥२॥
चिठिया एक लिखि पठइन दुलहिन दिहौ कोइलरि देइ के हाथ।
तनि एक बोलिया नेवरतिउ कोइलरि परभु मोर जेवने क ठाढ ॥३॥
चिठिया एक लिख पठइन कोइलरि दिहौ दुलहिन देइ के हाथ।
ऐसइ बोलिया तुँ बोलि क दुलहिन दुलहे न लेतिउ बिलमाय ॥४॥

हे प्रियतम ! तुम क्या आम पर लुभा गये थे ? या रास्ता ही भूल

गये ? मैं कब से भोजन बनाकर बैठी हूँ और एकटक तुम्हारी राह देख रही हूँ ॥१॥

पति ने कहा—हे मेरी प्यारी रानी ! न मैं आम पर लुभाया हूँ, और न रास्ता ही भूल गया हूँ । मेरे बाबा के बाग में एक कोयल बोल रही है । मै उसी की बोली सुन रहा हूँ ॥२॥

स्त्री ने कोयल को एक पत्र लिखकर भेजा—हे कोयल रानी ! तुम जरा देर के लिये अपनी बोली बन्द करो, मेरे प्राणनाथ भोजन के लिये खडे है ॥३॥

कोयल ने उत्तर लिखकर दुलहिन के पास भेजा—हे दुलहिन रानी ! ऐसी ही बोली बोलकर तुम दुलहे को मुग्ध क्यो नहीं कर लेती ? ॥४॥

आशा है, कोयल के इस उपदेश से कटुवचन बोलनेवाली दुलहिनें लाभ उठायेंगी ।

[२१]

घर मे से निसरेली बेटी हो कवनि देई भइली देवढिया धइले
ठाढ रे ।
सुरुज के उगले किरिनिआ छिटिकले हो गोरी बदन
कुम्हिलाइ रे ॥१॥
कहतु त मोरी बेटी छत्र छवउतेउँ नाही तनवतेवँ ओहार रे ।
कहतु त मोरी बेटी सुरुज अलोपतेउँ हो गोरी बदन रही
जाइ रे ॥२॥
काहे के मोरे बाबा छत्र छवइबा हो काहे के तनइबा ओहार रे ।
काहे के मोरे बाबा सुरुज अलोपबा हो एक दिन की है बात ।
आजु के दिन बाबा तोहरे मड़उआ हो बिहने सुनर बर साथ रे ॥३॥
खोरवन खोरवन बेटी दुधवा पिअवलीं हो दहिआ खिअवलीं
साढ़ीवाल रे ।

दुधवा क नीरव नाही दीहेलु ये बेटी चलल् सुनर बर
साथ रे ॥४॥
काहे क मोरे बाबा दुधवा पिअवला हो दहिआ खिअवला
साढीवाल रे।
जानत रहला बेटी पर घर जइहे हो नाहक कइला मोर दुलार रे ॥५॥

घर से अमुक देवी निकली और ड्योढी पकडकर खडी हुई। सूर्य उदय हो चुका था। किरने छिटक आई थी। कोमल कन्या का मुँह कुम्हला गया था ॥१॥

पिता ने पूछा—बेटी! कहो तो छत्र छवा दूँ, या परदा डलवा दूँ, या कहो तो किसी तरह सूर्य की धूप का रोक दूँ, जिससे तुम्हारा कोमल मुँह न कुम्हलाय ॥२॥

बेटी ने कहा—हे बाबा! क्यो तुम छत्र छवावोगे? क्यो परदा डालोगे? क्यो धूप को रोकोगे? एक दिन की बात और है। आज तुम्हारे माडौ मे हू। कल अपने सुन्दर वर के साथ चली जाऊँगी ॥३॥

बाबा ने कहा—हे बेटी! मैने कटोरे भर-भर कर तुमको दूध पिलाया और साढीदार दही खिलाया। दूध मे कभी पानी भी तो नही मिलाया। फिर भी हे बेटी! तुम सुन्दर वर के साथ चली जाओगी? ॥४॥

बेटी ने कहा—हे बाबा! क्यो तुमने दूध पिलाया? क्यो साढी वाला दही खिलाया? तुम तो जानते ही थे कि बेटी पराये घर जायगी। फिर मेरा दुलार क्यो किया? ॥५॥

[२२]

मचियहि बैठी पुरखिनि रानी पूछै बिटिया पतोह,
तौ इहै नवा कोहबर।
कहँवाँ लिखौ सास् पुरइनि रे कहँवाँ लिखौ बँसवार,
तौ इहै नवा कोहबर ॥१

यक ओरी लिखौ बहुअरि पुरइनि रे, यक ओरी खिलौ बँसवार,
तौ इहै०।
कहँवाँ लिखौ सासू हसा हसिनि रे, कहँवाँ लिखौ बन मोर,
तौ इहै०॥
कहँवाँ लिखौ सासू सुग्गा मैना रे दुरत सुग्गा मैना लिखु,
तौ इहै०।
दनवाँ चुनत गवरैया लिखो रे गैया लिखो बछवा लगाय,
तौ इहै०।
कलसा लिहे चेरिया लौंडी लिखो रे बाम्हन पोथी लिहे हाथ,
तौ इहै०॥
गैया दुहत अहिरा छौंडा लिखो रे दहिया बेचत अहिरिनि धेरि,
तौ इहै०।
आरी आरी बेली के फूल लिखो रे और लिखो पनवारि,
तौ इहै०
झुपसन अमली फरत लिखो रे अमवा घवधवन लाग,
तौ इहै०।

पुरखिन रानी (घर की मालकिन) मचिये पर बैठी है। बेटी और पतोहू पूछ रही हैं—यही नया कोहबर है। हे सासजी ! कहाँ कमल के पत्ते का चित्र बनाऊँ ? कहाँ बँसवारी (बाँस की बाड़ी) बनाऊँ ? ॥१॥

सास ने कहा—हे बहू ! एक ओर कमल के पत्ते बनाओ। एक ओर बँसवारी लिखो ॥२॥

बहू ने पूछा—हे सास ! कहाँ हस-हसिनी लिखूँ ? कहाँ बन के मोर लिखूँ ? कहाँ तोता मैना लिखूँ ? कहाँ उड़ती हुई चेमकरी लिखूँ ?

सास ने कहा—दुरते हुये (केलि करते हुये) तोता और मैना, दाने चुगती हुई गौरैया, बछड़े को दूध पिलाती हुई गाय, कलश लिये

हुये दासी, पुस्तक लिये हुये ब्राह्मण, गाय दुहता हुआ अहीर का लडका, दही बेचती हुई अहीरनी की कन्या का चित्र बनाओ। आसपास फूली हुई लता का चित्र बनाओ और पान की लता का चित्र बनाओ। गुच्छे की गुच्छे फली हुई इमली का चित्र बनाओ और पल्लवो मे लगे हुये आम का चित्र बनाओ। यही नया कोहबर है।

कन्याओं को चित्रकारी की शिक्षा कैसे दी जाती थी, इसका कुछ आभास इस गीत मे है।

[२३]

मैया दिया है गगरी घैलना बाबा ने आँख तरेरि।
वहि रे ताल बेटी माती हथिनियाँ जनि जाव ताल नहाइ॥ १॥
बाप कहा नहिं माना है बेटी गई है ताल नहाइ।
अपनी हथिनियाँ सँभारो बनजारे चीर पहिरि घर जाउँ॥ २॥
किनके हौ तुम नाती रे पुतवा कौनि बहिन के भाइ।
कौन बनिजिया चले बर सुन्दर कौन के ताल नहाव॥ ३॥
अपने बाप के नाती रे पुतवा अपनी बहिन के भाइ।
यही हथिनियाँ मै तुम्है चढ़ाओं लै जाओ आपने देस॥ ४॥
धोबी धोवै अपडे रे कपडे अहिर चरावै सुरा गाइ।
और बोलैहौ मै बाबा की नगरिया हमको लेइँ छुटाइ॥ ५॥
लूटौ मै धोबिया के अपड़े रे कपड़े अहिर की लेबौ सुरा गाइ।
मारौ मैं बाबा की नगरिया वाले तुमको ब्याहि लै जाउँ॥ ६॥
अरे अरे अहिर के बेटवा रे भैया माता से कहेउ सँदेस।
राम रसोइँ मे गुड़िया रे भूली धरै पेटरिया के बीच॥ ७॥

माँ ने पानी भरकर लाने के लिये गगरी (मिट्टी का घडा) दिया। बाबा ने आँख तरेरकर कहा—हे बेटी ! उस तालाब पर मतवाली हथिनी रहती है, वहाँ नहाने न जाना॥१॥

बेटी ने बाप का कहा नही माना और वह तालाब मे नहाने चली गई। तालाब पर किसी बनजारे की हथिनी मिली। कन्या ने कहा—बनजारे! अपनी हथिनी को रोको तो मै चीर पहनकर घर जाऊँ ॥२॥

कन्या ने बनजारे से पूछा—हे सुन्दर वर! तुम किसके पौत्र और पुत्र हो? किस बहन के भाई हो? किस चीज़ का व्यापार करने निकले हो? और किसके तालाब पर नहा रहे हो? ॥३॥

वर ने कहा—मै अपने पिता-पितामह का पुत्र और पौत्र हूँ, और अपनी बहन का भाई हूँ। इसी हथिनी पर चढ़ाकर मैं तुमको अपने देश ले जाऊँगा ॥४॥

कन्या ने कहा—यहाँ धोबी कपड़े धो रहे है, अहीर सुरा गाय चरा रहे हैं, इनके सिवा मै अपने बाबा के नगर से और भी बहुत से लोगो को बुला लूँगी, वे सब मुझे छुड़ा लेंगे ॥५॥

वर ने कहा—मै धोबी के कपड़े-सपड़े लूट लूँगा। अहीर की सुरा गाय भी छीन लूँगा और तुम्हारे बाबा के नगरवालो को पीटूँगा भी, तथा तुमको ब्याह करके ले जाऊँगा ॥६॥

वर कन्या को ले चला। कन्या कहने लगी—हे अहीर के लड़के! हे मेरे भाई! मेरी माँ से यह सदेश कह देना कि मै रसोई-घर मे गुड़िया भूल आई हूँ, उसे पिटारी मे सँभालकर रख दें ॥७॥

अन्तिम पक्तियो मे कन्या के भोलेपन का ख़ासा निदर्शन है। वह बेचारी नही जानती कि गुड़िया खेलते-खेलते अब वह खुद गुड़िया बीन गई है और वह अब फिर गुड़िया खेलने के लिये इस घर मे नह आयेगी।

[२४]

पुरुष पछौहाँ मोरे बाबा कै बखरिया
पड़गै इमलिया कै छाँह।

तेही तर मोरे बाबा सोनवाँ सँकलपै,
गढ़ै लागै सूघर सोनार ॥ १ ॥
गढ़ौ सोनरा अंगन गढ़ सोनरा कंगन
टीका गढ़ौ भरि माथ रे ।
इतना पहिरि बेटी चौक जो बैठीं कै मन दलगीर ॥ २ ॥
की तेरो बेटी रे दान दहेज थोर,
की रे सूघर वर छोट ।
की तेरो बेटी सोना खराब भये,
काहे तेरो मन दलगीर ॥ ३ ॥
नाहीं मोर बाबा रे दान दहेज थोर,
नाहीं सूघर वर छोट ।
सुनत हौ मोर बाबा सास दारूनिया,
एही से मन दलगीर ॥ ४ ॥
चार दिना बेटी राजा कै रजई चार दिना फौज दारि ।
चार दिना बेटी सास है दारुन आखिर राज तुम्हार ॥ ५ ॥
(रायबरेली)

मेरे बाबा की बखरी का पिछवाड़ा पूरब ओर है, उस पर इमली की छाया पड़ गई है । उसी के नीचे मेरे बाबा सोना दे रहे हैं । चतुर सुनार गहने गढ़ने लगे ॥१॥

हे सुनार ! कगन गढ़ो, और कन्या के पूरे माथ पर बैठनेवाला टीका गढ़ो । इतना पहनकर बेटी चौक पर बैठी । लेकिन बेटी का मन उदास है ॥२॥

हे बेटी ! दान-दहेज थोड़ा है ? या सुन्दर वर छोटा है ? या गहने का सोना खोटा है ? तुम्हारा मन उदास क्यो है ? ॥३॥

हे बाबा ! न दान-दहेज कम है, न सुन्दर वर ही छोटा है ।

सुनती हूँ कि सास बड़ी कर्कशा है। इसी से मन उदास है ॥४॥

हे बेटी! राजा का राज चार दिन का है, चार ही दिन कर्कशा सास है, फिर तो तुम्हारा ही राज है ॥५॥

अभिप्राय यह कि कुटुम्ब के अंदर का सुख-दुःख धैर्य के साथ सहते रहकर गृह-स्वामिनी बनने की तैयारी में रहो।

[२५]

अपने पिया की पियारी, अपने पिया की प्यारी।
अपने पिया पे सिंगार करी ॥
अति प्रेम के लहँगा, अति प्रेम के लहँगा।
नेह की चुनरी ओढ़े चली ॥
अति लाज की अँगिया, अति लाज की अँगिया।
मोहन मंत्र कसे रे कसे ॥
अति भाग की बेदी, अति भाग की बेदी।
मोहन टीका लिलार दिहे ॥
सौभाग के बीरा, सौभाग के बीरा।
मोहन कज्जल आख दिहे ॥
करपूर चंदन से, करपूर चँदन से।
बास सुगंध बढ़ाय चली ॥
ननदोई कुसल से, ननदोई कुसल से।
बहनोई क सुजस बढ़ै रे बढ़ै ॥
बाढ़ै देवरा तुम्हारा, बाढ़ै देवरा तुम्हारा।
भाइन बृद्धि बढ़ै रे बढ़ै ॥
समधी अति ही रंगीला, समधी छैल छबीला।
समधिन रूप उजागरी ॥

तिया नइया बनी है , तिया नइया बनी है ।
ए पति खेवनहार अरी ॥

अर्थ स्पष्ट है ।

विवाह के अवसर पर, वर को जिमाते समय, यह गारी गाई जाती है ।

[२६]

विमल किरतिया तोहरी कृसन जी
फिराथी उघारी उघारी कि वाह वा ॥ १ ॥
चन्दिनि होइ गगन मे पहुँची
सुरपति कीन बडाई कि वाह वा ॥ २ ॥
भक्ति होइ सतन मे पहुँची
सन्तो ने कीन बड़ाई कि वाह वा ॥ ३ ॥
बुद्धि होइ पँडितन मे पहुँची
पँडितों ने कीन बड़ाई कि वाह वा ॥ ४ ॥
कविता होइ कविन मे पहुँची
कवियों ने कीन बड़ाई कि वाह वा ॥ ५ ॥
दया होइ परजन मे पहुँची
परजों ने कीन बड़ाई कि वाह वा ॥ ६ ॥
यकमति होइ भाइन मे पहुँची
भाइयों ने कीन बड़ाई कि वाह वा ॥ ७ ॥
क्षमा होइ ब्राह्मण मे पहुँची
ब्राह्मणों ने कीन बड़ाई कि वाह वा ॥ ८ ॥
सत्य सुगन्ध समीर लै पहुँची
सब जग होइ बड़ाई कि वाह वा ॥ ९ ॥

हे कृष्ण ! तुम्हारी विमल कीर्त्ति खुली-खुली घूम रही है ॥१॥

चाँदनी होकर वह आकाश मे पहुँची,तो इन्द्र ने उसकी बडाई की ॥२॥
भक्ति होकर भक्तो मे पहुंची, तो सतो ने बडी बडाई की ॥३॥
बुद्धि होकर पंडितो मे पहुंची, तो पडितो ने बडी बडाई की ॥४॥
कविता होकर कवियो मे पहुँची, तो कवियो ने बड़ी बड़ाई की ॥५॥
दया होकर प्रजा मे पहुंची, तो प्रजाओ ने बडी बडाई की ॥६॥
एक मति होकर भाइयो मे पहुँची, तो भाइयो ने बडी बडाई की ॥७॥
क्षमा होकर ब्राह्मण मे पहुंची, तो ब्राह्मणो ने बडी बड़ाई की ॥८॥
सत्य की सुगंध होकर हवा मे पहुंची,तो सारे संसार ने बड़ाई की ॥९॥

यह गारी विवाह मे, वर को भोजन कराने के अवसर पर, गाने के लिये दिअरा राज (सुलतानपुर) की राजमाता रानी रघुवशकुमारी जी ने बनाई है। उधर इसका प्रचार भी है। इस सग्रह मे, जिसमे प्राय. सब प्राचीन गीत ही है, यह दिखाने के लिये कि गीत-रचना मे स्त्रियो का प्रयत्न बराबर जारी है, और वे समय के अनुकूल गीत रचा करती हैं, यह गीत दे दिया गया है।

[२७]

खाइ लेहू खाइ रे लेहू दहिया से रे भात ।
तोहरी ऊ बिदवा ऐ बेटी बडे भिनु रे सार ॥ १ ॥
बिरना कलेउवा ऐ अम्मा हँसी खुशी रे द ।
हमरा कलेउवा ऐ अम्मा दिहेउ रीसीयाइ ॥ २ ॥
हम अउ बिरना ऐ अम्मा जन्मे एक रे सग ।
सँग सँग खेलेऊँ रे अम्मा खायँउ एक रे संग ॥ ३ ॥
भइआ के लिखला ऐ अम्मा बाबा कइ रे राज ।
हमरा लिखला ऐ अम्मा अति बड़ी दूरि ॥ ४ ॥
अँगना घूमि आ रे घूमि बाबा जे रोवैं ।
कतहू न देखउँ ऐ बेटी नेपुरवा झनकार ॥ ५ ॥

कन्या का विवाह हो चुका है। दूसरे दिन वह बिदा होनेवाली है।

मां कहती है—हे बेटी! दही से भात खा लो। कल बड़े सवेरे तुम्हारी बिदा है ॥१॥

बेटी कहती है—माँ! भाई को तो तुम बड़ी हँसी-खुशी से कलेवा देती थी, पर मेरा कलेवा तुम नाराज़ी से दिया करती थी ॥२॥

भाई और मै, दोनो एक साथ जन्मे थे। साथ-साथ खेले और साथ-साथ खाये थे ॥३॥

भाई को तो पिता का राज लिखा है, और मुझे, हे माँ! बड़ी दूर जाना है ॥४॥

कन्या के बिदा होने पर पिता आंगन मे घूम-घूमकर रो रहा है—हाय! बेटी के पाज़ेब की आवाज़ कही से सुनाई नही पडती ॥५॥

बेटी की बिदा का दृश्य बहुत ही करुण-रस-पूर्ण होता है। इस गीत मे माँ को बेटी का प्रेमपूर्ण उलहना कि "तुम भाई को और मुझे कलेवा देने में पक्षपात करती थी," बडा ही हृदय-वेधक है। बेटी के बड़ी दूर जाने की बात भी हृदय को हिला देनेवाली है। प्यारी बेटी के चले जाने पर बाबा का आँनन मे पागल की तरह घूमना और विलाप करना स्वाभाविक ही है।

[२८]

अरे अरे बेटी पियारी रानी! तोरी बोल भली।
तोरी बचन भली॥
ऐसन बपैया घर छोड़ि के बेटी! कहवाँ चली,
बेटी! कहँवाँ चली॥ १॥
जैसे बना की कोइलिया, उड़ि बागाँ गई, फुलवरियाँ गई।
तैसे बाबा घरा छोड़ि के, अब मैं ससुरे चली,
ससुरिया चली॥ २॥

घोड़वा चढा भैया आगे खड़े हाथे तीर कमॉ, हाथे तीर कमॉ।
रोकहिं बहिन कै डगरिया बहिन मोरी कहवॉ चली,
बहिनी कहवॉ चली ॥ ३ ॥
जाने दे भैया जाने दे बाबा लगन धरी, अम्मा साज करी।
ऐहौ मैं काजे परोजन बिरन तोरे बेटा भये,
तोरे बेटा भये ॥ ४ ॥

हे मेरी प्यारी बेटी ! तेरी बात बडी मीठी है। तू ऐसे पिता का घर छोडकर कहो चली ? ॥ १ ॥

बेटी ने कहा—जैसे बन की कोयल, कभी उडकर बाग मे गई, कभी फुलवारी मे। वैसे ही मैं अपने पिता का घर छोडकर ससुराल चली ॥२॥

घोडे पर चढा, हाथ मे तीर धनुष लिये भाई आगे खडा है। उसने रास्ता रोककर कहा—हे मेरी बहन ! तू कहॉ जा रही है ? ॥३॥

बहन ने कहा—हे भैया ! जाने दो। पिता ने विवाह ठीक किया और मां ने तैयारी कर दी। मै अब जा रही हूँ। कभी कोई काम-काज पडेगा या तुम्हारे बेटा होगा, तब आऊँगी ॥४॥

हिन्दुओ मे बेटी की विदा का अवसर बड़ा ही करुणा-जनक होता है। यह गीत उसी अवसर का है। यह गीत जब स्त्रियाँ करुण-स्वर मे गाती है, तब सुनने वालो का धैर्य थामे नही थमता।

गीतो मे जहां कहीं छोटे भाई का वर्णन आया है, वहॉ वह तीर धनुष या तलवार लिये हुये दिखाया गया है। कभी इस देश मे छोटे बच्चे तीर, धनुष और तलवार ही खेला करते थे।

[२६]

मोरे मन बसि गये चतुरगुन हृदय नारायन।
सखिया सब बिसरै तो बिसरै मोर राम नाहिं बिसरै ॥ १ ॥

सब सखिया मिल पूछली अपनी सीतल देई से ।
सीता कइसन तोहार राम बाटेन तोहै नाहिं बिसरै ॥ २ ॥
रेखिआ भिनत अति सुन्दर चलत धरती दलकै
बिजुली चमाकै ।
सखिया हँसत देव गराजै राम नहिं बिसरै ॥ ३ ॥
सब सखिया मिल पूछन लागी अपनी सीतल देइ से ।
मोरी सीता चलतिउ अजोध्या मै राम देखि आइत ॥ ४ ॥
छोटै मोट पेड़वा छिउलिया क मोतियन गहदल ।
तेहिं तर राम आसन डाले ओढले पीताम्बर ॥ ५ ॥
सब सखिया मिलि गइलिन चरन धोई पिअलिन ।
सीता कौन तपेस्या तुँ कइलिउ राम वर पउलिउ ॥ ६ ॥
भूखल रहलिउँ एकादसिया दुवादसिया क पारन ।
विधि से रहिउँ अइतवार राम वर पायो ॥ ७ ॥
तीनि नहायो कतिकवा तेरह बैसखवा ।
माघै मास नहायो अगिन नहिं ताप्यो,
करेउँ तिलौवा क दान, राम वर पायो ॥ ८ ॥

सीता कहती है —मेरे मन मे गुणवान् राम बस गये हैं। हे सखियो ! सब भूलें तो भूलें, राम नहीं भूलते ॥ १ ॥

सब सखियाँ अपनी सीता से पूछती है—हे सीता ! तुम्हारे राम कैसे हैं ? जो तुम्हें नहीं भूलते ॥ २ ॥

सीता कहती है—राम अभी युवक हैं। रेख भिन रही है। बहुत सुन्दर हैं। ऐसे वीर है कि उनके चलने से धरती हिलती है, बिजली चमकती है। हे सखियो ! जब वे गंभीर हंसी हंसते है, तब बादल गरज उठता है। वह राम मुझे नहीं भूलते ॥ ३ ॥

सब सखियाँ अपनी सीता से पूछने लगीं—हे सीता ! अयोध्या चलो

तो एक बार राम को देख आवे ॥४॥

छिउल का छोटा सा पेड है, जो मोती ऐसे फूलों से खूब घना हो रहा है। उसी के नीचे पीताम्बर ओढ़े राम आसन पर बैठे है ॥५॥

सब सखियां मिलकर गईं, चरण धोकर पिया और सीता से पूछा—हे सीता! कौन सी तपस्या से तुमने राम ऐसा वर पाया? ॥६॥

सीता ने कहा—एकादशी भूखी रहकर द्वादशी को पारण किया। विधिपूर्वक रविवार का व्रत किया। तब मैंने राम ऐसा वर पाया ॥७॥

तीन कार्तिक और तेरह बैसाख नहाया। माघ महीने भर स्नान किया, अग्नि नही तापा और तिल से बने मिष्टान्न का दान किया। तब राम ऐसा वर पाया ॥८॥

व्रत रहने और किसी ख़ास महीने मे स्नान से अच्छा वर मिल सकता है, इस बात पर इस समय के शिक्षित लोग विश्वास करें या न करें, पर यह तो निश्चितरूप से कहा जा सकता है कि गीत बनाने वाले के मस्तिष्क मे राम और सीता का विवाह जिस अवस्था मे हुआ, उस अवस्था मे राम के रेख भिन रही थी अर्थात मूछो के स्थान पर नन्हे-नन्हे बाल निकल रहे थे। सीता ने सखियो से राम के बलवान् शरीर और प्रभाव का जो वर्णन किया है, वह भी कम महत्त्व का नही है। कोई स्त्री जब किसी दूसरी स्त्री से उसके पति की प्रशसा करती है, तब वह हर्ष से बहुत ही गद्‌गद हो जाती है। यही दशा सीता की भी हुई होगी।

[३०]

सासु गोसाई बडी ठकुराइन लागौ मै चेरिया तुम्हारि रे।
जौनी बनिज सासु तोरे पुत गे सो बाटा देउ बताइ ॥१॥
हाथ कै लेउ बहुआ तेलवा फुलेलवा अउर गंगाजल नीर रे।
पूँछत पूँछत तुम जायउ बहुरिया जहाँ बसे कंत तुम्हार रे ॥२॥

घोड़वा तो बाँधे वहि घोडसरिया हथिनी लौग की डार रे ।
अपना तो सूतै मलिनिया के कोरवा मालिन बेनिया डोलाइ रे ॥३॥
कहउ तो स्वामी मोरे लाउँ तेलवा फुलेलवा कहउ तो दाबउँ
पाँउ रे ।
कहउ तो एक छिन बेनियाँ डोलावउँ कहउ लवटि घर जाउँ ॥४॥
काहे का लइहो धना तेलवा फुलेलवा काहे का दबिहउ पाउँ रे ।
काहे का छिनु यक बेनिया डोलइहो तुम रे उलटि घर जाउ ॥५॥
उँचवे उँचवे जायउ री रनिया खलवै पैग जनि दीन्हेउ रे ।
पराये पुरुष जनि चितयउ री रनियाँ आग्विर होब तुम्हार ॥६॥
उँचवे उँचवे जावे रे स्वामी खलवे पैगु नहि दाब रे ।
परारि पुरुप स्वामी भय्या रे भतिजवा कउने जुग होइहो
हमार ।'७॥

बहू कहती है—हे सास ! हे स्वामिनी ! मै तुम्हारी दासी लगती हूँ । जिस व्यापार के लिये तुम्हारे पुत्र जिस मार्ग से गये है, वह मुझे बता दो ॥ १ ॥

सास कहती है—हे बहू ! हाथ मे तेल फुलेल और गगा-जल ले लो । पूछते-पूछते तुम वहाँ चली जाना, जहाँ तुम्हारा स्वामी बसता है ॥ २ ॥

बह ढूँढ़ते-ढूँढ़ते पति के पास पहुचती है । क्या देखती है कि घोड़ा तो घोड़सार मे बँधा है और हथिनी लौंग की डार से बंधी है । पति मालिन की गोद मे सो रहा है । मालिन पंखा झल रही है ॥ ३ ॥

स्त्री कहती है—हे स्वामी ! कहो तो तेल फुलेल लगा दूँ । कहो, पैर दाब दूँ । कहो तो थोड़ी देर पंखी हाँक दूँ या कहो तो घर लौट जाऊँ ॥ ४ ॥

पति कहता है—हे स्त्री ! क्यो तेल-फुलेल लगाओगी ? क्यो पाँव

दाबोगो ? और क्यो पखा होकोगी ? तुम घर लौट जाओ ॥ ५ ॥

हे मेरी रानी ! ऊँचे ऊँचे जाना, नीचे पैर न देना। पराये पुरुष की ओर दृष्टि न डालना। अत मे मै तुम्हारा ही होऊँगा ॥ ६ ॥

स्त्री कहती है—हे स्वामी ! मै ऊँचे ही ऊँचे जाऊंगी। नीचे पैर न रक्खूँगी। पराये पुरुष को भाई-भतीजे के समान देखती ही हूँ। पर तुम किस युग मे मेरे होगे ? ॥ ७ ॥

इस गीत मे स्त्री के हृदय की महिमा चित्रित की गई है। पुरुष व्यापार करने परदेश गया। वहाँ वह एक मालिन के प्रेम मे फँस गया, अपनी स्त्री को भूल गया। स्त्री बेचारी उसकी खोज मे घर से निकली। खोजते-खोजते वह उस मालिन के घर पहुँची, जिसने उसके प्राणेश्वर को बिलमा रक्खा था। पतिव्रता ने पति के अपराध की ओर ध्यान ही न दिया, बल्कि सेवा करनी चाही। पति ने उसे विदा करते समय जो उपदेश दिया, वह प्रत्येक सती साध्वी का कर्त्तव्य ही है। पर स्त्री ने जो क्षमा दिखलाई है, वह अद्‌भुत है। वह स्त्री के उच्च मनोबल का द्योतक है। कोई पुरुष अपनी स्त्री को पर पुरुष के साथ सम्बन्ध रक्खे हुये देख-कर क्षमा नही कर सकता। यद्यपि ऐसी दशा मे क्षमा करना हम उचित नही समझते। पर पुरुष को भी एक स्त्रीव्रत होना चाहिये।

[३१]

पनवा कतरि कतरि भाजी बनावउ लौंगा दिहौ धौंगार।
अच्छे अच्छे जेवना बनावो मोरी कामिनि हमहूँ जावै
गंगा नहाय ॥ १ ॥
केके तू सौंपे अनधन सोनवा केके तू नौरँग बाग।
केके तू सौंपे हमे अस धनिया तूँ चले गगा नहाय ॥ २ ॥
बाबा के सौंपेउँ अनधन सोनवा भइया के नौरँग बाग।
माया के सौंपेउ तोहै अस धनिया हम चले गगा नहाय ॥ ३ ॥

घरही मे कुँइयाँ खोदावो मोरे सइयाँ घर ही मे
गगा नहाउ।
माता पिता कै धोतिया पखारउ उनही है गगा तोहारि॥ ४॥

हे मेरी प्यारी स्त्री! पान कतर-कतर कर उसकी तरकारी बनाओ और उसको लौंग से बघार दो। आज अच्छा-अच्छा भोजन बनाओ। हे कामिनी! मै गगा नहाने जाऊँगा॥ १॥

हे मेरे प्राणेश्वर! अन्न, धन और सोना तुमने किसको सौपा? नौरग बाग किसे सौपा है? और मेरी जैसी अपनी प्यारी स्त्री किसको सौपी है? जो तुम गंगा नहाने चले हो॥ २॥

पति ने कहा—पिता को अन्न, धन और सोना सौप दिया है, भाई को नौरगबाग, और तुमको माँ के सुपुर्द करके मै गंगा नाहने जा रहा हूँ॥ ३॥

स्त्री ने कहा—हे प्रियतम! घर ही मे कुआँ खुदवा लो और घर ही मे गङ्गा-स्नान करो। माता-पिता की धोती धोओ, वे ही तुम्हारी गगा है॥ ४॥

बहू ने सच कहा है। वास्तव मे माता-पिता की सेवा से बढकर पुत्र के लिये कोई तीर्थ नही। अधिक हर्ष की बात तो यह है कि स्त्री अपने पति को ऐसी शिक्षा दे रही है।

[३२]

तुम पिया की पियारी रूठे पिया को मनावै चली।
तहँ ज्ञान का लहँगा प्रेम की सारी सँवारी चली॥
तहँ सत्य की चोली दृढ़ता बंधन बाँधि चली।
तहँ नाम का अभरन अंगन अंगन बाँधि चली॥
तहँ हर्ष का हरवा स्याम रूप दृग आजि चली।

तुम अपने प्रियतम की प्यारी! अपने रूठे हुये पति को मनाने चली

हो। ज्ञान का लहँगा और प्रेम की साडी सँवारकर, सत्य की चोली दृढ़ता के बन्दो से बाँधकर, नाम के गहने अग-अग मे पहनकर, हर्ष का हार, और प्रियतम के रूप का अजन आँखो मे आँजकर, तुम अपने रूठे हुये पति को मनाने चली हो।

[३३]

मोरे पिछवरवाँ लवँगिया के बगिया लवँग फूलै आधी राति रे।
वहि लवगा कै शीतल बयरिया महँकै बडे भिनुसार॥ १॥
तेहि तर उतरा है सोनरा बेटौना गहना गढ़ै अनमोल रे।
सभवा बैठ बाबा गहना गढ़ावे बिछुआ मे घुँघरू लगाय॥ २॥
गढु सोनरा कंगन गढु तुहु बेसर तिलरी मे हीरा जड़ाय रे।
मानिक मोती से बेदिया सँवारहु चमकै बेटी के माँग॥ ३॥
यतना पहिनि बेटी चौके जे बैठै बेटी के मन दलगीर रे।
गोर बदन बेटी साँवर होयगा मुँहवा गयल कुम्हिलाय॥ ४॥
की तोरे बेटी रे दायज थोरा की रे भैया बोलै रिसियाय रे।
की तोरे बेटी रे सेवा से चुकल्यूँ काहे तोरा मुँहवा उदास॥ ५॥
ना मोरे बाबा रे दायज थोरा नाही भैया बोलै रिसियाय रे।
ना मोरे बाबा हो सेवा मे चुकल्यो यहि गुन मुँहवा उदास॥ ६॥
तब तौ कह्यो बाबा नियरे बिअहबै बिअह्यो देसवा के ओर रे।
नैहर लोग दुलम ह्वैहै बाबा रहबै बिसूरि बिसूरि॥ ७॥
बोलिया तौ यस तुहूँ बोल्यू बेटी मरल्यू करेजवा मे बान।
अगिले के घोड़वा बीरन तोर जैहै पीछे लागे चारि कहार॥ ८॥

मेरे पिछवाड़े लौंग का बाग है। लौंग आधीरात मे फूलती है। उस लौंग से शीतल हवा आती है और बडे सबेरे वह खूब महकती है॥ १॥

उस लौंग के नीचे सोनार का लड़का उतरा है, जो बडे अनमोल गहने गढ़ता है। सभा मे बैठे हुये पिताजी गहना गढ़ा रहे है और

बिछुवे मे घुँघुरू लगवा रहे हैं ॥ २ ॥

हे सोनार ! कगन गढ़ दो। बेसर बना दो। तिलरी मे हीरा जड दो। बेदी को मानिक और मोती से सँवार दो। जिससे मेरी बेटी की माँग चमक उठे ॥ ३ ॥

इतने गहने पहनकर बेटी बेदी पर बैठी। पर उसका मन बहुत उदास था। बेटी का गोरा शरीर सांवला हो गया और मुँह कुम्हला गया ॥ ४ ॥

बाप ने पूछा—हे बेटी ! तू उदास क्यो है ? क्या दहेज थोडा है ? या भाई क्रोध से बोलता है ? या मै किसी सेवा मे चूक गया ? तेरा मुँह उदास क्यो है ? ॥ ५ ॥

बेटी ने कहा—हे पिता ! न तो दहेज थोडा है, न भाई ही क्रोध से बोलते हैं, न तुम्ही सेवा मे चूके। मै तो इस कारण से उदास हूँ कि, ॥ ६ ॥

पहले तो तुम कहते थे कि कही निकट ही विवाह करेगे। पर तुम ने तो देश के ओर विवाह दिया। मेरे लिये अब तो नैहर के लोग दुर्लभ हो जायेंगे। मै बिसूर बिसूर कर रह जाउगी ॥ ७ ॥

बाप ने कहा—बेटी ! तुमने ऐसी बात कहकर मेरे कलेजे मे तीर मार दिया। बेटी ! घबडाओ नहीं। आगे-आगे तुम्हारा भाई घोडे पर चढकर जायगा। उसके पीछे तुमको लाने के लिये चार कहार भी जायेंगे ॥ ८ ॥

[३४]

मोरे पिछरवाँ लवँगिया की बगिया लवँगा फूलै आधिराति रे।
तेहि तर उतरै दुलहा दुलरुवा तुरहीं लवँगिया के फूल ॥ १ ॥
भितरा से निसरै बेटी के भैया हाथे धनुख मुख पान रे।
कस तुहू आये मोरे दरवजवा तुरहु लवँगिया के फूल ॥ २ ॥

भितरॉ मे बोली बेटी छुलाछनि हथवा गजरा मुख पान रे।
जिनि भैया डाटौ आपन बहनोइया फुलवा मै देब्यौ बटोरि॥ ३॥

मेरे पिछवाडे लौंग का बाग है। जिसमे आधीरात मे लौंग फूलती है। उस बाग मे लौंग के नीचे प्यारे दुलहा उतरे है और लौंग का फूल तोड रहे है॥ १॥

भीतर से कन्या का भाई हाथ मे धनुष और मुँह मे पान लिये निकला। उसने पूछा—तुम कौन हो? मेरे द्वार पर क्यो आये हो? और लौंग का फूल क्यो तोड रहे हो?॥ २॥

भीतर से सुलक्षणा कन्या ने, जिसके हाथ मे फूलो का गजरा और मुँह मे पान है, कहा—हे भाई! अपने बहनोई को मत डाटो। मै फूल बटोर दूँगी॥ ३॥

स्त्री अपने पति के मान-अपमान और सुख-दुख सब मे सगिनी है। भाई के मुँह से पति का अपमान होता देखकर पति का पक्ष लेना अब स्त्री के लिये स्वाभाविक हो गया है।

[३५]

सौना भदौना की रतिया रे बाबा भइँसि छँदानेन छुटान।
सोवत सामी मैं कैसे जगावउँ नीद अकारथ जाय॥ १॥
कहत कहत मै हारेउँ रे राजा बात न मोरि उनाउ।
भइँस बेचि सामी गहना गढउतेउ सोतेउ गोड़ पसारि॥ २॥
एक बचन तोसे कहौ मोरि धनियाँ जौरे सुनौ मन लाय।
तुहऊँ बेचि के भइँसी बेसहतेउ पसरा चरउतेउँ आधीराति॥ ३॥

स्त्री कहती है—सावन भादौ की घोर अँधेरी रात, छानी (पैर मे रस्सी लगाकर खूँटे से बँधी) हुई भैंस छूट गई। हाय! मै सोते हुये स्वामी को कैसे जगाऊ? उनकी नीद व्यर्थ जायगी न?॥ १॥

हे मेरे राजा! मै कहते-कहते थक गई। तुम मेरी बात सुनते ही

नही। भैस बेंचकर तुम मेरे लिये यदि गहना गढा देते, तो टाँग फैलाकर आराम से सोते ॥ २ ॥

पति सोते-सोते सुन रहा था। उसने कहा— हे मेरी प्राणेश्वरी ! तुम मेरी एक बात सुनो तो कहूं। मेरी बडी लालसा है कि तुमको बेचकर एक भैस और खरीद लूँ और आधीरात को पसर* चराया करूँ ॥ ३ ॥

इस गीत मे किसान स्त्री-पुरुष का विनोद बडा ही रोचक है। स्त्री को गहने का बडा चाव है और पुरुष को भैस पालने का।

[३६]

बेरिया क बेर मै बरजेउँ रे बाबा झँझरा मडउना जिन छाये।
झँझरे मडउना सुरज दह लगिहै गोरा बदन कुम्हिलाय ॥ १ ॥
कहहु त मोरी बेटी छत्र तनाऊँ कहहु त अँचल ओढाय।
कहहु त मोरी बेटी मडिल छवाऊँ काहे के लागै घाम ॥ २ ॥
काहे के मोरे बाबा छत्र तनउबे काहे के अचल ओढाय।
काहे के बाबा मडिल छवौबे आजु के रतिया बसेर ॥ ३ ॥
होत बिहान पह फाटत बाबा जाबै परदेसिया के साथ।
काहे के मोरे बाबा छत्र तनौबा काहे क मडिल छवाव ॥ ४ ॥
टाटक नयनूँ रुवायउँ रे बेटी दुधवा पियायउँ साढियार।
एकहू न गुन मानेउ मोरी बेटी चलिउ परदेसिया के साथ ॥ ५ ॥

पुत्री कहती है—हे पिता ! मैने तुमको बारम्बार रोका कि झाँझर माडो मत छवाना। झाझर माडो मे सूर्य की धूप लगेगी और गोरा शरीर कुम्हला जायगा ॥१॥

पिता कहता है—हे बेटी ! कहा तो छत्र तनवा दूँ। कहो तो अंचल ओढ़ा दूँ, कहो तो छत बनवा दूँ, घाम क्यो लगे ? ॥२॥

पुत्री कहती है—हे पिता ! क्यों छत्र तनाओगे ? क्यो आँचल ओढ़ा-

* रात मे भैस चराने को पसर कहते है।

ओगे ? और क्यो छत्र बनवाओगे ? आज ही की रात तो इस घर मे मेरा बसेरा है ॥३॥

कल पौ फटते ही मै तो परदेशी के साथ चली जाऊँगी। क्यो तुम छत्र तनाओगे और क्यो छत बनवाओगे ? ॥४॥

पिता कहता है—हे बेटी ! मैने तुमको ताजा मक्खन खिलाया। साढ़ीदार दूध पिलाया। तुमने एक भी एहसान नही माना और तुम परदेशी के साथ चली जा रही हो ॥५॥

इस गीत मे विवाहिता पुत्री के लिये पिता के हृदय की एक गहरी कलक छिपी हुई है।

[३७]

हटियै सेदुरा महँग भये बाबा चँदरी भये अनमोल।
यहि सेदुरा के कारन रे बाबा छोडेउँ मैं देश तुम्हार ॥ १ ॥
बाबा कहै बेटी दस कोस बियैहौ भैया कहै कोस पाँच।
माया कहै बेटी नगर अजोध्या नित उठि प्रात नहाँउँ ॥ २ ॥
बाबा दिहिनि अनधन सोनवाँ माया दिहिनि लहर पटोर।
भैया दिहिनि चढन कै हाँ घोडवा भौजी ने अपना सोहाग ॥ ३ ॥
बाबा कै सोनवाँ नवै दिन खाबै फटि जैहै लहर पटोर।
भैया कै घोडवा नगर खोदैबों भौजी कै बाढ़ै अहिबात ॥ ४ ॥
बाबा कहै बेटी नित उठि आयेव माया कहै छठे मास।
भैया कहै बहिनी काज बियाहे भौजी कहै कस बात ॥ ५ ॥

हे बाबा ! बाजार मे सिन्दूर महँगा हो गया। चुँदरी अनमोल हो गई। इसी सिन्दूर के कारण मैने तुम्हारा देश छोड दिया ॥१॥

बाबा ने कहा—बेटी ! तुझे दस कोस की दूरी पर ब्याहूँगा। भाई ने कहा—पाँच कोस पर। माँ ने कहा—बेटी ! अयोध्या मे तेरा ब्याह करूँगी, जहाँ रोज प्रात.काल उठकर स्नान करने आऊँगी ॥२॥

बाबा ने अन्न, धन और सोना दिया। मां ने लहरदार रेशमी धोती दी। भाई ने चढने के लिये घोड़ा दिया। भौजी ने अपना सुहाग दिया अर्थात् सिन्दूर दिया ॥३॥

बाबा का सोना नौ ही दिन खाऊंगी। रेशमी धोती फट जायगी। भैया के घोडे को नगर मे दौडाऊगी और भौजी का सुहाग बढ़ता रहेगा ॥४॥

बाबा ने कहा—बेटी! रोज आती जाती रहना। मां ने कहा—छठे छमासे आना। भैया ने कहा—कभी कोई काम-काज पडे तो आना। भौजी ने कहा—आने की ज़रूरत ही क्या है? ॥५॥

[३८]

सोवत रहलिउँ मै मैया के कोरवाँ मैया के कोरवाँ हो।
मोरी भौजी जे तेल लगावै तौ मुडवा गुँधन करै हो॥ १॥
आई है नाउनि ठकुराइनि तौ बेंदिया चढि बैठी हो।
वे तौ ललित महावरि देय तौ चलन चलन करै हो॥ २॥
एक कोस गई दुसर कोस तिसरे मा बिन्द्रावन हो।
धना झालरि उघारि जब चितवै मोरे बाबा के कोई नाहीं हो॥ ३॥
लिल्ली घोडे चितकाबर दुलहा जे बोले हो।
उनके हथवा सबज कमान अपान हम होई हो॥ ४॥
भूंख मा भोजन खियैहौ मै पियासे मा पानी दैहौ हो।
धनियाँ रखबो मै हियरा लगाय बबैया बिसरि जैहै हो॥ ५॥

मैं माँ की गोद मे सोया करती थी। मेरी भौजी तेल लगाकर मेरे बाल गूँथ दिया करती थी॥ १॥

यह नाइन ठकुराइन आई है। बेदी चढ़कर बैठी है। बहुत सुन्दर महावरि लगाती है और बार-बार चलने को कहती है॥ २॥

एक कोस गई, दूसरे कोस गई, तीसरे मे वृन्दाबन मिला। कन्या ने जब झालर उठाकर देखा तो बाबा की तरफ का कोई दिखाई न पड़ा ॥ ३ ॥

नीले चितकबरे घोड़े पर दुलहा चढ़े थे। उनके हाथ मे हरे रग का धनुष था। उन्होने कहा—तुम्हारा मैं हूं ॥ ४ ॥

भूख लगेगी, मै खिलाऊँगा। प्यास लगेगी, पानी पिलाऊगा। हे प्यारी स्त्री ! तुमको हृदय मे लगाकर रक्खूँगा। तुम अपने बाबा को भूल जाओगी ॥ ५ ॥

[३६]

मोरे पिछवारे लौग का बिरवा लौग चुअै आधी रात।
लौग बिनि बिनी ढेर लगावो लादत है बनिजार ॥ १ ॥
लादि चले बनिजार के बेटा की लादि चले पिया मोर।
हमहूँ को पलकी सजावो रे पिआरे मोरा तोरा जुरा है सनेह ॥ २ ॥
भूखेन मरिहौ पिआसेन मरिहौ पान बिना होठ कुम्हिलाय।
कुसकी साथरी डासन पैहौ अग छुलिय छुलि जायँ ॥ ३ ॥
भूख मै सहिहौ पिआस मैं सहिहौ पान डारौ बिसराय।
तुम्हरे साथ पिआ जोगिनि होइहौ ना सँग माई न बाप ॥ ४ ॥

मेरे पिछवाडे लौग का पड है। जिसमे आधीरात को लौग चूती (टपकती) है। मै लौग बीन-बीन कर ढेर लगाती हू, और मेरा पति, जो बनजारा (वाणिज्य करने वाला) है, उसे लादता है ॥ १ ॥

मेरा पति, जो व्यापारी का बेटा है, लौग लादकर चला। हे मेरे प्राणप्यारे ! मेरे लिये भी पालकी सजाओ। मुझे भी साथ ले चलो। हम और तुम तो स्नेह से बँधे है न ? ॥ २ ॥

पति ने कहा—हे प्यारी ! भूख से मरोगी। प्यास से मरोगी। पान बिना ओठ कुम्हला जायगा। कुश की चटाई सोनो को पाओगी। जिस

से सारा शरीर छिल जायगा ॥ ३ ॥

स्त्री ने कहा—मै भूख सहूँगी। प्यास सहूंगी। पान को भूल जाऊँगी। हे प्यारे ! तुम्हारे साथ मै जोगिनी होकर रहूँगी। न मै मां के के साथ रहूंगी, न बाप के ॥ ४ ॥

सच है, पतिव्रता को पति के सिवा गति कहाँ ? जैसे छाया काया से अलग नही हो सकती, वैसे ही सती अपमे पति से अलग नही रह सकती।

[४०]

माहे सुगहा जे भोरवै कोइलरि देई, चलौ कोइलरि हमरे देश।
अनन्दा बन छाडि देव ॥१॥
माहे जो मैं चलौ सुगहा तोरे देश, कवन कवन सुख देबो।
अनन्दा बन छाडि देब ॥२॥
माहे आम जे पाके महुआ जे टपकै, डरिया बैठि सुख लेब।
अनन्दा बन छाडि देव ॥३॥
माहे दुलहा जे भोरवै दुलहिनि का, चलौ दुलहिनि हमरे देश।
बबैया घर छाडि देव ॥४॥
माहे जो मै चलौ दुलहा तोरे देश, कवन कवन सुख देबौ।
बबैया घर छाडि देब ॥५॥
जोगउब जस घिउ गागरि, हिये बिच राखब।
बबैया घर छाडि देब ॥६॥

सुआ कहता है—हे कोयल ! हमारे देश को चलो। आनन्द-बन को छोड दो ॥१॥

कायल कहती है—हे सुआ ! मै तुम्हारे देश को चलूँ, तो मुझे तुम क्या-क्या सुख दोगे ? मैं आनन्द-बन छोड़ दूँगी ॥२॥

सुआ कहता है—हमारे देश मे आम पके है। महुआ टपक रहा है। डाल पर बैठकर सुख भोगो। आनन्द-बन छोड़ दो ॥३॥

इसी प्रकार दुल्हा दुलहिन को फुसला रहा है—हे दुलहिन ! हमारे देश को चलो। अपने पिता का घर छोड दो ॥४॥

दुलहिन पूछती है—अच्छा, यदि मैं तुम्हारे देश चलूँ, तो हे दुलहा ! तुम मुझे क्या-क्या सुख दोगे ? ॥५॥

दूल्हा कहता है—तुमको इस तरह सँभाल कर रक्खूँगा जैसे घी का घडा। और तुमको मै हृदय मे रक्खूँगा। पिता का घर छोडकर मेरे देश को चलो ॥६॥

घी के घडे की उपमा देहात के लोगो को बडी प्यारी जान पडेगी। किसान घी के घडे को बडी सँभाल से रखता है।

[४१]

कहवाँ ते सोना आये कहवाँ ते रूपा आये हो।
एहो कहवाँ ते लाली पलँगिया पलँगिया जगमोहन हो ॥ १ ॥
कासी ते सोना आये गयाजी ते रूपा आये हो।
एहो सैयाँ सँग लाली पलँगिया पलँगिया जगमोहन हो ॥ २ ॥
भितरे ते माया जो रोवइँ अँचलेमाँ आँसू पोछइँ हो।
एहो मोरी बिटिया चली परदेस कोखिय मोरी सूनी भई ना ॥ ३ ॥
बैठक से बाबू जी रोवइँ पटुके माँ आँसू पोछै हो।
मोरी धेरिया चली परदेस भवन मोरा सून भये ना ॥ ४ ॥
भितरे ते भैया जो रोवइँ पगडिया माँ आँसू पोछइँ हो।
मोरी बहिन चलीं परदेस पिठिया मोरी सून भई ना ॥ ५ ॥
ओबरी ते भौजी जो रोवइँ चुनरिया माँ आँसू पोछइँ हो।
एहो मोर ननदी चली परदेस रसोइयाँ मोरी सूनि भई ना ॥ ६ ॥

सोना कहाँ से आया ? रूपा कहाँ से आया ? यह लाल पलँग कहाँ से आई ? यह तो ऐसी सुन्दर है कि संसार का मन मोह लेती है ॥१॥

काशी से सोना आया। गयाजी से रूपा आया है। स्वामी के

साथ लाल पलँग आई है, जो ससार का मन मोह लेती है ॥२॥

भीतर माँ रो रही है और आँचल से आँसू पोछ रही है। हाय ! मेरी बेटी परदेश चली। मेरी कोख सूनी हो गई है ॥३॥

बैठक मे बाबू जी रो रहे है। दुपट्टे मे आँसू पोछ रहे हैं। हा ! मेरी कन्या परदेश जा रही है। मेरा घर सूना हो गया ॥४॥

भीतर भैया रो रहे है। पगडी से आँसू पोछ रहे है। हा ! मेरी बहन परदेश चली। मेरी पीठ सूनी हो गई ॥५॥

भीतर कोठरी मे भौजी रो रही है। चूँदरी मे आँसू पोछ रही है। हा ! मेरी ननद परदेश चली। मेरी रसोई सूनी हो गई ॥६॥

[४२]

सोवत रहिउँ मैया के कोरवाँ निंदिया उचटि गई मोरि।
केकरे दुआरे मैया बाजन बाजै केकर रचा है बियाह ॥ १ ॥
तुहीं बेटी आउरि तुही बेटी बाउरि तुही बेटी चतुर सयानि।
तुमरे दुआरे बेटी बाजन बाजै तुमरइ रचा है बियाह ॥ २ ॥
नाही सिखेन मैया गुन अवगुनवाँ नाहीं सिखेन राम रसोइँ।
सासु ननदि मोर मैया गरियावै मोरे बूते सहि नहिं जाइ ॥ ३ ॥
सिखि लेउ बेटी गुन अवगुनवाँ सिखि लेउ राम रसोइँ।
सासु ननदि तोर मैया गरियावै लै लिहौ अँचरा पसारि ॥ ४ ॥

मै माँ की गोद मे सो रही थी। मेरी नींद उचट गई। हे माँ ! किसके दरवाजे पर बाजा बज रहा है ? किसका विवाह होगा ? ॥१॥

माँ ने कहा—बेटी ! तुम्ही बावली हो, तुम्ही सयानी हो। हे बेटी ! तुम्हारे ही दरवाजे पर बाजा बज रहा है। तुम्हारा ही ब्याह होगा ॥२॥

बेटी ने कहा—हे मो ! न मैने कोई गुण सीखा, न अवगुण। और रसोई बनाना सीखा। ससुराल मे सास और ननद जब मेरी माँ को गालियाँ देंगी, तब मुझसे तो नहीं सहा जायगा ॥३॥

माँ ने कहा—बेटी ! गुण-अवगुण सब सीख लो। रसोई बनाना भी सीख लो। हे बेटी ! यदि सास और ननद गाली दे, तो आँचल पसार कर ले लेना ॥४॥

क्षमा-शीलता की कैसी मनोहर शिक्षा माता ने पुत्री को दी है ! क्षमा ही गृहस्थी की शान्ति का मूल है।

[४३]

कोठा उठाओ बरोठा उठाओ चौमुख रचहु दुआर।
बडे बडे पण्डित रे बेहन ऐहै निहुरै न कत हमार॥ १॥
रोजै तो बेटी रे मोरी चौपरिया आजु काहे मन है उदास।
की तोर बेटी रे अनधन थोर है की पायेउ दायेज थोर।
की तोर बेटी रे सुन्दर बर नाहीं काहेक मन है उदास॥ २॥
नाही मोर बाबा अनधन थोर मे नाहीं पायउं दायेज थोर।
नाहीं मोर बाबा सुन्दर बर नाही सुनि परै दारुनि सासु॥ ३॥
राजा कै राज रोज रे बेटी परिजा के छठि मास।
सासु कै राज दसै दिन बेटी आखिर राज तुम्हार॥ ४॥

कोठा उठाओ। बरामदा तैयार करो। चारो ओर द्वार लगाओ। बडे-बडे पण्डित विवाह मे आयेगे। देखो, मेरे स्वामी को झुकना न पडे ॥१॥

हे बेटी ! रोज तो तू मेरी चौपाल मे खुश रहती थी। आज तेरा मन उदास क्यो है ? क्या तेरे अन्न-धन की कमी है ? या दहेज कम मिला ? या तेरा वर सुन्दर नही ? तू उदास क्यो है ? ॥२॥

बेटी ने कहा—हे बाबा ! न मेरे अन्न-धन की कमी है, न दहेज ही कम मिला और न वर ही कुरूप है। सुनती हूँ, मेरी सास बड़े कठोर स्वभाव की है। इसी से मै उदास हूँ ॥३॥

बाप ने कहा—राजा का राज कभी खाली नही रहता। प्रजा का

राज छ महीने का होता है। पर हे बेटी ! सास का राज तो दस दिन का है। अन्त मे तो तेरा ही राज होगा। अर्थात् दस दिन का दु:ख सह लेना। पीछे तो तुम्ही मालकिन होगी ॥४॥

[४४]

अरे अरे कारी कोइलिया तुहै किन भोरवा।
ऐसा अनन्द वन छोडि विन्द्रावन तू जे चलिउ ॥ १ ॥
काह कहौ मोरी मैया वही सुगवा भोरवा।
ऐसा अनन्द बन छोडि बिन्द्रावन हम जे चलेन ॥ २ ॥
अरे अरे बेटी दुलहिन देई तुहै किन भोरवा।
ऐसन बबैया घर छोडि सजन घर तूँ जे चलिउ ॥ ३ ॥
काह कहौ मोरी माई वही दुलहा भोरवा।
ऐसन बबैया घर छोड़ि सजन घर हम जे चलेन ॥ ४ ॥
गलियाँ खेलत मोर भैया झपटि घर आयेन।
छेका है बहिनि कै राह बहिनि मोर कहंवा चलिउ ॥ ५ ॥
जाने दे ये भैया जाने दे हम तौ फन्दे परी।
काज परे हम ऐबै ये भैया पाँव उठाय ॥ ६ ॥

हे काली कोयल ! तुम्हे किसने फुसलाया ? जो तुम ऐसा आनन्द बन छोड कर वृन्दावन को चली ॥ १ ॥

हे माँ ! क्या कहूँ ? उसी तोते ने फुसला लिया है। इसी से ऐसा आनन्द-बन छोडकर मै वृन्दाबन को जा रही हूँ ॥ २ ॥

हे बेटी ! तुम्हे किसने फुसलाया ? जो तुम अपने बाबा का ऐसा घर छोड़कर सजन के घर जा रही हो ॥ ३ ॥

हे माँ ! क्या कहूँ ? उसी दूल्हे ने मुझे फुसलाया, जो पिता का ऐसा सुखदायक घर छोड़ कर मै सजन के घर जा रही हूँ ॥ ४ ॥

गली मे खेलता हुआ मेरा छोटा भाई झपटकर घर आया और

बहन का रास्ता छेककर पूछने लगा—मेरी बहन ! कहाँ जा रही हो ? ॥ ५ ॥

बहन ने कहा—हे भाई ! मुझे जाने दो। मै तो अब फदे मे पड गई हूँ। जब कोई काम-काज तुम्हारे यहाँ पडेगा, तब मै आऊँगी। यह लो, मै चली ॥६॥

[४५]

ऊँच नगर पुर पाटन बाबा हो
बसि गइले कोइरी कोहार हो।
महला के आरी पासे बसि गइले हेलवा
डलवा बीने अनमोल हो।
हमै जोगे डलवा बिनहु भइया हेलवा
माग बेचन हम जाब हो॥ १॥
एक बने गइलो दुसरे बने गइलों
तीसरे बने लागेले बजार हो।
अपना महल मँइले रजवा पुकारेल
काह बेचन तुहुँ जाहु रे॥ २॥
केथुआ के तोरी डाल डलइया
केथुआ क परेला ओहार हो।
केथुआ के तोरे सिर कै गेडुरिया
काहे बेचन तुहुँ जाउ रे॥ ३॥
बाँसन के मोरे डाल डलइला रे
पाटन परेला ओहार रे।
रेसम के मोरे सिर के गेडुरिआ
साग बेचन हम जाब हो॥ ४॥

आवहु कोइरिनि हमारी महलिया रे
पियहु सुरही गाइ के दुध रे ।
सोवहु कोइरिनि हमरी सेजरिया
कचरहु मगही ढोली पान रे ॥ ५ ॥
अइसन बोली राजा फेरि जनि बोलिउ
भइली धरम कइ बेर रे ।
जोहत होइहे मोरी सासु ननदिया
दुधवा दुहन कइ जूनि रे ॥ ६ ॥
पोहता पोहन कइ टटिया बिनइबै हो
मुरई के बेवँडा देब रे ।
अपनो कोइरी लेइ सुतबो सेजरिया
हसि खेलि करिबो बिहान हो ॥ ७ ॥

हे बाबा ! पाटन नगर ऊँचाई पर बसा हुआ है । उसमे कोइरी और कुम्हार बस गये है । महल के आसपास हेला (महतरो को एक शाखा, जो देहात मे सूप और डलिया बनाया करते है) बस गये है, जो अनमोल डलिया बिनते हैं । हे हेला भाई ! मेरे लिये एक डलिया बना दो । उसमे साग रखकर बेचने जाऊँगी ॥ १ ॥

साग बेंचने के लिये वह एक बन मे गई । दूसरे बन मे गई । तीसरे बन मे बाजार लगता था । बाजार के राजा ने अपने महल मे से पुकारा—तुम क्या बेचने जा रही हो ? ॥ २ ॥

किस चीज की तुम्हारी डलिया है ? उस पर किस कपड़े का ओहार (परदा) पड़ा है ? तुम्हारे सिर हर गेंडुली (घड़े के नीचे रखने के लिये गोल बटी हुई घास) किस चीज की है ? तुम क्या बेंचने जा रही हो ॥ ३ ॥

कोइरिन ने कहा—मेरी डलिया तो बांस की है । उस पर रेशम का

ओहार पड़ा है। मेरे सिर पर रेशम की गेंडुली है। मैं साग बेचने जा रही हूँ ॥ ४ ॥

राजा ने कहा—हे कोइरिन ! मेरे महल मे आओ न ? मजे से सुरा गाय का दूध पिओ। मेरी सेज पर सुख से सोओ और मघई (मगध का) पान कचरो (खाओ) ॥ ५ ॥

कोइरिन ने कहा—हे राजा ! एक बार बोल लिया तो बोल लिया, फिर ऐसी बात न बोलना। धर्म की बेला (संध्या) हुइ है। मेरी सास और ननद मेरी राह देखती होगी। अब दूध दूहने की बेला आ गई है ॥ ६ ॥

मुझे तुम्हारा महल नहीं चाहिये। पोस्ते (अफीम के पौधे) की टट्टी बनवाऊँगी। उसमे मूली का बेंवड़ा लगवाऊँगी। अपने कोइरी को लेकर सेज पर सोऊँगी और हँस-खेलकर सबेरा कर दूँगी ॥ ७ ॥

गरीबिनी अपने झोपड़े मे, अपनी मामूली आमदनी ही मे संतुष्ट है। चरित्र बेंचकर वह न सुरा गाय का दूध चाहती है, न महल, और न सुख की सेज। पोस्ते की टट्टी मे मूली का बेवड़ा उसे राजमहल से कहीं अधिक मनोहर लगता है। सच है—

टूटि खाट घर टपकत टटिओ टूटि।
पिय कै बाँह सिर्हनवाँ सुख कै लूटि ॥

महल मे राजा है, पर 'पिय' तो नही है। जहाँ 'पिय' है, वहीं सुख है।

[४६]

अरे अरे काला भवँरवा आँगन मोरे आवो।
भवँरा आजु मोरे काज बियाह नेवत दै आवो ॥ १ ॥
नेवत्यों मै अरगन परगन औ ननिआउर।
एक नहिं नेवत्यों बिरन भैया जिनसे मै रूठिऊँ ॥ २ ॥

सासु भेटै आपन भइया ननद आपन बीरन।
कोइलरि छतिया उठी घहराय मै केहि उठि भेटौं ॥ ३ ॥
अरे अरे काला भवँरवा आँगन मोरे आवो।
भँवरा फिरि से नेवत दै आवो बीरन मोर आवै ॥ ४ ॥
अरे अरे जागिनि भाँटिनि जानि कोई गावो।
आजु मोरा जियरा बिरोग बीरन नहिं आये ॥ ५ ॥
अरे अरे चेरिया लौंडिया दुवारा झाँकि आवो।
केहकर घोड़ा ठहनाय दुवारे मोरे भीर भये ॥ ६ ॥
अरे अरे रानी कौसिल्या बीरन तुमरे आये।
उनही के घोड़ा ठहनाय दुवारे अति भीर भये ॥ ७ ॥
आगे आगे चौरा चँगरवा पियरी गहागह।
लिल्ले घोडे भैया असवार तो डेंड़िया भावुज मोरी ॥ ८ ॥
अरे अरे जागिनि भाँटिनि सभै कोई गावो।
मोरे जिअरा भये है हुलास बिरन मोर आये ॥ ९ ॥
अरे अरे सासु गोसाईं करहिया चढावो।
आजु मोरा जियरा हिलोरै बीरन मोर आये ॥१०॥
अस जिन जानौ बहिनी त भैया दुखित अहै।
बहिनी बेचवौं मै फाँड क कटरिया चौक लइ अइबेउँ ॥११॥
अस जिन जानौ ननदी की भौजी दुखित अहै।
ननदी बेचवौं मै नाके क बेसरिया पिअरिया लइकै
अइबै ॥१२॥
कहवाँ उतारौ चौरा चँगरवा पियरी गहागह।
कहवाँ भेटौ बीरन भैया तौ कहवाँ भावुज मोर ॥१३॥
ओबरी उतारौ चौरा चँगेरवा पियरी गहागह।
डेवढ़ी भेटौ बीरन भैया तौ आँगना भावुज मोर ॥१४॥

लहँगा लै आये वीरन भैया पिअरी कुसुम कै।
अँगिया लै आईं मोरि भौजी चौक पर कै चूँदरि ॥१५॥
हँसि हँसि पहिरिन ओढ़िन सुरुज मनाइन।
बढ़इ बबैया तोर बेल मान मोर राखेउ ॥१६॥

हे काले भौंरा ! मेरे आगन मे आओ । हे भौंरा ! आज मेरे यहाँ विवाह का कार्य है । तुम जाकर निमन्त्रण दे आओ ॥ १ ॥

स्त्री मन मे अनुभव करती है—मैंने गाँव और परगने भर को न्योता दिया । पर भाई को नहीं न्योता दिया, जिनसे मैं रूठी हूँ ॥ २ ॥

सास और ननद अपने-अपने भाइयो से भेंट कर रही है । मेरी छाती घहरा उठती है । हाय ! मेरे भाई नही आये । मैं किसको भेंटू ? ॥ ३ ॥

वह पछताती है और कहती है—हे काले भौंरा ! मेरे आँगन मे आओ । हे भौंरा ! भाई को फिर से न्योता दे आओ कि वह आवे ॥ ४ ॥

अरी जागिनो ! अरी भाटिनो ! कोई गाओ मत । आज मेरे मन मे बडा दु ख ह । मेरा भाई नही आया ॥ ५ ॥

अरी दासियो ! जाओ, द्वार पर झाककर देख आओ । किसका घोड़ा हिनहिना रहा है ? मेरे द्वार पर किसलिये भीड हुई है ? ॥ ६ ॥

दासियो ने कहा—हे रानी कौशिल्या ? तुम्हारे भाई आ गये । उन्ही का घोड़ा हिनहिना रहा है और उन्ही क लिये द्वार पर भीड़ लगी है ॥७॥

आगे-आगे चावल से भरा हुआ चँगेरा (बाँस या मूंज का बना हुआ बडा टोकरा) और गहरे रग की पीली धोती है । उसके पीछे नीले घोड़े पर सवार मेरा भाई है और पालकी मे मेरी भौजाई है ॥८॥

अरी जागिनो ! अरी भाटिनो ! सभी गाओ । आज मेरे हृदय मे हर्ष उमड़ रहा है । मेरा भाई आया है ॥ ९ ॥

अरी मालिकन सासजी ! कढ़ाई चढ़ाओ । आज मेरे हृदय मे आनन्द

उमड़ रहा है। मेरा भाई आया है ॥ १० ॥

भाई ने कहा—हे बहन ! ऐसा मत समझना कि भाई गरीब है। मै अपने कमर की कटारी बेचकर चौक ले आता ॥ ११ ॥

भौजाई ने कहा है—ननद ! ऐसा मत समझना कि भौजाई गरीब है। मै अपने नाक की बेसर बेचकर पियरी (पीली साडी) ले आता ॥ १२॥

यह चावल भरा हुआ चगेरा कहां उतारूं ? और यह पियरी रक्खू ? मै अपने प्यारे भाई से कहो भेट करू ? और अपनी भौजाई से कहां मिलू ? ॥ १३ ॥

चावल का चँगेरा कोठरी मे रख दो। पियरी भी वही रखदो। बैठक मै भाई से और आँगन मे भौजाई से भेट करो ॥ १४ ॥

भाई लहंगा और कुसुमी रङ्ग की पिअरी ले आये है। भौजाई चोली और चौक पर पहनने की चूनरी ले आई है ॥ १५ ॥

स्त्री ने हँस-हँसकर कपड़े पहने। फिर वह सूर्य को मनाने लगी—हे सूर्य ! मेरे बाबा की लता खूब फैले। जिन्होने आज मेरा मान रख लिया ॥ १६ ॥

इस गीत मे भाई से रूठी हुई बहन के मन का उतार-चढ़ाव ऐसा चित्रित किया गया है कि क्या कोई महाकवि वैसा कर सकेगा ? ससुराल मे बहू को अपने मायके के मान-अपमान का बड़ा ख्याल रहता है। सास और ननद को अपने भाइयो से मिलते देखकर बहू का रूठा हुआ हृदय अपने भाई के लिये छटपटाने लगा। अत मे भाई आया तो बहन ने उसके लिये कितना हर्ष प्रकट किया है, यह एक-एक पक्ति से छलक रहा है।

भाई का यह कथन भी ध्यान देने योग्य है कि—'मै गरीब हू तो क्या हुआ ? मै अपने कमर की कटारी बेंच कर न्योता लेकर आता।' अहा ! कभी कटारी भी हमारा धन था। और वह शरीर और धन की

ही नही, सामाजिक अभिमान की भी रक्षा करता था।

[४७]

आधे तलवा माँ हस चूनै आधे माँ हसिनि।
तबहूँ न तलवा सोहावन एक रे कमल बिन रे॥ १॥
आधे बगिया माँ आम बौरे आधे मा इमली बौरे हो।
तबहूँ न बगिया सोहावनि एक रे कोइलि बिन रे॥ २॥
आधी फुलवरिया गुलबवा आधी म कँवडा गमकइ।
तबहूँ न फुलवा सोहावन एक रे भँवर बिन॥ ३॥
सोने क सुपवा पछोरै मोतिया हलोरै।
तबहूँ न पुरुष सोहावन एक रे सुनरि बिन॥ ४॥
आधे माडौ माँ गोत बैठै आधे माँ गोतिन बैठै हो।
तबहूँ न माडौ सोहावन एक रे ननद बिन रे॥ ५॥
बदिया ठाढ पण्डितवा कलस कलस करै हो।
बदिया ठाढ कन्हैया बहिनि गोहरावै हो॥ ६॥
कहाँ गइउ बहिनी हमार कलस मोर गोठौ हो।
निचवा से डोलिया उँचवा गये पात खहरानै हो॥ ७॥
अँगना से भैया भीतर गये भौजी से मत करै हो।
धनिया आवति है बहिनि हमार गरब जिनि बोलेउ
निहरि पैयाँ लागेउ हो॥ ८॥
आवौ ननदी गोसाँइनि पैयाँ तोरे लागी हो।
बैठो माँझ मडौवा कलस मोर गोंठौ हो॥ ९॥
भौजी तीनिउ बरन मोर नेग तीनिउ हम लेबै हो।
लेबै भौजी सोरहौ सिंगार रहँसि घर जावै हो॥१०॥
देबिउँ मैं तीनिउ नेग औ सोरहो सिंगारउ।
हमरे हरी जी क परम पियारि तोहार मन राखब॥११॥

आधे ताल मे हस चुन रहे है। आधे मे हस्तिनी चुन रही है। फिर भी कमल बिना ताल सुन्दर नही लगता है ॥ १ ॥

आधे बाग मे आम बौरे है। आधे मे इमली फल रही है। पर कोयल बिना बाग सुन्दर नही लगता है ॥ २ ॥

आधी फुलवारी म गुलाब खिल रहा है। आधी मे केवडा महक रहा है। पर बिना भौरे के फुलवाडी सुहावनी नही लगती है ॥ ३ ॥

घर मे इतना धन है कि सोने के सूप मे मोती पछोरे और हलोरे जाते है। पर एक सुन्दरा स्त्री बिना पुरुष शोभायमान नही लगता ॥ ४ ॥

आधे मोडौ मे गोत्रवाले बैठे है, आधे म गोतनियां है। फिर भी एक ननद बिना मोडौ सूना-सा लगता है ॥ ५ ॥

वेदी पर खडे-खडे पण्डित 'कलश लाओ' 'कलश लाओ' की पुकार मचाये हुये है। वेदी पर खडा हुआ भाई बहन को पुकार रहा है ॥ ६ ॥

मेरी बहन कहा है ? बहन ! आओ और कलश गोठो (चित्रित-करो)। इतने मे नीचे से डोली ऊपर आई और पत्ते खडखडाये ॥ ७ ॥

भाई आंगन से अपनी स्त्री की कोठरी मे गया और स्त्री को समझाने लगा—हे मेरी प्यारी स्त्री ! मेरी बहन आ रही है। देखना, उसके सामने अभिमान की कोई बात न बोलना। झुककर, उसका पैर छूकर, उसे प्रणाम करना ॥ ८ ॥

ननद के आने पर स्त्री ने कहा—हे ननद ! आओ। मै तुमको पैर छूकर प्रणाम करती हू। माडो के मध्य मे बैठो और कलश गोठो ॥ ९ ॥

ननद कहती है—हे भौजी ! मेरे तीन नेग है। मै तीनो लूँगी। हे भौजी ! मै सोलहों शृङ्गार की चीजें लूँगी, और प्रसन्न होती हूई घर जाऊंगी ॥ १० ॥

भौजाई ने कहा—हे ननद ! मैं तुमको तीनो नेग दूँगी और सोलोहो शृङ्गार की चीजे भी दूँगी। तुम मेरे प्राणनाथ की परम प्यारी बहन

हो। मैं तुम्हारा मन अवश्य रक्खूँगी ॥ ११ ॥

जान पड़ता है, बहू बेचारी गरीब थी। इसी से भाई ने लपककर अपनी स्त्री को पहले ही से सावधान कर दिया कि बहन के सामने गर्व की कोई बात न बोलना। बल्कि नम्रतापूर्वक झुककर प्रणाम करना। धन मे हीन, किन्तु पद मे मान व्यक्ति को धनी कुटुम्बी का अभिमान असह्य हो जाता है। धनी होने पर जो जितना ही नम्र होता है, समाज मे उसकी उतनी ही इज्ज़त बढ़ती है।

अन्त मे, बहू ने जो यह भाव प्रकट किया है कि "मेरे प्रियतम का जो प्रिय है, मै उसका मन अवश्वय रक्खूँगी।" इसमे प्रियतम के लिये बहू के हृदय मे अकृत्रिम और अगाध प्रेम प्रकट होता है। जो अपने को प्रिय है, उसकी प्रत्येक वस्तु प्रिय होने ही से सच्चे प्रेम का आनन्द मिल सकता है।

[४८]

हाथ लेले लोटिया काधे लेले धोतिया पोथिया लिहले ओरमायजी।
चलले चलल विप्र गइले अयोध्या ठाढ भइले दसरथ द्वार जी।
तोहरा घरे राजा राम दुलरुआ मोरा घरे सीता कुँआरि जी ॥१॥
नौ लाख घोडा नौ लाख हाथी नौ लाख तिलक दहेज जी।
सीता ऐसन बारे दुलहिन देबो जामे होइहै अवध अँजोर जी ॥२॥
अइसन बोली जनि बोली ये विप्र मोरा बूते सहलो न जाय जी।
समुचे अजोध्या के राम दुलरुआ मोरा बूते कहलो न जाय जी ॥३॥

हाथ मे लोटिया ले लिया। कधे पर धोती और बगल मे पुस्तक लटका ली। चलते-चलते ब्राह्मण अयोध्या पहुंचा और दशरथ महाराज के द्वार पर खड़ा हुआ। ब्राह्मण ने कहा—हे राजा! तुम्हारे घर मे प्यारे राम हैं और हमारे घर मे कुँवारी सीता है ॥ ॥

नौ लाख घोड़ा, नौ लाख हाथी, और नौ लाख रुपये तिलक मे

दिये जायेंगे। सीता ऐसी दुलहिन दूँगा, जिससे सारे अयोध्या में प्रकाश छा जायगा ॥२॥

महाराज दशरथ ने कहा—हे ब्राह्मण! ऐसा वचन मत बोलो। मुझ से सहा नहीं जाता। राम सारी अयोध्या के प्यारे हैं। अकेला मैं कुछ कह नहीं सकता ॥३॥

गीत की अन्तिम पंक्ति से मालूम होता है कि गीत रचनेवाले की राय में राजा अपने पुत्र का विवाह भी प्रजा की सम्मति बिना नहीं कर सकता। तुलसीदास ने भी दशरथ के मुँह से ऐसा ही कहलाया है—

जो पाँचहिं मत लागै नीका।
करहु हरषि हिय रामहिं टीका॥

राजाओं को इस गीत पर ध्यान देना चाहिये।

[४६]

अरी अरी कारी कोइलि तोर जतिया भिहावन रे।
कोइलरि बोलिया बोलउ अनमोल त सब जग मोहै रे॥ १॥
अरी अरी कारी कोयलिया आँगन मोरे आवहु रे।
आजु मोरे पहिला बियाहु नेवत दै आवहु रे॥ २॥
नेउतेउँ मैं अरगन परगन अरे ननिआउर रे।
कोइलरि एकु न नेउतेउँ बीरन भइया जिनसे मैं रूठिउँ रे॥ ३॥
अरी अरी सखिया महेलरि मंगल जनि गावहु रे।
सखिया आजु मोरा जियरा उदास बीरन नाही आए रे॥ ४॥
आगे के ओड़वा भइया मोरे डोलिया भउज रानी रे।
एहो बीच मे सोहै भतिजवा तौ भरिगा है माडउ रे॥ ५॥
कहवाँ उतारौ बीरन भइया कहवाँ भउज रानी रे।
रामा कहवाँ उतारौ भतिजवा तौ भरिगा है आँगनु रे॥ ६॥

द्वारे उतारौ बीरन भइया महले भउज रानी रे।
रामा अँगने माँ खेलै भतिजवा तौ भरिगा है माडउ रे ॥ ७॥
अरी अरी सखिया सहेलरी मगलु अब गावहु रे।
आजु मोरा जियरा हुलास बीरन भइया आये है रे ॥ ८॥
अरी अरी नाउनि बारिनि नेगु अब माँगहु रे।
आजु मोरा जियरा हुलास बीरन भइया आये है रे ॥ ९॥

हे काली कोयल ! तुम्हारी जाति देखने मे तो बड़ी भयानक लगती है। पर तुम ऐसी मीठी बोली बोलती हो कि उस पर सारा ससार मुग्ध हो जाता है ॥१॥

हे काली कोयल ! मेरे आँगन मे आओ। आज मेरे घर मे पहला विवाह है। तुम न्योता दे आओ ॥२॥

मैने परगने भर को, सब सम्बधियो को न्योता दिया। हे कोयल ! पर मै अपने भाई से रूठी हू। उसको न्योता मत देना ॥३॥

हे सखी सहेलियो ! मगल-गीत न गाओ। हे सखियो ! आज मेरा मन उदास है। मेरा भाई नहीं आया है ॥४॥

अहा ! आगे के घोडे पर मेरा भाई और पीछे की डोली मे मेरी भावज रानी आ रही है। अहो ! बीच मे मेरा भतीजा है। इनसे सारा माडौ (मडप) भर गया है ॥५॥

भाई को कहा उतारा जाय ? भावज रानी को कहा उतारा जाय ? भतीजे को कहा उतारा जाय ? जिनसे आँगन भर गया है ॥६॥

भाई को द्वार पर उतारो। भावज रानी को महल मे डेरा दो। भतीजा तो आँगन मे खेलता रहेगा, जिनसे मांडौ भर गया है। ७॥

हे सखी सहेलियो ! मंगल गाओ। आज मेरा मन बहुत प्रसन्न है। मेरा भाई आया है ॥८॥

हे नाइनो ! हे बारिनो ! अब मुँह-माँगा नेग लो। आज मेरा मन

बहुत प्रसन्न है। मेरा भाई आया है ॥६॥

[५०]

हे पाँच पान नौ नरियल।
सरगै जे बाटे आजा परपाजा,
दादा औ चाचा तुमरौ नेवता॥
भुइयाँ भवानी पाटन कै देवी,
बिजलेश्वरी माता काली माई,
डिवहार बाबा तुमरौ नेवता॥
बिंध्याचल कै देवी तुमरौ नेवता॥
घर क देवी शायर भवानी तुमरौ नेवता॥
साँप गोजर बीछी कूड़ी तुमरौ नेवता।
आँधी पानी लडाई झगडा,
डीमी धीगा तुमरौ नेवता॥
ओठ बिचकावनि भौंह सिकोरनि,
तुमरौ नेवता॥
इमरा त्रिसरा कन्या कुमारी,
तुमरौ नेवता॥
हे ओऊ जे अम्मा लाये जे अम्मा
बौरे है आजु॥
पाँच पान नौ नरियल।

यह गीत स्त्रियों का निमंत्रण-गीत है। ब्याह आदि शुभ-अवसरों पर कहीं-कहीं यह गाया जाता है।

इसमे 'ओठ बिचकावनि' और 'भौंह सिकोरनि' ये दो शब्द ख़ास ध्यान देने योग्य हैं। कुछ स्त्रियो का ऐसा स्वभाव होता है कि वे दूसरे की बढ़ती नही सह सकतीं। जब उनसे कोई किसी के यहाँ उत्सव आदि

होने का जिक्र करता है, तब वे बड़ी उपेक्षा से मुँह बिचका देती हैं या भौं मटका देती है। ऐसी स्त्रियों को भी इसलिये निमन्त्रण दिया गया है कि ये भी सन्तुष्ट रहें और विघ्न न डालें।

[५१]

आखि तोरी देखूँ ये दुलहा अमवा की फँकिया रे
भौंह तोरी चढली कमान रे।
यतनी सुरति तुहूँ पायो दुलरुआ केहि गुन रह्यो कुँआर रे॥ १॥
बाबा मोरे गयनि कमरू के देसवा रे पितिया गयनि
मेवाड रे।
जेठ भैया गयनि जीरा की लदनिया यहि गुन
रह्यो कुँआर रे॥ २॥
दखिन के देसवा से लिखि पढि आयूँ चिठिया
लिख्यो सगुझाय रे।
आवह बाबा रे आवह काका आवह सग जेठ भाइ रे॥ ३॥
बाबा मोरे लेइ आये मोहरा पचास रे पितिया लेइ
आये हाथी घोड रे।
जेठ भैया लायनि झारि पितम्बर अब मोरा रचा है बिआह रे॥ ४॥

हे दूल्हा! आँखें तो तुम्हारी आम की फाकों की तरह है, और भौंहें चढ़ी हुई कमान की तरह। हे प्यारे! तुमने इतनी सुन्दरता पाई है। पर तुम क्वारे क्यों रह गये?॥१॥

वर कहता है—मेरे बाबा कामरूप देश को गये थे। मेरे चचा मेवाड गये थे। जेठे भाई जीरा लादने गये थे। इस कारण से मैं क्वारा रह गया॥२॥

मैं दक्षिण देश से पढ़-लिखकर लौटा, तब मैंने सब को चिट्ठियाँ लिखीं कि बाबा आओ, काका आओ, जेठे सगे भाई आओ॥३॥

मेरे बाबा पचास मोहर लेकर आये। काका हाथी-घोड़ा ले आये। और जेठे भाई पीताम्बर ही पीताम्बर ले आये। अब मेरा विवाह हो रहा है ॥४॥

इस गीत से तो यह स्पष्ट ही मालूम होता है कि वर का विवाह तब हुआ था, जब वह दक्षिण से अच्छी तरह पढ़-लिखकर घर आया था और उसने स्वय पत्र लिखकर अपने बाबा, काका और भाई को बुलाया और अपने विवाह के लिये उनसे कहा। वह आजकल की तरह विवाह का खिलौना नहीं था।

[५८]

लाली तोरी अँखिया ए बाबू काली तोरी केस।
कौन लोभे ऐल्या ए बाबू देसवा के ओर ॥ १ ॥
मोरे देसे बाटी हो सासू अगुनी बहुत।
गुनिया लोभे ऐलीं ए सासू देसवा के ओर ॥ २ ॥
मैं तौसे पूछों ए बाबू हिरदै केरी बात।
कैसे कैसे रखब्या ए बाबू गुनिया केरे मोल ॥ ३ ॥
गुनिया के रखबै सासू हिरदैया लगाय।
मीठी मीठी बोलिया सासू मन हरि लेब ॥ ४ ॥

हे बाबू! तुम्हारी आँखे लाल-लाल है, केश काले है। तुम किस लोभ से इतनी दूर आये हो? ॥ १ ॥

हे सास! मेरे देश मे गुणहीन बहुत हैं। मैं गुणवन्ती की खोज मे इतनी दूर आया हूँ ॥ २ ॥

हे बाबू! मैं तुमसे हृदय की बात पूछती हूँ—तुम गुणवन्ती को कैसे रक्खोगे? ॥ ३ ॥

हे सास! मैं गुणवन्ती को हृदय से लगाकर रक्खूगा और मीठी-मीठी बातों से उसका मन हर लूँगा ॥ ४ ॥

वर गुणवन्ती की खोज में दूर-दूर तक फिरा था। वर को समाज में अधिकार था कि वह अपनी पसन्द के अनुसार अपनी जीवन-सहचरी को चुन ले। यह अधिकार न्याययुक्त था और आजकल भी वर और कन्या को ऐसा ही अधिकार मिलना चाहिये।

[५३]

मोरे के अँगना तुलसिया रे अरे पतवन झालरि रे।
तेहि तर ठाढ़ दुलह रामा दैवा मनावइँ रे॥ १॥
अरे का तू दैवा गरजौ अरे बिजुली तड़ापउ रे।
दैवा भिजतै बिआहन जाव पराई धेरिया बेहि लैबै रे॥ २॥
नदिया के ईरे तीरे दुलहा अरे दुलहा पुकारइँ रे।
ससुरा पठै देउ नैया नेवरिया मै तेहि चढ़ि आवउँ रे॥ ३॥
नाहीं मोरे नैया नेवरिया नाही मोरे केवट रे।
जो मोरी धेरिया क चाहै पइरि गगा आवइ रे॥ ४॥
भीजै मोरा अँग कै अँगरखा औ सिर कै पगड़िया हो।
ससुरा भीजै मोरा सोरहौ सिंगार तोहरे धेरिया के कारन हो॥ ५॥
देवै मै अँग कै अँगरखा औ सिर कै पगड़िया रे।
दुलरू देवै मै सोरहौ सिगार पइरि गगा आवहु रे॥ ६॥

मेरे आँगन मे तुलसी का वृक्ष है, जो पत्तो से खूब हरा भरा हो रहा है। उसके तले वर खड़ा है और दैव से कह रहा है॥ १॥

हे दैव! चाहे कितना ही गरजो और चाहे कितना ही चमको, मै भीगते ही विवाह करने जाऊंगा और दूसरे की कन्या को ब्याह कर लाऊंगा॥२॥

नदी के किनारे वर पुकार रहा है—हे ससुरजी! नाव भेज दीजिये। मै उस पर चढ़ कर उस पार आ जाऊं॥ ३॥

ससुर ने कहा— न मेरे नाव है, न केवट। जो मेरी कन्या चाहता है, उसे नदी तैर कर आना चाहिये॥ ४॥

वर कहता है—मेरा अगरखा भीग जायगा। मेरी पगड़ी भीग जायगी। हे ससुर! तुम्हारी कन्या के लिये मेरा सोलहो शृङ्गार भीग जायगा॥ ५॥

ससुर कहता है—भीगने दो। मैं अगरखा दूंगा। पगड़ी दूंगा। हे प्यारे! मैं शृङ्गार की सब सामग्री दूंगा यदि तुम गंगा तैरकर आओगे॥ ६॥

पूर्वकाल में विवाह होने के पहले वर की योग्यता की जांच की जाती थी। जैसे, रामायण में धनुर्भंग और महाभारत में लक्ष्य-वेध द्वारा जाँच की गई थी। गीतों के काल में वह प्रथा उठ-सी गई जान पड़ती है। उस समय सड़कें बहुत कम थीं और नदी पार करने के लिये हरएक व्यक्ति को तैरना जानना बहुत जरूरी समझा जाता रहा होगा। इसी लिये जनेऊ और विवाह के गीतों में तैरने की कला में निपुण होने की ओर संकेत किया गया है। इसी गीत में भी वही है।

[५४]

बाजत आवै ककरहिली के बाजन घुमरत आवै निसान।
राम लखन दूनौ पूछत आवै कौके जनक दरवाज॥ १॥
जनक दुवारे चनन बड रुखवा हथिनी बाँधी सब साठ।
भितिया तौ उनके रे चित्र उरेहे उहै जनक दरवाज॥ २॥
भितरों से निकरी है जनक कहारिन हाथे घइला मुख पान रे।
पनिया भरउँ मैं सब के रे रजवा बतिया न कहहुँ तुम्हारि॥ ३॥
मैं तुमसे पूँछौ जनक कहारिन किन यह चित्र उरेहु।
जवनी सीतल देई क ब्याहन आओ तिने यह चित्र उरेहु॥ ४॥
उठहु न दादुलि उठहु न राजा उठहु न कुँवर कँधाइ।
ऐसी सितल देई क हमना सो ब्याहउ करहिं बरइली क कारु॥ ५॥

ककरसिली (?) का बाजा बजता आ रहा है। घूमता हुआ झण्डा

आ रहा है। राम-लक्ष्मण दोनो पूछते आ रहे है, कि जनक का द्वार कौन-सा है ॥ १ ॥

जनक के दरवाजे पर चन्दन का बडा वृक्ष है। साठ हथिनिया बधी है। दीवारो पर चित्र अकित है। वही जनक का द्वार है ॥ २ ॥

भीतर से जनक की कहारिन निकली, जिसके हाथ मे घडा और मुंह मे पान है। वह कहती है—मै इस राजा के कई पीढी से पानी भरती आ रही हू। पर मै इस घर की बात किसी से कहती नही ॥ ३ ॥

राम ने पूछा—हे जनक की कहारिन ! मै तुम से पूछता हू कि यह चित्र किसने लिखा है ? कहारिन ने कहा—जिस सीता देवी को तुम ब्याहने आये हो, उसी ने यह चित्र लिखा है ॥ ४ ॥

राम कहते है—हे पिता ! उठो। हे राजा ! उठो। हे कुंवर कन्हैया ! उठो। ऐसी सीता का विवाह मुझसे करो ॥ ५ ॥

इस गीत मे दो बाते विशेष उल्लेखनीय है। एक तो कहारिन की दृढ़ता—वह कई पीढियो से पानी भरती आ रही है। घर का सब भेद जानती है, पर किसी से कहती नहीं। इस गीत मे अच्छे नौकरो का यह एक बडा सुन्दर लक्षण वर्णित है। चित्रकला का आदर—पूर्वकाल मे चित्रकला का ऐसा महत्व था कि जो कन्या अच्छा चित्र खीचना जानती थी, उसके अन्य गुणो के देखने की आवश्यकता नही समझी जाती थी। चित्राङ्कार देखकर ही लोग उस पर मुग्ध हो जाते थे।

[५५]

बाजत आवै ककरैला कै बाजन घुमड़त आवै निसान।
राम लखन दूनौ पूछत आवै कवन जनक दरबार ॥ १ ॥
गौवाँ के आसे पासे घन बँसवरिया आँगन नेबुला अनार।
भितिया तौ उनके रे पुतरी उरेही उहै होय जनक दुवार ॥ २ ॥

भितरॉ से निकरी है जनका कहारिन राम लिहिनि बुलवाय।
के यह पुतरी उरेहा कहारिन हमसे कहउ अरथाय ॥ ३ ॥
घर घर जनकजी पनियॉ भरावै हमसे दुतैया नाही होय।
आवति है राजा जनका कै बारिनि उनसे पूँछेव अरथाय ॥ ४ ॥
भितरॉ से निकसी है जनक कै बारिन राम लिहिन बुलवाय।
के यह पुतरी उरेहा है बारिन हमसे कहौ अरथाय ॥ ५ ॥
घर घर जनकजी पनरी देवावै हमसे दुतैया नाही होय।
आवति है राजा जनका कै नाउनि उनसे पूँछेव अरथाय ॥ ६ ॥
भितरा से निकसी है जनक कै नाउनि राम लिहिन बुलवाय।
के यह पुतरी उरेहा है नाउनि हमसे कहौ अरथाय ॥ ७ ॥
घर घर जनकजी विजय करावै हमसे दुतैया नाही होय।
जौने रानीयवॉ का व्याहन आयौ ते यह पुतरी उरेह ॥ ८ ॥

ककरैला (?) का बाजा बजता आ रहा है और झंडा लहराता आ रहा है। राम-लक्ष्मण दोनों भाई पूछते आ रहे है कि जनक का द्वार कौनसा है ? ॥१॥

गॉव के आसपास घनी बँसवारी (बाँसो का कुञ्ज) है। आँगन में नीबू और अनार लगे है। दीवारों पर चित्र बने हुये है। वही जनक का घर है ॥२॥

भीतर से जनक की कहारिन निकली। राम ने उसे बुलवा लिया और पूछा—हे कहारिन ! यह चित्र किसने बनाया है ? मुझे समझाकर कहो ॥३॥

कहारिन ने कहा—हे कुँवरजी ! मैं तो राजा जनक के घर में पानी भरती हूँ। मुझे इधर की बात उधर लगानी नहीं आती। राजा जनक की बारिन आती है। उससे अच्छी तरह पूछ लीजिये ॥४॥

भीतर से जनक की बारिन निकली। राम ने उसे बुलवाकर पूछा—

हे बारिन ! यह चित्र किसने बनाया है ? ॥५॥

बारिन ने कहा—मै तो राजा जनक के घर मे पत्तल देने का काम करती हूँ। मुझसे दूती का काम नही हो सकता। आप राजा जनक की नाइन से पूछ लीजिये। वह आ रही है ॥६॥

भीतर से राजा जनक की नाइन निकली। राम ने उसे बुलवाकर पूछा—हे नाइन ! यह चित्र किसने बनाया है ? ॥७॥

नाइन ने कहा—मै राजा जनक के घर मे रसोई जिमाने का काम करती हूँ। मुझसे दूती का काम नहीं हो सकता। आप जिस रानी को ब्याहने आये हैं, उसी ने यह चित्र बनाया है ॥८॥

कहारिन ने नही बताया, बारिन ने नही बताया, पर नाइन ने बता दिया। नाइन के पेट मे बात नही पचती। नाई-नाइन के इस स्वभाव से घबराकर चाणक्य को लिखना पडा था—

नराणा नापितो धूर्त

अर्थात् मनुष्यो मे नाई धूर्त होता है।

इस गीत मे एक ओर तो नाइन कही जाती है कि मुझसे दूती का काम नही हो सकता। दूसरी ओर धीरे से बताती भी जाती है कि किसने चित्र बनाया है।

मुख्य बात जो इस गीत से हमे मिलती है, वह है स्त्रियो मे चित्र-कला का प्रचार। पूर्वकाल मे चित्रकला हिन्दुओ के घर-घर मे थी। विवाह होने के पूर्व ही कन्या को इस कला मे दक्ष हो जाना पडता था।

[५६]

नदिया के ईरे तीरे दुलहे पुकारेल केवट नइया लेइ आउ रे।
केवट हो तू त यार हमारा रे हाली नेवरिआ लेइ आउ रे ॥१॥
अपटि झपटि केवटा नइआ ले आवेला झटपट पार उतारु रे।
तुहु त मोरे बाबू पार उतरी गइल के हमरे दाम चुकाइ रे ॥२॥

मतली हथिनिआ हमरे बाबा जे आवेले उहे तोहरे दाम चुकाइ रे।
अल्हरे बछेडवा हमरे भइआ जे आवेले उहे तोहरे दाम चुकाइ रे॥३॥
कब हम देखब बाग बगइचा रे कब हम देखब ससुरारि रे।
कब हम देखब रानी दुलहिनिआ हो नयना जइहै जुडाइ रे॥४॥
गोंईड़े देखब बाबू बाग बगइचा हो दुआरे देखब ससुरार रे।
मडवे देखब बाबू रानी दुलहिनिआ हो जेहि देखी हृदया जुडाइ रे॥५॥
मँड़ये मे धीर धीरे पुछेला कवन दुलहे सुन धन बचन हमारि रे।
कवनी है साली रे कवनी है सरहज कवनी हइ सासु हमारि रे॥६॥
लाल ओढन लाल डासन लाल परेला ओहार रे।
जेकरे लिलारे प्रभू सोने क टिकुलिआ हो उहे हइ भउजी हमारि रे॥७॥
हरिअर ओढन हरिअर डासन हरिअर परल ओहार रे।
जेकरे ही दांते प्रभु सोने क बतिसिआ हो उहै है बहिनी हमारि रे॥८॥
पीअर ओढ़न पीअर डासन पीअर परेला ओहार रे।
जेकरे ही नैना प्रभु नीर दुरतु है उहे है अम्माँ हमारि रे॥९॥

नदी के किनारे दुल्हा पुकार रहा है—हे केवट ! नाव ले आओ। जल्दी तैयार होकर नाव ले आओ॥१॥

हे केवट ! झपटकर नाव ले आओ और मुझे पार उतार दो। केवट ने दूल्हे को पार उतारकर कहा—हे बाबू ! आप तो पार उतर गये, अब मेरी उतराई कौन देगा ?॥२॥

दूल्हे ने कहा—मदमाती हथिनी पर मेरे पिता आ रहे है, वे उतराई देंगे। अल्हड़ बछेडे पर मेरे भाई आ रहे है, वे उतराई देंगे॥३॥

दूल्हा सोच रहा है—मैं बाग-बगीचे कब देखूँगा ? अपनी ससुराल कब देखूँगा ? दुलहिन रानी को कब देखूँगा ? जिसे देखकर मेरे नेत्र शीतल होंगे॥४॥

किसी ने कहा—हे बाबू ! गांव के पास पहुँचकर तुम बाग-बगीचा

देखोगे। घर के द्वार पर पहुँचकर ससुराल देखोगे। मंडप के नीचे दुलहिन रानी को देखोगे। जिसे देखकर तुम्हारा हृदय शीतल होगा ॥५॥

मंडप मे दूल्हा धीरे-धीरे दुलहिन से पूछने लगा—हे प्यारी स्त्री! मेरी बात सुन। मेरी साली कौन है? सरहज कौन है? और मेरी सास कौन है? ॥६॥

दुलहिन कहती है—जो लाल रग की ओढ़नी ओढ़े है, लाल ही जिसका बिछौना है, जिसके आगे लाल रग का परदा पडा है और जिसके माथे पर लाल रग की टिकुली (टीकी, बिन्दी) है, वह मेरी भौजी है ॥७॥

जो हरे रग की ओढ़नी ओढ़े है, हरे रंग का जिसका बिछौना है, जिसके आगे हरे रग का परदा पड़ा है, और जिसके बत्तीसो दाँत सोने से मढ़े है, वह मेरी बहन है ॥८॥

और जो पीला ओढ़े है, पीला बिछाये है, जिसके आगे पीला परदा पडा है और जिसकी आँखो से आँसू बह रहे है, वही मेरी माँ है ॥९॥

गीतो की दुनिया मे विवाह इतनी बड़ी अवस्था मे होता था कि वर-कन्या मडप के नीचे निस्सकोच होकर बाते कर सकते थे। इस गीत मे माँ का जो वर्णन कन्या ने किया है, वह बहुत ही स्वाभाविक है। बेटी के लिए माँ का प्रेम अद्‌भुद होता है।

[५७]

उवहु सुरुज मन उवहु सुरुज मन तुमहिं बिन जग अँधियार।
तुमहिं बिन गौवाँ खरिकवा न लेहै अहिरा दुहन नाहीं जाय॥ १॥
उठौ भैया साहेब उठौ भैया साहेब तुमहिं बिन माड़ौ सून।
तुमहिं बिन दुलहा चौक नाहीं बैठै तुमहिं बिन माड़ौ सून॥ २॥
तुमहिं बिन हथिया हौदवा न लेहै तुमहिं बिन माड़ौ सून।
उठौ बप्पा साहेब उठौ बप्पा साहेब तुमहिं बिन माड़ौ सून॥ ३॥

तुमहिं बिन दुलहा चौक नाहीं बैठै तुमहिं बिन माड़ौ सून।
तुमहिं बिन हथिया हौदवा न लेहै तुमहिं बिन माड़ौ सून॥ ४॥
उठौ फूफा साहेब उठौ फूफा साहेब तुमहिं बिन माडौ सून।
तुमहिं बिन दुलहा चौक नाही बैठै तुमहिं बिन माड़ौ सून॥ ५॥

हे सूर्यमणि! उदय हो, उदय हो। तुम्हारे बिना सारा संसार अंधकारमय है। तुम्हारे बिना गाये खरके (गोष्टी) मे न आयेंगी, और न अहीर उन्हे दुहने जायगा॥ १॥

हे भाई साहब! उठो, उठो। तुम्हारे बिना माडौ सूना है। तुम्हारे बिना दुलहा चौक मे नहीं बैठेगा और न हाथी पर हौद रक्खा जायगा। तुम्हारे बिना माडौ सूना है॥ २॥

यही पिता और फूफा के नाम से बार-बार दुहराया जाता है।

[५८]

दुअरे हे आवत दुलहा पुकारे सुनहु नउनी मोरी बात।
अरे के हई सासुरे के सगि सरहजि कवनी हई कामिन
हमारि॥ १॥
हाथी जे रँगल गोड़ जे रँगल रँगल बतिसवो दाँत।
अरे सारी राती सोहागे क मातल उहे हई कामिन तुहारि॥ २॥
सोने के थार मे आरति साजे उहे हई सासु तुहारि।
अरे पनवाँ हिं फुलवा क सेजिआ बिछावे उहे हई सरहज
तुहारि॥ ३॥
कोहबर आवत दुलहा पुकारे सुन सरहज मोरी बात।
अरे बारी ननदिआ क यह गति देखिहु ठाढ़ी रहेले मुरुझाय॥ ४॥
तब जाइ भउजी रे ननदी सिखवलीं सुनहु ननद मोरी बात।
अरे पुरुपु भँवरवा के बेनिआ डोलावौ अचरन करहु बयारि॥ ५॥

तूँ भौजी भैया क जाइ सिखावहु भउजि न करहु दुताइ।
अरे जैसे हे फूल फले फुलवरिआँ भँवरा रहँसि रस लेइ।
वैसहीं भउजि रे तोर ननदोइआ बिहँसत बिरओ न लेइ॥ ६॥

द्वार पर आकर दूल्हे ने कहा—हे नाइन! मेरी बात सुन। ससुराल मे मेरी सगी सरहज कौन है? और मेरी कामिनी कौन है॥ १॥

नाइन ने कहा—जिसके हाथ मेहँदी से रँगे है, जिसके पैर महावर से रँगे है, और जिसके बत्तीसो दांत रँगे है, जो सारी रात सोहाग के मद से मतवाली थी, वही तुम्हारी कामिनी है॥ २॥

सोने के थाल मे जो आरती सजा रही है, वे तुम्हारी सास हैं। और जो पान और फूल की सेज बिछा रही हैं, वह तुम्हारी सरहज (साले की स्त्री) हैं॥ ३॥

कोहबर मे आकर दूल्हे ने कहा—हे सरहज! मेरी बात सुनो। अपनी किशोरी उमरवाली ननद का हाल तो देखो, खडी-खडी मुरझा रही है॥ ४॥

तब सहरज ने ननद को जाकर समझाया। हे ननद! मेरी बात सुनो। भ्रमररूपी पति को पखा हांको और आँचल से हवा करो॥ ५॥

ननद ने कहा—हे भौजी! बहुत दुताई (कुटनीपन) मत करो। जाकर भैया को सिखाओ। जैसे फूल फुलवाडी मे फूलता है और भौंरा आनंद से रस लेता है, वैसे ही हे भौजी! तेरा यह ननदोई हंसता है, और बीडा देती है, तो नही लेता॥ ६॥

यह विनोद है। प्रेमरस से पूर्ण है। इसमे युवावस्था मे विवाहित स्त्री-पुरुष का वाग्विलास है।

[५६]

पाने क पात झलामिल बाबा सासू निहारै दमाद।
कौन दुलहा कौन जेठ भैया कवन दुलहा जी के बाप॥ १॥

छोटी मोटी हथिनी माहवत बाबा सोनवाँ मिढ़ल दूनौ दाँत।
सोने कै छत्र विराजति आवै वै होयें दुल्हाजी के बाप॥ २॥
पातल घोड़वा पतल असवारा बाँधे सतरँगिया कै पाग।
दाते बतिसिया गले मोहनमाला वई होयँ दुलहा जिव कै
जेठ भाय॥ ३॥
छोट मोट डँडिया चनन केर बाबा छोटै छोट चारि कहाँर।
माथे पर मौर झलाकत आवै वई हायँ दुलरू दमाद
देखि लेव दुलरू दमाद॥ ४॥

झिलमिलाते हुए पान के पत्ते की ओट से सासु दामाद को देख रही है और पूछती है—दूल्हा कौन है? दुल्हे का जेठा भाई कौन है? और दुल्हे का बाप कौन है?॥ १॥

छोटी सी मतवाली हथिनी है। उसके दोनो दाँत सोने से मढ़े हुये हैं। उस पर जो सवार है और जिनके ऊपर सोने का छत्र सुशोभित है, वही दूल्हाजी के पिता है॥ २॥

पतले घोडे पर जो पतला सवार है और जो सतरंगी पाग बाँधे है, जिसके दोतो मे बतीसी लगी है, जिसके गले मे मोहन माला लटक रही है, वही दूल्हाजी के जेठे भाई है॥ ३॥

छोटी सी पालकी को चार छोटे-छोटे कहार उठाये हुए है। उसमे जो सवार है, और जिनके माथे पर मौर झलक रहा है, वही प्यारे दामाद हैं। प्यारे दामाद को देख लो॥ ४॥

इसमे दूल्हा, उसके बाप और जेठे भाई की शोभा का वर्णन है।

[६०]

हाथी मैं साजौ घौड़ा मैं साजौ साजिले मुलुक पचास हे।
एक मैं सजिले राजा दुलह बाबू जैसे दुजी के चाँद हे॥१॥

ाट मिलिये गैली सालिनि बिटिया कहु मालिन साँची
बात हे।
ौन हई सासु कवन हई सरहज कौन हई कामिनी हमार हे ॥२॥
ोने के मुसरा जिनहीं घुमावेली उहे हई सासु तोहार हे।
ान के बीडा जिनहीं खियावेली सेहि हई सरहज तोहार हे ॥३॥
ाथ मेहदी पाँव मेहँदी दाँत बतीसो लाल हे।
सिर पर ओढ़े कुसुम रँग चादर सेहि हई कामिनी तोहार हे ॥४॥

मैने हाथी सजाया, घोडा सजाया, पचासो देशो के लोगो से बारात सजाई, तथा अपने एक दूल्हे राजा को सजाया जो द्वितीया के चन्द्रमा की तरह सुन्दर है ॥ १ ॥

रास्ते मे मालिन की कन्या मिली। दूल्हे ने पूछा—हे मालिन ! सच बता, कौन मेरी सास है ? कौन मेरी सरहज (साले की स्त्री) ? और कौन मेरी कामिनी है ? ॥ २ ॥

मालिन की कन्या ने कहा—सोने का मुशल हाथ मे लेकर जो घुमा रही है, वही आपकी सास है। जो पान का बीड़ा खिला रही हैं, वह आपकी सरहज है ॥ ३ ॥

जिनके हाथ-पाँव मेहँदी मे लाल है, जिनके बत्तीसो दाँत लाल है, और जो सिर पर कुसुम्मी रंग की चादर ओढ़े है, वही आपकी कामिनी है ॥ ४ ॥

द्वार-पूजा के समय सास मुशल लेकर वर के ऊपर से घुमाती है, इसे परछन करना कहते है।

दाँत रगने की प्रथा स्त्रियो मे बहुत पुरानी जान पड़ती है। युक्तप्रांत मे ही यह रिवाज ज्यादा है।

[६१]

सोने के पिढ़वाँ रे राम नहइलेनी झटकीला लम्बी हीं केस रे।
निकली न आवहु माई कवसिल्या देई राम क अरती उतारु रे ॥१॥
का मैं राम क अरती उतारउँ मन मोर बहुत उदास रे।
आजु क रतियाँ मै कैसे बितइबई राम चलेन ससुरार रे ॥२॥
जिन माई ऊमिल जिन माई धूमिल जिन मन करहु उदास रे।
अ जु की रतियाँ जनक के दुअरवाँ काल होबै दास तोहार रे ॥३॥
जब राजा राम बिआहन चललेन माता सूरुज माथ नाव रे।
राम बिअही जब घर के लवटिहै तोहै देबै दुधवा क धार रे ॥४॥
भइल बिआह परल सिर सेन्दुर हाथ जोडी सीता ठाढ रे।
अइसन आसीप दीहेउ मोरे बाबा लेलसो अजोध्या क राज रे ॥५॥
दुधवा नहायो बेटी पुतवन फलेऊ कोखियन झालर लागु रे।
बरह बरिस राम बन के सिधरिहै तोहके रवन हर लेइ रे ॥६॥
बाउर भइल तू बाबा जनक रिखि के तोर हरला गेयान रे।
इहई बचन बाबा अगुमन बोलतेउ मरतिउँ जहर विष खाइ रे ॥७॥
बाउर भइलू तू बेटी रे सीता देई केन तोर हरला गेयान रे।
जो कुछ लिखल बेटी तोहरे लिलरवाँ से कैसे मेटल जाइ रे ॥८॥
जब बरिअतिया अवधपुर मे आइली माता सूरुज माथ नाव रे।
पुतवा पतोहिया नयन भर देखेउँ धन धन भाग हमार रे ॥९॥
मिलहु न सखिया रे मिलहु सहेलरि मिलहु सकल रनवास रे।
जस जस मोरे माता अरती उतारई राम नयन ढूरै आँसु रे ॥१०॥
किया तोहै राम जनक गरियवले किया तोर दायज थोर रे।
किया तोर राम सीता नाहीं सुन्दर काहे नयन ढूरै आँसु रे ॥११॥
नाहीं मोरी माता जनक गरियवले नाही मोर दायज थोर रे।
नाहीं मोर माता सीता नाही सुन्दर समुझि नयन ढूरै आँसु रे ॥१२॥

सोने के सिंधोरवाँ माई सीता बिअहली दायज मिलल तीन लोक रे।
लछमी सीता रानी मोर घर आइनि हमके लिखल बनबास रे ॥१३॥

सोने के पीढ़े (पाटे, छोटी चौकी) पर राम ने स्नान किया है। वह अपने लंबे बालों को झटक रहे है। हे कौशिल्या माता ! तुम निकल क्यों नहीं आती ? आकर राम की आरती उतारो ॥ १ ॥

कौशिल्या कहती है—मै राम की आरती क्या उतारू ? आज मेरा मन बहुत ही उदास है। हाय ! मै आज की रात कैसे बिताऊँगी ? आज राम सुसराल जायगे ॥ २ ॥

राम कहते है—हे माँ ! मन को धूमिल न करो। उदास मत हो। आज की रात तो मै जनक के द्वार पर बिताऊँगा और कल तुम्हारी सेवा मे हाज़िर रहूगा ॥ ३ ॥

राम जब ब्याह करने चले, तब माता ने सूर्य देवता को माथ नवाया और कहा—हे सूर्य ! राम विवाह करके सकुशल घर लौट आयेगे तो मै तुमको दूध की धार चढाऊँगी ॥ ४ ॥

ब्याह हो गया। सिर मे सिंदूर पड गया। सीता हाथ जोडकर खड़ी हुई और अपने पिता जनक से प्रार्थना करने लगी—हे पिता ! ऐसा आशीर्वाद देना, जिससे मै अयोध्या का राज सुख से भोगूँ ॥५॥

जनक ने कहा—हे बेटी ! दूध से नहाओ, पुत्रो से फलो, बहुत संतानवाली होओ। पर बारह वर्ष के बाद राम बनको जायेगे और तुमको रावण हर ले जायगा ॥ ६ ॥

सीता ने कहा—हे पिता जनक राजर्षि ! तुम भोले हुये हो क्या ? किसने तुम्हारा ज्ञान हर लिया है ? तुम यही बात पहले बोलते तो मै विष खाकर मर जाती न ? ॥ ७ ॥

जनक ने कहा—बेटी ! तू बावली हुई है क्या ? तेरी बुद्धि किसने हर ली है ? अरी बेटी ! जो कुछ तेरे ललाट पर लिखा है, वह कैसे

मेटा जा सकता है ? ॥ ८ ॥

जब बारात अयोध्या मे आयी, तब माता ने सूर्य को सिर नवाया और कहा—मैने आँख भरकर अपने और पतोहू को देखा, मेरा भाग्य धन्य है ॥ ९ ॥

हे सखियो ! आओ न ? सब रनिवास मिलकर आओ न ? देखो ! माता जैसे-जैसे आरती उतार रही हैं, वैसे-वैसे राम के आँसू दुर रहे हैं ॥ १० ॥

कौशिल्या ने पूछा—बेटा ! क्या तुमको जनक ने गाली दी है ? या दहेज कम मिला है ? या तुम्हारी सीता सुन्दरी नही है ? आँसू क्यो दुर रहे है ? ॥ ११ ॥

राम ने कहा—हे माता ! न तो जनक ने गाली दी, न दहेज ही कम मिला और न सीता ही कुरूपा है। एक बात याद करके आँखो से आँसू गिर रहे हैं ॥ १२ ॥

सीता का विवाह सोने के सिधोरे (सिदूर रखने का पात्र) से हुआ। तीनो लोक मुझे दहेज मे मिले। और लक्ष्मी के सामान रानी सीता मेरे घर आईं। पर मुझे बनवास लिखा है ॥ १३ ॥

[६२]

कोइली जे बोले अमवा केरा बगिया भौरा बोलले कचनार जी।
दुलरइता दुलहा ससुर जी के बगिया,
हाथे धनुष मुख पान जी ॥ १ ॥
काहे लोभ गैलो बबुआ अमवा की बगिया,
काहे लोभ गैलो ससुरार जी।
अमवा लोभे गइलूँ अम्मा अमवा की बगिया
धनी लोभे गैलूँ ससुरार जी ॥ २ ॥
क्या क्या खैलो बाबू अमवा की बगिया

क्या क्या खैलो ससुरार जी ।
अमवा फलल खैलूँ अमवा की बगिया
खाँड़ दूध खैलूँ ससुरार जी ॥ ३ ॥
नवईं महीना तोहिं बाबू कोखिया रखबूँ
अवरू दस दुधवा पिलाय जी ।
दूध पानी बाबू एकौ न दिहले कइसे चिन्हल ससुरार जी ॥ ४ ॥
दूध पानी अम्मा जबै हम दीहब जबै धनी लैबौ लिआय जी ।
हमहूँ जे होइबों अम्मा बाबू जी सेवकिया
धनी होइबो दासी तोहार जी ॥ ५ ॥

कोयल आम के बाग मे बोल रही है और भौरा कचनार के वृक्ष पर बोल रहा है। प्यारे दूल्हा ससुर जी के बाग मे बोल रहे है, जिनके हाथ मे धनुष और मुँह मे पान है ॥ १ ॥

हे बेटा ! तुम किस लोभ से आम के बाग मे गये थे ? और किस लोभ से सुसराल गये थे ? पुत्र ने कहा—हे माँ ! आम के लिये मै बाग गया था और स्त्री के लिये ससुराल गया था ॥ २ ॥

माँ ने पूछा—हे बेटा ! आम की बाग मे क्या खाया ? और ससुराल मे क्या खाया ? बेटे ने कहा—आम के बाग मे आम फले थे, वहाँ आम खाया। और ससुराल मे दूध और खाँड खाया ॥ ३ ॥

माँ ने कहा—हे बेटा ! नौ महीने मैने तुमको पेट मे रक्खा और दस महीने दूध पिलाया। तुमने बदले मे न हमको दूध ही दिया, न पानी ही। तुमने ससुराल को कैसे पहचाना ? ॥ ४ ॥

पुत्र ने कहा—हे माँ ! मै तुमको दूध और पानी देने के लिये ही स्त्री को लिवा लाना चाहता हूँ। मैं पिताजी की सेवा करुँगा और मेरी स्त्री तुम्हारी दासी होकर रहेगी ॥ ५ ॥

पुत्र का लक्ष्य कितना सुन्दर है !

[६३]

केथुवन छाइला अरइल खरइल केथुवन छाइला प्रयाग हो।
केथुन छाइला इहे गज ओबरि भँवरा पइठि मननाइ हो॥ १॥
पनवन छाइला अरइला खरइल फुलवन छाइला प्रयाग हो।
बेतवन छाइला इहे गज ओबरि भँवरा पइठि मननाइ हो॥ २॥
तहँ पईठी सुतेल दुलरू कवन रामा पयते कवनि देई रानि हो।
मोही तोसे पुछेलो ससुरजी के धेरिया हो काहे तोर
बदन मलीन हो॥ ३॥
माई तोहारि प्रभु मारे गरियावे बहिनी बोलेली बिरही
बोल हो।
लहुरा देवर मारेला लाली छरियवा वोही गुन
बदन मलीन हो॥ ४॥
माई के बेचबों धनी हाटी बजरिया बहिनी बिदेसिआ
के हाथ हो।
भइया के मारौ धनी रतुली कमनियाँ हम तुहँ बेल-
सब राज हो॥ ५॥
माई तोहार प्रभु जी सिर कै पछेवड़ा हो बहिनी तोहारि
सिर पाग हो।
भइया तोहार साहेब दाहिनि बँहियाँ हम तरवा कइ धूरि हो॥ ६॥

अरैल (प्रयाग के निकट एक स्थान) किससे छाया है ? प्रयाग किससे छाया है ? और यह कोठरी किससे छाई है ? जिसमे भौरा प्रवेश कर के गुञ्जार करता है ॥१॥

अरैल पान से छाया है। प्रयाग फूल से छाया है। और यह कोठरी बेतो से छाई है, जिसमे भौरा प्रवेश करके गुञ्जार करता है ॥२॥

उस कोठरी मे प्रवेश करके दुलारे श्रमुकराम सोते हैं। जिनके पैरो

के पास अमुकदेवी बैठकर सेवा कर रही हैं। पति पूछता है—हे मेरे ससुरजी की कन्या ! मैं तुझसे पूछता हूँ—तेरा मुँह उदास क्यो है ? ॥३॥

स्त्री ने कहा—हे प्रियतम ! तुम्हारी माँ मारती हैं और गाली देती है। तुम्हारी बहन ताने मारती है। तुम्हारा छोटा भाई लाल छड़ी से मारता है। इसी कारण से मै उदास रहती हूं ॥४॥

पति ने कहा—हे प्यारी स्त्री ! मैं माँ को बाजार मे बेच दूंगा। बहन को किसी परदेशी को दे डालूँगा। भाई को लाल कमान से मार डालूँगा और हम तुम सुख से राज भोगेगे ॥५॥

स्त्री ने कहा—हे प्रियतम ! माँ तो तुम्हारे सिर की पछेवडा (?) है। बहन तुम्हारे सिर की पगड़ी है। और भाई तो हे मेरे मालिक ! तुम्हारी दाहिनी भुजा है। मै तुम्हारे पैरो की धूल हूँ ॥६॥

उत्तेचित पति को बहू ने कैसी नम्रता से शांत किया है। ऐसी ही बहुओ से गृहस्थी की शोभा है।

[६४]

बना मेरो कुञ्जन से बनि आये—बना मेरो।
सिरे सोहै मलमल की पगिया मौरा मे छबि आई—बना मेरो ॥१॥
माथे सोहै मलयागिरि चन्दन सुरमा मे छबि आई—बना मेरो ॥२॥
काने सोहै सूरत को मोती चुन्नी मे छबि आई—बना मेरो ॥३॥
अगे सोहै खासे का जोड़ा नीमा मे छबि आई—बना मेरो ॥४॥
फांडे सोहै गुजराती फेटा लरिया मे छबि आई—बना मेरो ॥५॥
पायँ सोहै सकलाती जूता मोजे मे छबि आई—बना मेरो ॥६॥

आज मेरा दूलहा कुञ्ज मे से शृङ्गार करके आया है।

दूल्हे के सिर पर मलमल की पगड़ी सुशोभित है। मौर मे छबि आ गई है ॥१॥

माथे पर मलयगिरि का चंदन सुशोभित है। सुर्मे मे शोभा आई हुई है ॥२॥

कान मे सूरत का मोती सुशोभित है। चुन्नी मे रूपा खिल पड़ा है ॥३॥

कमर मे गुजराती फेटा सुशोभित है। दुपट्टे मे सौन्दर्य उमड़ पड़ा है ॥४॥

बदन मे खासे का जोडा सुशोभित है। नीमा मे मनोहरता है ॥५॥

पैर मे मखमल का जूता सुशोभित है। मोजे मे लावण्य आ गया है ॥६॥

इस गीत मे दो तीन बातें विशेष ध्यान देने की है। एक तो उन स्थानो के नाम, जहाँ की ख़ास-ख़ास चीज़ें मशहूर थी। जैसे गुजरात का फेटा और सूरत का मोती। गीतो के ज़माने मे युक्तप्रांत मे गुजरात से फेंटे बनकर आते होगे और गाँव-गाँव मे प्रसिद्धि पाये होगे। सूरत के जौहरी तो अब भी प्रसिद्ध है। वहाँ से मोती इधर आते रहे होगे। दूसरे सकलाती शब्द। यह शब्द बहुत पुराना है। पृथीराजरासो मे इस शब्द का प्रयोग मिलता है। जैसे—

तिनं पक्खरं पीठ हय जीन सालं।
फिरंगी कती पास सुकलात लालं॥

अर्थात् उनके घोड़ो की काठियो के जीन ऊनी शाल के थे। कितने ही फिरंगियो के पास लाल मखमल के जीन थे।

सकलात अंग्रेज़ी के Scarlet Cloth का अपभ्रंश जान पड़ता है। विलायती लाल रंग का मख़मल, जान पड़ता है, जो भारत मे रासो की रचना के समय ही से आने लगा था और गाँव-गाँव मे अपने अपभ्रंश-रूप 'सकलात' के नाम से प्रसिद्ध हुआ था। ईस्ट-इण्डिया-कम्पनी के काग़ज़ों मे Scarlet Cloth का ज़िक्र बारंबार आया है। कम्पनी

का राज गया, पर गीतों मे उसका यह शब्द अभी तक पाया जाता है।

[६५]

जाने न देवँ बर पकड़ि रखौगी।
मैं तेरे दिल मे बसौगी॥
हाँ हाँ रे बने तेरे सिर कै पगिया होगी।
पेचा होइके रहँसि रहोंगी—मै तेरे दिल मे बसौगी॥
जाने न देवँ बर पकडि रखौगी॥ १॥
हाँ हाँ रे बने तेरे माथे कै चन्दन होंगी।
सुर्मा होइ कै रहँसि रहौगी—मैं तेरे दिल मे बसौगी॥
जाने न देवँ बर पकड़ि रखौगी॥ २॥
हाँ हाँ रे बने तेरे काने कै मोती होंगी।
चुन्नी होइ कै रहँसि रहौगी—मैं तेरे दिल मे बसौगी॥
जाने न देवँ बर पकड़ि रखौगी॥ ३॥
हाँ हाँ बने तेरे फाड़े कै फेटा होगी।
पटुका होइ कै रहँसि रहौगी—मै तेरे दिल मे बसौगी॥
जाने न देवँ बर पकड़ि रखौगी॥ ४॥
हाँ हाँ रे बने तेरे पाँये कै मोजा होंगी।
मेहँदी होइ कै रहँसि रहौगीं—मैं तेरे दिल मे बसौगी॥
जाने न देवँ बर पकड़ि रखौगी॥ ५॥
हाँ हाँ रे बने तेरे सेज कै चन्दा होंगी।
चन्दा होइ कै छिटकि रहौगीं—मैं तेरे दिल मे बसौगीं॥
जाने न देवँ बर पकड़ि रखौगी॥ ६॥

मैं वर को जाने न दूँगी, पकड़कर रक्खूँगी। हे वर! मैं तेरे दिल मे बसूँगी।

हे वर! मैं तेरे सिर की पगड़ी होऊँगी और पगड़ी की पेंच होकर

मगन रहूँगी। मै तेरे दिल मे बसूँगी ॥१॥

हे वर ! मै तेरे माथे का चन्दन होकर रहूँगी। मै तेरी आँखो मे सुर्मा होकर रहूगी। तेरे दिल मे बसूँगी ॥२॥

हे वर ! मै तेरे कान का मोती होऊँगी। मै चुन्नी होकर मगन रहूँगी। मै तेरे दिल मे बसूँगी ॥३॥

तेरे वर ! मैं तेरे फाँड का फेंटा होऊँगी। दुपट्टा होकर मै मगन रहूँगी। मै तेरे दिल मे बसूँगी ॥४॥

हे वर ! मै तेरे पैर का मोज़ा होऊँगी। मै मेहँदी होकर मगन रहूँगी। मै तेरे दिल मे बसूँगी ॥५॥

हे वर ! मैं तेरे सेज की चांद होऊँगी। चांद होकर मै छिटक रहूँगी। मै तेरे दिल मे बसूँगी ॥६॥

दुलहिन की कैसी सुन्दर भावना है !

[६६]

आज सोहाग कै रात चंदा तुम उइहौ।
चदा तुम उइहो सुरुज मनि उइहौ॥ १॥
मोर हिरदा बिरस जनि किहेउ मुरुग मति बोलेउ।
मोर छतिया बिहरि जनि जाइ तु पह जिनि फाटेउ॥ २॥
आजु करहु बड़ी राति चदा तुम उइहौ।
धिरे धिरे चलि मोरा सुरुज बिलम करि अइहौ॥ ३॥

आज सोहाग की रात है। हे चन्द्र ! तुम उदय होना। पर हे सूर्य ! तुम उदय मत होना ॥ १ ॥

हे मुर्गे ! तुम आज न बोलना। बोलकर मेरे हृदय को विरस मत करना। हे पौ ! तुम आज न फटना। कही मेरी छाती न फट जाय ॥ २ ॥

हे चाँद ! तुम आज बड़ी रात करना और उदय होना। हे मेरे सूर्य ! तुम आज धीरे-धीरे चलकर देर से आना ॥ ३ ॥

इसे लिखते समय मुझे 'प्रवीण राय' का यह कवित्त याद आया था—

कूर कुरकुट कोटि कोठरी निवारि राखौं,
चुनि दै चिरैयन को मूँदि राखौं जलियो।
सारँग मे सारँग सुनाइ के 'प्रवीन' बीना
सारँग दै सारँग की जोति करौं थलियो॥
बैठि परयक पै निमक ह्वै कै अक भरौं
करोगी अधर पान मैन मन्त्र मिलियो।
मोहि मिले इन्द्रजीत धीरज नरिन्द्र राय
एहो चद आज नेकु मदगति चलियो॥

[६७]

नाहक गौन दिहे मोर बाबा बालक कत हमार रे।
चीलर अस दुइ देवर हमरे बलमा मुसे अनुहार रे॥ १॥
तेलवा लगायउँ बुकउवा लगायउँ खटिया पदिहेउँ ओलारि रे।
नेपे नेपे आइ बिलरिया सवतिया लै गई बलमा हमार रे॥ २॥
सासु मोरी रोवै ननद मोरि रोवै रोवइ हमारि बलाइ रे।
कोठवा मै ढूँढेउँ अटरिया मै ढूँढ़ेउँ खटिया तरे रिरिआइ रे॥ ३॥

मेरे बाबा ने मेरा गौना नाहक ही किया। मेरा पति तो अभी बिल्कुल बालक है। मेरे दो देवर है, जो चीलर (कपड़े की सफेद जूँ) जैसे है, और मेरा पति चूहे की तरह है॥ १॥

मैने पति को उबटन लगाया, तेल लगाया और खाट पर सुला दिया। हाय! बिल्ली सौत की तरह चुपके-चुपके आई और मेरे पति को उठा ले गई॥ २॥

मेरी सास रो रही है। मेरी ननद रो रही है। मै क्यो रोऊँ? मेरी बला रोवे। अत मे मैने भी कोठे पर ढूँढ़ा, अटा पर खोजा तो देखा कि पति खाट के नीचे पड़ा रिरिआ रहा है॥ ३॥

राम ! राम ! पति का इससे अधिक वीभत्स चित्र कोई क्या खीचेगा ? इस गीत की स्त्री युवती है, पति बालक । ऐसे अनमेल विवाह का जो परिणाम होना चाहिये, वह 'रोवइ हमारि बलाय' मे साफ-साफ उतर आया है । पति के लिये स्त्री के हृदय मे कोई सहानुभूति नहीं है । ऐसे बेमेल विवाहों मे धर्म की रक्षा धर्म-शास्त्र कहाँ तक कर सकेगा ? यह विचारणीय है ।

[६८]

पाँच बरिसवा कै मोरि रँगरैली असिया बरिस क दमाद ।
निकरि न आवै तू मोरि रँगरैली अजगर ठाढ दुवार ॥ १ ॥
आँगन किचकिच भीतर किचकिच बुढऊ गिरे मुह बाय ।
सात सखी मिलि बुढऊ उचावै बुढऊ सेंदुर पहिराव ॥ २ ॥

पाँच बरस की प्यार मे पली हुई मेरी कन्या है और अस्सी वर्ष का दामाद है । ऐ प्यार मे पली हुई मेरी बेटी ! बाहर निकल आओ न ? देखो, द्वार पर अजगर खडा है ॥१॥

आँगन मे कीचड, भीतर भी कीचड । बुड्ढा दामाद मुँह बाकर गिर पडा । सात सखियाँ मिलकर उस बुड्ढे को ऊँचा कर रही है । और कहती है, बुड्ढे ! कन्या के सिर मे सिदूर तो लगा दे ॥२॥

इस गीत मे वृद्ध विवाह का मजाक उड़ाया गया है । बुड्ढे को अजगर बताना बडा सरस और अर्थ-पूर्ण है । जैसे अजगर चल फिर नहीं सकता वैसे बुड्ढा भी । जैसे अजगर शिकार को निगल जाता है । वैसे ही बुड्ढा भी अबोध कन्या के जीवन को निगल जायगा ।

[६९]

बनवारी हो, हमरा के लरिका भतार ॥
लरिका भतार लेके सुतलीं ओसरवाँ ।
बनवारी हो, रहरी मे बोलेला सियार ॥ १ ॥

खोले के तो चोली बंद खोले ला केवार।
बनवारी हो, जरि गैले एंडी से कपार॥ २॥
रहरी मे सुनि के सियरा कै बोलिया।
बनवारी हो, रोवे लगले लरिका भतार॥ ३॥
अँगना से माई अइलीं, दुअरा से बहिना।
बनवारी हो, के मारल बबुआ हमार॥ ४॥

हे बनवारी ! मेरा स्वामी लडका है। ओसारे मे मैं उसे लेकर सोई। उसी समय सियार अरहर के खेत मे बोला॥१॥

खोलना तो था चोली का बद। वह खोलने लगा केवाड़ा। मेरा तो एँडी से कपाल तक जल उठा॥२॥

अरहर के खेत मे सियार की बोली सुनकर वह तो रोने लगा॥३॥

आँगन से मा दौडी, बाहर से बहन, किसने मेरे बबुआ को मारा है॥४॥

यह बालक पति के साथ एक युवती बहू की मनो-वेदना का चित्र है।

[७०]

मोरे पिछवरवाँ बाँस बसेरी कोइली लीन्ह बसेर।
छोडउ न कोइली मोरा पिछवरवा जाव नदन बन लेउ॥ १॥
मँडवन मँडवन घूमै दूलहे राम बाप कोइल हम लेब।
कोइली बेटे न माटी की मिलिहै ना चढ़ि हाट बिकायँ॥ २॥
कोइली तो होइहै समधीजी के मँड़ये जिन घर कन्या कुवांरि।
गलियन गलियन घूमै दुलहे राम कौन है ससुर दुवार।
सोने के कलस पर दियना जरत है वह देखो ससुर दुवार॥ ३॥
मँड़वे की थूनी लागे ठाढ़ि दुलहिन देई दुलहे जो पूछत बात।
तुम्हरे दादुलिजी के सोने धौराहर हमहें का देव बसेर॥ ४॥

(मुरादाबाद)

मेरे पिछवाडे बँसवारी है, जिसमे कोयल ने बसेरा लिया है। हे कोयल ! तुम मेरा पिछवाड़ा छोडकर जाकर नंदनवन मे बसेरा लो न ? ॥१॥

अमुक राम (वर का नाम) मौंडो मौंडो घूम रहे है। हे बाप ! मैं कोयल लूँगा। बेटा ! कोयल न मिट्टी की बनती है, न बाजार मे बिकती है। कोयल तो समधीजी के मौंडो के नीचे मिलेगी, जिनके घर मे कन्या कुमारी है ॥२॥

दूल्हाराम गली-गली मे घूम रहे हैं, और पूछ रहे है कि ससुरजी का द्वार कौन है ?

सोने के मुँड़ेर पर दिया जल रहा है, वही ससुरजी का द्वार है ॥३॥

मौंड़ो की थून से लगकर दुलहिन खडी है। दूल्हे ने कहा—तुम्हारे पिता के घर का धौराहर सोने का है, उसमे मुझे भी बसेरा लेने दो ॥४॥

इस गीत मे दूल्हा दुलहिन स्वयं अपनी जोडी चुन रहे है।

[७१]

कनक दियट दियना बरै, दियना बरा है आकास।
आहो दूलह दूलही गज चौकी।
दूलह के चीरा सोनहूला जैसे सझा पलास कै टेस्,
अहो रँगहु न बाबुल खिचड़िया ॥ १ ॥
ससुर मनावन वै चले बाबुल लेहु न गजवा पचास
से हाथ उठावहू न।
गज धरि राखउ गजसार मे हमरे गज है अनेक
बाबा नाही भूखल हाथी हउद के ॥ २ ॥
सार मनावन वै चले जीजा लेहु न तुरङ्ग पचास
आहो हाथ उठावहू भई देर मे।

धरि राखउ घोड घोड़सार मे हमरे घोड़े है अनेक
बाबू भूखे नहीं हम घोडे जीन को ॥ ३ ॥
सासु मनावन वै चली बाबुल लेहु न मानिक मुंदरिया
से हथवा उठावहु न ।
धरि राखउ हीरा मोती सासु जी हीरन भरा है अमार
आहो नहीं भूखे मुंदरी माल के ॥ ४ ॥
सरहज मनावन वै चली बाबुल लेहु न हथना बिजायट
से हाथ उठावहु न ।
धरि राखउ अपना बिजायट, गहनन भरी है सदूक
बीबी नाहीं बिजायट साध है ॥ ५ ॥
सारी मनावन वै चली जीजा हमरे न फुटही कउडिया
का तोहरे भेट दे ।
जीजा आपन याद देइ जाहू आहो जीजा अपने परेम
भेट देऊँ से हथवा उठावहु न ॥ ६ ॥
इतना वचन नौसे सुनलै आहो सुनहु न पवलै
से चौकी बइठ जेवना स जेवलै से पान लेइ द्वारे गये ॥ ७ ॥

(पीलीभीत)

सोने की दीयटि पर दिया जल रहा है । दिया आकाश मे जल रहा है । अहो ! दूल्हा दुलहिन गज-चौकी पर है ।

दूल्हे के सिर का चीरा सुनहले रग का है, जैसे शाम के वक्त ढाक का फूल । हे पिता ! उसे खिचड़ी रङ्ग से रङ्ग दो न ? ॥१॥

ससुर मनाने चले । हे बेटा ! पचास हाथी लेलो और हाथ उठा लो ।

हे बाबा ! हाथी को हाथी-शाला मे रख छोड़ो । मै हाथी और हौदे का भूखा नही हूँ ।

साला मनाने आये। हे जीजा ! पचास घोड़े लो और हाथ उठाओ बड़ी देर हो रही है।

हे बाबू ! अपने घोड़े घोड़ेसाल में रख छोड़ो। हमारे यहाँ बहुत-से घोड़े हैं। मैं घोड़े और जीन का भूखा नहीं हूँ ॥३॥

सास मनाने आई। हे बेटा ! मानिक की अंगूठी लो और हाथ उठाओ।

हे सासजी ! अपने हीरा-मोती अपने पास रख छोड़ो। हीरों का तो हमारे यहाँ अम्बार लगा है। मैं अँगूठी और धन-दौलत का भूखा नहीं हूँ ॥४॥

सरहज मनाने आई। हे बाबू ! हाथ का बिजायठ लो और हाथ उठाओ।

अपने बिजायठ रख छोड़ो। गहनों से संदूक भरा है। हे बीबी ! बिजायठ की मुझे साध नहीं ॥५॥

साली मनाने आई। हे जीजा ! हमारे पास फूटी कौड़ी भी नहीं है। तुमको भेंट क्या दूँ ? अपनी याद छोड़ जाओ। अपने प्रेम से जो भेंट हम दें, सो लो और हाथ उठाओ ॥६॥

दुल्हे ने इतना वचन सुना। सुनने भी न पाये कि चौकी पर बैठ गये। भोजन किया और पान खाकर बाहर गये ॥७॥

इस गीत में धन के मुकाबले में प्रेम और नम्रता का महत्व दिखाया गया है।

[७२]

मेरी लाडो सोवे अटारियाँ, तले झूमर ऊपर बालियाँ ॥ १ ॥
लाडो सोय-साय जब जागिये,
अपने दादल से बर माँगिये।
दादल एक कहा मेरा मानियो, साँवरा बर मत ढूँढ़ियो ॥ २ ॥

पोती मत करै मन पछतावला,
तेरी दादी गोरी दादा साँवला ॥ ३ ॥
बेटी सोय-साय जब जागिये, अपने पीता से वर माँगिये।
पिता एक कहा मेरा मानियो, साँवरला वर मत ढूँढियो ॥ ४ ॥
बेटी मत करै मन पछतावला,
तेरी अम्मा गोरी पिता साँवला ॥ ५ ॥
बेटी सोय-साय जब जागिये, अपने भाई से वर माँगिये।
भैया एक कहा मेरा मानियो साँवरला वर मत ढूँढियो ॥ ६ ॥
बहन मत करै मन पछतावला,
तेरी भाभी गोरी भैया साँवला ॥ ७ ॥
(मुज़फ्फरनगर)

मेरी लाडली बेटी अटारी पर सोती है। उसके कान में नीचे झूमर लटक रही है, ऊपर बालियाँ है ॥ १ ॥

सो-साकर बेटी जगी, तब उसने अपने दादा से वर माँगा। हे दादा ! मेरा एक कहना मानना कि साँवला वर न ढूँढना ॥ २ ॥

हे बेटी ! मन में पछता न, तेरी दादी गोरी है और दादा साँवला ॥ ३ ॥

बेटी सो-साकर जगी, तब उसने अपने पिता से वर माँगा। हे पिता ! मेरा एक कहना मानना कि साँवला वर न ढूँढना ॥ ४ ॥

हे बेटी ! मन में पछता न, तेरी माँ गोरी है और पिता साँवला ॥ ५ ॥

बेटी सो-साकर जब जगी, तब उसने अपने भाई से वर माँगा। हे भाई ! मेरा एक कहना मानना, मेरे लिये साँवला वर न ढूँढना ॥ ६ ॥

हे बहन ! मन में पछता न, तेरी भावज गोरी है और भैया साँवला ॥ ७ ॥

सारा खान्दान ही सांवला था, तब बेटी के साथ सहानुभूति तो किसकी होती ? पर इस गीत से कन्या के मन की थाह तो मिल ही जाती है कि कन्या गोरे रंग के वर को विशेष पसन्द करती है।

[७३]

पाँच पंडा बोल बाबुल उन घर कन्या न औतरै।
एक निर्धनि ह जिन देउ बाबुल, रहन देउ कुवाँरी।
निधनी जब तडप बोलै अनुख मेरे जिय को सहै॥ १॥
एक हरजोतिया जिन देउ बाबुल रहन देउ कुवाँरी।
हरजोतिया हर जोत आवै, माँगे नौ दस रोटियाँ।
भरके कठौता छाछ माँगे अनुख मेरे जिय को सहै॥ २॥
एक जुआरिहिं जिन देउ बाबुल, रहन देउ कुवाँरी।
इन्न हारे द्रव्य हारे कबहूँ की बेरा हमे हारे,
लाज तुम्हे आय है॥ ३॥
एक पढे पंडित देउ बाबुल जासे महा सुख पाय है।
हाथ धोती बगल पोथी
देखि सब जग सीस नवाय है॥ ४॥
(इटावा)

हे बाबा ! पाच पाडवो या पडो को सुमिरो। उनके घर कन्या नहीं पैदा होती।

हे बाबा ! धनहीन को कन्या न देना, बल्कि कोंरा रहने देना। धनहीन जब तड़पकर बोलेगा तब झुँझलाहट कौन सहेगा ?॥ १॥

हल जोतनेवाले को भी कन्या न देना, बल्कि कुमारी रहने देना। वह हल जोतकर आयेगा नौ-दस रोटियाँ मागेगा। कठौता भरकर मट्ठा मागेगा। झुझलाहट कौन सहेगा ?॥ २॥

जुआरी को भी कन्या न देना, चाहे कुमारी रहने देना। लाजशरम

हारेगा, धन-दौलत हारेगा, कभी मुझे भी हार देगा, तुमको लज्जा आयेगी ॥ ३ ॥

अच्छे पढे-लिखे पडित को देना, जिससे खूब सुख पाऊँगी। जिसके हाथ मे धोती और बगल मे पोथी होगी, सारा संसार उसे देखकर सिर झुकायेगा ॥ ४ ॥

कन्या की इच्छा कितनी सुन्दर है ?

[७४]

लाडो की अम्मा अरज करे हो मेरा लायक सा,
समधी ढूँडियो, कुलकी मेरी समधिन ढूँडियो।
चन्द्र-वदन से लडका ढूँडो मेरे कान्हा की उन्हार ॥ १ ॥
जो तुम ढूँडो भोंडी सूरत के बुरैली सूरत के,
मरूँगी जहर विष खाय।
मरूँगी आख धतूरा खाय तोरी सेजो न दूँगी पैर ॥ २ ॥
(मेरठ)

दुलारी बेटी की मा उसके पिता से विनती करती है कि योग्य समधी ढूढना। कुलवन्ती समधिन ढूढना। चद्रमा के समान मुख वाला वर ढूढना, जैसा मेरा कान्ह (कृष्ण या पुत्र) है ॥ १ ॥

यदि तुम भोंडी सूरत शकल का, भद्दे रूप-रग का वर ढूढोगे तो मै विष खाकर, मदार और धतूरा खाकर मर जाऊगी और तुम्हारी सेज पर कभी पैर न रक्खूँगी ॥ २ ॥

माता को भी कन्या के वर के बारे मे कितनी चिंता रहती है, इस गीत मे यह दिखाया गया है। सेज पर पैर न रखने की सज़ा साधारण नहीं है।

[७५]

लील लील घोडवा कँवर असवरवा रे,
कुरखेते उठ गइली धूर रे।
चन्द्र झरोखवन ठाढी रे माता नीहारेली,
धीया दस आवर होय रे ॥ १ ॥
हथिया त आवेले अनती से गनती रे,
घोडवा जे आये सो साठि।
मारे बरतिया के कससस रहीवो न सूझै,
पावन खेह उधीराय रे ॥ २ ॥
होत बिहान परल मोरो सेनुर,
नव लाख दाहेज थोर रे।
भीतरी कै गेडुवा बहर दै मरली,
सतरू के धीया जनी होइ हो ॥ ३ ॥
समधी जे बइठैले लाली पतेंगिया हो,
आप प्रभु सथरी बिछाइ रे।
समधी जे छाँटै लै लमी लमी बतीया रे,
आप प्रभु सीर नवाइ रे ॥ ४ ॥
ई धीअवा मोरी अयेरनी बयेरनी,
ई धीया, सत्रु हमारि रे।
ई धीअवा मोर नग्र लुटावली,
अवरो हरली मोर गेयान रे ॥ ५ ॥

(गाज़ीपुर)

कुँवर (वर) नीले घोड़े पर असवार है। घोड़े की टापों से ऐसी धूल उड़ी, जैसी कुरुक्षेत्र मे उड़ी थी। माता चन्द्राकार झरोखे पर खड़ी होकर देख रही है। वह प्रसन्न होकर कहती है कि और भी दस

कन्याये हो ॥ १ ॥

हाथी तो अनगिनती आये। साठ सौ घोड़े आये। बरातियों की कसमस मे राह नही दिखाई पड रही है। उनके पैरो से बहुत धूल उठ रही है ॥ २ ॥

सवेरा होते-होते कन्या की मोग मे सिन्दूर पडा, तब नौ लाख दहेज भी कम समझा गया। माता ने भीतर का लोटा भी बाहर पटक दिया और कहा—शत्रु के भी कन्या न हो ॥ ३ ॥

समधी लाल पलग पर बैठे है। मेरे प्रभु (कन्या के पिता) चटाई बिछाकर बैठे है। समधी लम्बी-लम्बी बाते छाँट रहे है, मेरे प्रभु सिर नवाये बैठे है ॥ ४ ॥

यह कन्या मेरी वैरिन है। इसने मेरा नगर लुटवा लिया और मेरी सुध-बुध भी हर ली ॥ ५ ॥

विवाह की धूम-धाम और दहेज की कुप्रथा से कन्या की माता के हृदय मे जो उतार चढाव होता है, इस गीत मे उसका सच्चा चित्र खीचा गया है।

[७६]

बाबल तेरा सीकों का घरवारे, बाबल चिडियाँ तोड गई।
बेटी और छवाय लूगा री, लाडो घर जाओ आपने ॥ १ ॥
बाबल तेरा चौका जो सूना रे, बाबल तेरी धीय बिना।
बेटी बामनी लगाय लूगा री, लाडो घर जाओ आपने ॥ २ ॥
बाबल तेरा पानी जो भिनकै रे, बाबल तेरी धीय बिना।
बेटी कहारी लगा लूगा री, लाडो घर जाओ आपने ॥ ३ ॥
बाबल मेरा डोला जो अटका रे, बाबल तेरे महल मे।
बेटी दो ईट खिचाय दूगा री, लाडो घर जाओ आपने ॥ ४ ॥

बाबल मेरी गुडिया जो सूनी रे, पिताजी तुमरी बेटी बिना।
बेटी मेरी पोती जो खेले री, लाडो घर जाओ आपने ॥ ५ ॥

(मेरठ)

हे बाबा ! तेरा घर सीको का बना है। उसे चिडियाँ तोड़ गईं। हे बेटी ! दूसरा छवा लूँगा, तुम अपने घर जाओ ॥ १ ॥

हे बाबा ! तेरी कन्या के बिना तेरी रसोई सूनी है। हे बेटी ! ब्राह्मणी लगा लूँगा, तुम अपने घर जाओ ॥ २ ॥

हे बाबा ! तेरी कन्या के बिना तेरा पानी-घर भिनक रहा है। हे बेटी ! कहारिन लगा लूँगा, तुम अपने घर जाओ ॥ ३ ॥

हे बाबा ! तेरे महलों मे मेरा डोला अटक गया है। हे बेटी ! दो ईंटे और जुडवा लूँगा ? तुम अपने घर जाओ ॥ ४ ॥

हे पिताजी ! तेरी बेटी बिना गुडियां सूनी हो जायँगी। हे बेटी ! मेरी पोती खेलेगी। तुम अपने घर जाओ ॥ ५ ॥

कन्या विवाह के बाद पराई हो जाती है। पिता उसे घर मे नहीं रख सकता।

[७७]

हरो हरो गुबरा पीअरो है माटी,
रनीआँ ने महल लीपाओ।
महलन उपर कागा जो बोलै, कागा के बचन सुहाउन ॥ १ ॥
उड़ौ न कागा तुम्है दिहै धागा,
सोनवा मढ़ईयौ तोरी चोंच।
जो रे बीरन घर आवैरे रूपा मढ़इयौं तोरी पाँख ॥ २ ॥
कागा विचारे जनौं न पाये बीरन ठाढ़े है दुआर।
बीरन आये कुछ न लाये सासु ननद मन रूठी ॥ ३ ॥

जेठानी नीसो दिन बोला रे बोले बीर मोर चले है रिसाय।
हाथन मेहदी पायेन जेहरी कैसे मनामै राजा बीर ॥ ४ ॥

सासु ननदिआ पैइओ तोरी लागौ,
तुमहीं मनावो राजा बीर।
हाथा की मेहदी धोई तुम डारो पायेन डारो उतार
झपट मनावो राजा बीर ॥ ५ ॥

घोडन की बाघा पकरे बेटी जो रोमै,
बीर मोरे धूपे नवारो।
धूप नेवारौ बहिनी बागा बगीचा, और ददुली केरे देस ॥ ६ ॥
ऊँचे चढ़ि चढि माया जो हेरै अवत बहिन औ भाय।
छूछे डोलीआ छूछे कहरवा, टूठे पूत घर आमै ॥ ७ ॥
बैठो न पूत मोरे लाले पलिंग पर, कहो बहिन केरी बात।
बहिनी के रोवे मॅ छतीआ फटत है, बरसत बड़े बड़े मेघ ॥ ८ ॥
कैसे उपजे पूत सपूत बहिनी रोवत कैसे छाड़ी।
करो न माया मोरी पूरीआ कचोरीआ,
बहिनी चलन हम जान ॥ ९ ॥
करो न भौजा मोरी डबीआ पोटरीया, बहिनी चलन हमजान।
उचे चढ़ि चढि बहिनी जो हेरै, आवत बीर हमार ॥१०॥
बीर आये चीर लाये, सासु ननद हँसि बोलीं।
सासु का हरो ननद का पीअरो, हमका दखिन केरो चीर ॥११॥
मैलो कुचैलो छोरौ न बहिनी, पहिरो दखिन वाली चीर।
ऊँचे पलिंग पर जनि बैठो बीर, पूछौ न सजन हमार ॥१२॥
पठवौ न साजन बहिनी हमारी, सामन रहे दिन चार।
सामन सब बेटी झूला जो झूलै, भादों गरुये गंभीर ॥१३॥

कुआँ सबै बेटी नेवरता जो खेलै, कातिक गौरी सेरामै।
अगहन सबै बेटी गौने जो जहियै,
तब हम बहिन पठामै ॥१४॥
(आगरा)

ताजा गोबर और पीली मिट्टी, दोनो मिलाकर बहू रानी ने महल लिपवाया। महल के ऊपर कौवा बोल रहा है। कौवे के बचन बड़े सुहावने है ॥ १ ॥

हे कौवा ! उड़कर जाओ न ? तुमको धागा (रेशम का तागा गले मे बांधने के लिये) दूँगी, सोने से तुम्हारी चोच मढ़ाऊँगी, मेरे भैया घर आयेंगे तो तुम्हार पंख चांदी से मढ़ाऊँगी ॥ २ ॥

कौवा अच्छी तरह बोल भी न पाया था कि भाई दरवाजे पर खड़े है। भाई आये, और कुछ नही लाये, इससे सास और ननद मन मे रूठ गई हैं ॥ ३ ॥

निठुर जेठानी ने बोली मारी। मेरे भाई नाराज होकर चले गये। मेर हाथो मे मेहदी लगी है, पैरो मे जेहरी (एक गहना) है, बाहर जा नही सकती। मै भाई को कैसे मनाऊँ ? ॥ ४ ॥

हे सासजी और ननदजी ! तुम्हारे पैर लगती हूं, तुम्ही राजा भाई को मना लो। दोनो ने कहा—हाथो की मेंहदी धो डालो और जेहरी उतार डालो, झपटकर राजा भाई को मना लो न ? ॥ ५ ॥

घोड़े की बाग पकडकर बहन रोने लगी कि हे भाई ! धूप मे न जाओ। भाई ने कहा—हे बहन ! (रास्ते के) बाग-बगीचो मे और अपने बाप के देश मे धूप मिटा लूँगा ॥ ६ ॥

ऊँचे पर चढ़कर मो देखने लगी कि बहन और भाई आ रहे हैं। पर उसने देखा कि छूँछी डोली, छूँछे कहार और रूठे पुत्र घर आ रहे हैं ॥ ७ ॥

हे पुत्र ! मेरी लाल पलँग पर बैठो और बहन की बात सुनाओ। हे माँ ! बहन का रोना सुन कर तो छाती पटती है, जैसे बड़े-बड़े बादल बरसते है ॥ ८ ॥

हे पुत्र ! तुम कैसे सपूत उपजे, जो रोती हुई बहन को छोड़ आये ? हे माँ ! पूरी और कचौड़ी बना दो, मै बहन को लाने जाऊगा ॥ ९ ॥

हे मेरी भावज ! डिबिया और पोटरी (गठरी) तैयार कर दो, मै बहन को लाने जाऊँगा। ऊँचे पर खड़ी होकर बहन देख रही है कि मेरे भाई आ रहे है ॥ १० ॥

भाई आये, चीर लाये। सास और ननँद ने हँस कर बात की। सास को हरे रग की, ननँद को पीले रग की साड़ी और मेरे लिए दक्खिनी चीर लाये ॥ ११ ॥

हे बहन ! मैला-कुचैला कपड़ा उतार डालो न ? दक्खिनी चीर पहनो। हे भाई ! ऊँची पलँग पर अब चढ़कर न बैठो और मेरी विदाई के लिये मेरे सजन को पूछो ॥ १२ ॥

हे सजन ! मेरी बहन को विदा कर दो। अब सावन के चार ही दिन रह गये है। सावन मे सब बेटियाँ झूला झूलती है। भादो मे बड़ी बरसात होती है ॥ १३ ॥

क्वार मे सब बेटियाँ नेवरता (?) खेलती है और कातिक मे गौरी (गोबर की बनी पार्वती) की मूर्ति सोराती हैं। अगहन मे जब सब बेटियाँ गोने जाने लगेगी, तब मै बहन को भेज दूँगा ॥ १४ ॥

पहली बार बहन को घर ले जाने के लिये उसका भाई आया था, पर कुछ ले नही आया था, इससे बहन की ससुराल मे उसकी कुछ क़दर नहीं हुई। लेकिन दूसरी बार जब साड़ियाँ और कुछ खाने-पीने की चीज़ें लेकर आया, तब उसकी बड़ी आवभगत हुई।

[७८]

एक ही घरवा के बत्तीस दुआर हो,
बत्तीसों दुअरवा पर मरिच के गाँछ।
सेर भर मरिच हो सासू सिलवटी धरी देइ हो
मरिच पीसत हो सासू धूपे आठो अग हो॥ १॥
जेहूँ तोरा बहुआ रे धूपल आठो अग हो।
अपना बाबा घर से चेरिया बोलाउ॥ २॥
हमरा बाबाजी के का करबू जोर हो।
नाचेला नचनियाँ रे, भइया बकसले घोड॥ ३॥
मोरा पिछुअरवा कहँरवा हित भइया हो।
अइसनी लोलारी बहुअवा नइहर पहुँचाव॥ ४॥
झररे झरोखा चढ़ी अम्मा निरेखे हो।
कुस देखो बेटी के डडिया झलकत आवे हो॥ ५॥
किया बेटी चोरिनी रे, किया बेटी चटनी हो।
किया बेटी दीहलु हो सासू के जवाब॥ ६॥
नाही बेटी चोरनी हो नाहीं बेटी चटनी हो।
इन बेटी दीहली हो सासू के जवाब॥ ७॥
एक भर अइलु हो बेटी दुई भर जाहू हो।
ढँकले ओहारल बेटी सासुर जाहू॥ ८॥

(आज़मगढ़)

एक घर के बत्तीस दरवाज़े है। बत्तीसो दरवाज़ो पर मिर्च के पेड़ है। सेर भर मिर्च पीसने के लिये सास ने सिल पर रख दिया। हे सासजी! मिर्च पीसते-पीसते आठो अंग बेदम हो जाते हैं॥१॥

हे बहू! मिर्च पीसने से तुम्हारे आठो अंग थक जाते है तो नैहर से दासी बुलाओ॥२॥

मोहन भोग बम्बई परसौ, गोला आमुनि जामुनि परसौ, खरबुजवा तुम सब के परसौ, सोया हिंगहा जुगिया परसौ, देसी आम सबी के परसौ, कंचन भरि भरि थार। पुरोहित करि करि के सतकार। परासौ सब नर बारबार।

जुगति से परसौ जी जेवनार ॥३॥

गंगा जल जमुना जल परसौ, नदी नरवदा को जलु परसौ, सरजू का जलु सब कै परसौ, सिंध सरमुती को जलु परसौ, कावेरी कृश्ना जलु परसौ, मानसरोवर को जलु परसौ, नदी गंभीरी को जलु परसौ, फलगू महानदी को परसौ, ठडे जल सब ही के परसौ, हा हा करि करि सब के परसौ, बिनती करि करि भोजन परसौ, हाथ जोरि के सब के परसौ, प्रेम प्यार करि सब के परसौ, छोटे बडे सबी के परसौ, आदर करि करि सब के परसौ समधी लमधी के ढिग परसौ, चारो भाइन के ढिग परसौ, गुरु वशिष्ठ तर जल्दी परसौ, ऋषि गुनियो तर जल्दी परसौ, सबै देवतन के ढिग परसौ, हाथ धुलाओ पान खवाओ, आभूषण वस्तर पहिरावौ, जनवासे सब को पहुँचावौ, करि करि वाहन त्यार। गावै तुलसीदास गँवार, जुगति से परसौ, जी ज्योंनार ॥४॥

इस गीत मे भोजन के चोष्य, चर्व्य, लेह्य, पेय, सब प्रकार के पदार्थों के नाम गिनाये है। पता नहीं, इसके रचयिता "तुलसीदास गँवार" वही सुप्रसिद्ध तुलसीदास है, या गीत को प्रचलित करने के लिये किसी चतुर ने यह 'गँवारपन' किया है। गीत मे जिन पदार्थों के नाम आये हैं, वे ये हैं—

पेड़ा, बरफ़ी, अमिरती, खाजा, खुरमा, घेवर, गुपचुप, सोहन-हलुआ, कलाकन्द, मक्खन, बरा, जलेबी, पेठा, इन्दरसा, बून्दी, बतासा, खुर्चन,

परसौ, मालपुआ अरु पूआ परसौ, दाल भात सन्नाटी परसौ, मूँग समूची सब के परसौ, कढ़ी करायल रौतो परसौ, खट्टे मिट्ठे बरा परोसौ, सुरुभी को घिउ गड़ुअन परसौ, रसगुल्ला रसदार।

जुगुति से परसौ जी ज्योनार ॥१॥

सोया मेथी मरसो परसौ, सरसौ अरु चौरय्या परसौ, पालक पोय भमूँडे परसौ, मूरी मिरचै सब के परसौ, हरी-हरी तुम धनियाँ परसौ, कटहर बडहर लौकी परसौ, कद्दू और करेल परसौ, रायलभेरा भाटा परसौ, भिंडी घिआ तुरैया परसौ, पेठा की तरकारी परसौ, आलू और रतालू परसौ, पृथ्वीकन्द चचेड़ा परसौ, अदरख की तरकारी परसौ, केला की तरकारी परसौ, धनियाँ की तुम चटनी परसौ, बथुआ की तरकारी परसौ, पोदीना की चटनी परसौ, छिरिका गलका अमरस परसौ, आम अचारी सूखा परसौ, दाख मुरब्बा सब के परसौ, अदरख कमरख सब के परसौ, सबी खटाई सब के परसौ, हा हा करि करि जल्दी परसौ, सत्य भाव से सब के परसौ, करि करि के सतकार।

जुगति से परसौ जी ज्योंनार ॥२॥

सिलहट की नारंगी परसौ, फरुखाबादी मिठवा परसौ, सेव तूत सहतूत चिरौजी चिलगोजा अखरोटन परसौ, प्रागराज की सकड़ी परसौ, गरी छुहारे पिस्ता परसौ, नरम मखाने सब के परसौ, खिन्नी और लुकाठन परसौ, अनन्नास अंगूरन परसौ, जल्द चिरौजी सब के परसौ, मूँगफली भरि दोना परसौ, किसमिस आम टिकारी परसौ, नौधा अरु तरबुजवा परसौ, चपटा और मालदहा परसौ,

मोहन भोग बम्बई परसौ, गोला आमुनि जामुनि परसौ, खरबुजवा तुम सब के परसौ, सोया हिंगहा जुगिया परसौ, देसी आम सबी के परसौ, कंचन भरि भरि थार। पुरोहित करि करि के सतकार। परासौ सब नर बारबार।

जुगति से परसौ जी जेवनार ॥३॥

गंगा जल जमुना जल परसौ, नदी नरवदा को जलु परसौ, सरजू का जलु सब कै परसौ, सिंध सरमुती को जलु परसौ, कावेरी कृश्ना जलु परसौ, मानसरोवर को जलु परसौ, नदी गंभीरी को जलु परसौ, फलगू महानदी को परसौ, ठडे जल सब ही के परसौ, हा हा करि करि सब के परसौ, बिनती करि करि भोजन परसौ, हाथ जोरि के सब के परसौ, प्रेम प्यार करि सब के परसौ, छोटे बडे सबी के परसौ, आदर करि करि सब के परसौ समधी लमधी के ढिग परसौ, चारो भाइन के ढिग परसौ, गुरु वशिष्ठ तर जल्दी परसौ, ऋषि गुनियो तर जल्दी परसौ, सबै देवतन के ढिग परसौ, हाथ धुलाओ पान खवाओ, आभूषण वस्तर पहिरावौ, जनवासे सब को पहुँचावौ, करि करि वाहन त्यार। गावै तुलसीदास गँवार, जुगति से परसौ, जी ज्योंनार ॥४॥

इस गीत मे भोजन के चोष्य, चर्व्य, लेह्य, पेय, सब प्रकार के पदार्थों के नाम गिनाये है। पता नहीं, इसके रचयिता "तुलसीदास गँवार" वही सुप्रसिद्ध तुलसीदास है, या गीत को प्रचलित करने के लिये किसी चतुर ने यह 'गँवारपन' किया है। गीत मे जिन पदार्थों के नाम आये हैं, वे ये हैं—

पेड़ा, बरफ़ी, अमिरती, खाजा, खुरमा, घेवर, गुपचुप, सोहन-हलुआ, कलाकन्द, मक्खन, बरा, जलेबी, पेठा, इन्दरसा, बून्दी, बतासा, खुर्चन,

मलाई, खोवा, बालूशाही, लड्डू, दालमोट, मठरी, तिकोना (समोसा), बूरा, मिश्री, रबड़ी, दही, सिखरन, दूध, पूरी, कचौड़ी, लुचुई, खस्ता, कचौड़ी, बेसन का बरा, पकौड़ी, हापड़ के पापड़, मालपुआ, पूआ, दाल, भात, मूँग, कढ़ी, रायता, खट्टे मीठे बरे, गाय का घी, रसगुल्ला, सोआ-मेथी-मरसे का साग, सरसो, चौराई का साग, पालक-पोई का साग, भसीड़, मूरी, मिर्च, हरी धनियाँ, कटहर, बड़हर, लौकी, कद्दू, क ला, भाँटा, भिंडी, घिया-तुरोई, कोहँड़ा, आलू, रतालू, जमीकन्द, चचेंडा, अदरक, केला, बथुआ, पोदीना, अमरस, आम का अचार, दाख का मुरब्बा कमरख, सिलहट की नारंगी, फरुखाबाद की मिठाई, सेब, शहतूत, चिरौंजी, चिलगोज़ा अखरोट, प्रयाग की सकड़ी गड़ी, छुहारा, पिस्ता, मखाना, खिन्नी, लुकाट, अनन्नास, अँगूर, मूँगफली, किसमिस, आम, तरबूज, गाल-चपटा-मालदह-मोहनभोग और बम्बई आम, जामुन, खरबूजा, हिगहा, ? जुगिया, ? गङ्गा, जमना, नर्मदा, सरयू, सिन्धु, सरस्वती, कावेरी, कृष्णा मानसरोवर, गंभीरी, फलगू, महानदी आदि नदियों का ठंडा जल।

इस गीत में खाने-पीने की प्राय. सभी ख़ास ख़ास चीज़ों के नाम आ गये है। साथ ही हिन्दुस्तान भर की सुप्रसिद्ध नदियों के नाम भी आ गये है। गानेवालियों को खाने-पीने की चीज़ों के नाम ही नहीं, बल्कि भगोल की यह शिक्षा भी गीतों के द्वारा मिलती रहती है।

——)०(——

अनुक्रमणिका

अ

गीत न०		पृ० स०
२५	अपने पिया कि पियारी	२६७
४६	अरी अरी काली कोइलि	३२८
८	अरे ओ श्यामा चिरइया	६८
२८	अरे ओ बेटी पियारी	३००
४४	अरे अरे कारी कोइलिया	३१८
४६	अरे अरे काला सँवरया	३२१
६५	अलबेली जच्चारानी	१६०

आ

१	आजु मोरे लीपन पोतन	२२४
६६	आजु सोहाग कै राति	३५२
४७	आधे तलवा मों हस	३२५

इ

२	इमली क पेड़ सुरुहुर	२३७

उ

१३	उठत रेख मसि भीनत	१०५
१६	उत्तर हेरयो दक्खिन	२८५
५७	उवहु सुरुज मनि उवहु	२३६

ऊ

१५	ऊँच ऊँच कोटवा	२८४
२३	ऊँचि डगरिया क कुइँया	१७१
१४	ऊँच ओसरवा कवनरामा	२४७
१४	ऊँच ऊँच बखरी उठावै	२८३
४५	ऊँच नगर पुर पाटन	३१६

ए

१६	एक साध मन उपजी	११२
३	एक सौ अमवा	२१३
७८	एक ही घरवा के	३६८

ऐ

१७	ऐ कनउजिआ के ब्राह्मन	२५१

अं

३२	अंगना चंदा बडो रुख	१३५
५६	अगने मे फिरइ जच्चा	१७७
५१	आँख तोरी देखूँ ये	३३१

क

७२	कनक दियट दियना	३५६
४६	कमर मे सोहै करधनियाँ	१६३
८	करो न माया मेरी	२४१
७८	कारिक पियारि	२२०
४६	काहे क चनना उतारेउ	१६७
५७	काहे क अमवा हरियर	१७८
१०	कौहें को हरुला	२४३
१७	काहे बिन सून अँगनवा	२८६
२१	कि गुन अमवा	११८
२०	की हो दुलहे रामा	२६०
६३	कुँअवा खोदाये कवन	१८७
४२	केकर ऊँच मदिलवा	१५४
६३	केथुअन छाइला	३४८
३३	के मोरी नौरंगिया	१३६
४३	कोठा उठावो	३१७
१६	कोठवा से उतरी	१०८
६२	कोइली जे बोले अमवा	३४६
१	कौन की ऊँची अटरिया	२६२
५	कौन गरहनवा बाबा	२६६

गीत नं०		पृ० सं०
२६	कोप भवन राजा	१३०
६०	कौने बन उपज	१८३
१८	कँहवहि के गढ़ थवई	२८७
४१	कँहवा ते सोना आये	३१५
	ख	
२७	खाइ लेहू खाई रे लेहू	२६६
३	खिडकी ही बैठली	८३
	ग	
११	गंगा किनारे बरुआ	२४४
१	गंगा जमुनवाँ के बिचवा	८१
४	गगा जमुन बिच ओतर	२३८
४१	गरजौ हे दैवा गरजौ	१५२
७	गया जी मे बरुआ	२४०
५५	गहिरी जमुनवाँ के	१७६
१६	गलिया के गलिया	२४६
	घ	
१	घर घर घुमहि नउनिया	२५५
२१	घर मे से निसरेली	२६१
१३	घोड़े चढु दुलहा तु	२७६
	च	
१०	चकई पुछहि सुनु	१०१
५०	चनना कटाइउँ पलंगा	१६७
१२	चनन कै बिरछा हरेर	२४५
२	चलहु न सखिया	८२
२४	चैतहिं कै तिथि नवमी	१२२
५६	चैतहि क तिथि नवमी	१८१
७५	चैतेहि की तिथि नवमी	२१५

गीत नं०		पृ० सं०
१८	चैतहि बरुआ तेज चले	२५२
	छ	
२०	छापक पेड छिउलिया	११५
२६	छापक पेड लिउलिया	१२३
४५	छापड पेड छिउल कर	१५६
१२	छोट मोट पेडवा	१०३
	ज	
१५	जउ मै जनतेउँ	१०६
७०	जब हम रहे जनक	२०४
६५	जाने न देव बर	३५१
४४	जिरवै अस धन पातरि	१५७
७६	जुगुति मे परसौ	३६६
५१	जेठ तपै दिन रात	१६६
३६	जेठ बैसखवा क दिना	१४३
५८	जेठ बैसखवा को गरमी	१८०
५४	जौने देश हिंगिया न	१७२
	त	
३२	तुम पिया की पियारी	३०६
	द	
२	दिन तौ सून सुरुजबिन	१८२
५८	दुअरे हे आवत	३४०
६	देउ न मोरी माई बाँझे	२७०
६८	देहरी के ओट धन	१६४
१	देहु न माता मोहिं	२३६
६	द्वारेन द्वारे बरुवा	२३८
	ध	
३५	धीरे धीरे बैठ ननद	१४२

गीत नं		पृ० सं०
	न	
२२	नजर कइ मतल बढ़इया	१२०
६	नदिया के ईरे तीरे	२४०
५६	नदिया क ईरे तीरे दुलहे	३३७
६६	ननद भौजाई दूनौ	१६७
२०	नवदुअरिया नव खभा	२५४
२	ना बाबा बजना बजायो	२२८
६७	नाहक गौन दिहे	३५३
१२	नीले नीले घोड़वा छैल	२७८
	प	
३१	पनवा कतरि २ भाजा	३०५
५२	पलँग जो आये बिकाय	१७०
११	पहिल सपन एक देखेऊँ	१०२
४	पहिले मँगन सीता	२६८
५६	पाने के पात झिलामिल	३४१
२३	पावो मे पैजनिया लाला	१२१
७३	पाँच पडा बोल बाबुल	३६०
६८	पाँच बरिसवा कै मोरी	२५४
८	पिया अपने को प्यारी	२७३
३०	पिया बैइठन के मचिया	१३२
६१	पिया मोर चललें	१८४
७	पुरब पछिम मोरे बाबा	२७१
२४	पुरुब पछौहाँ मोरे बाबा	२१५
	फ	
४३	फुल एक फुलइ गुलाब	१५६
	ब	
६१	बनवारी हो हमरा	३५४

गीत नं०		पृ० सं०
६४	बना मेरो कुंजन से बनि	३४१
५४	बाजत आवै ककरहिली	३३४
५५	बाजत आवै ककरैला	३३५
७७	बाबा जी बियहिन	२१८
१६	बाबा गाहरावौ	२८६
३	बाबा जे चलेन मोर बर	२६६
७६	बाबल तेरा सीरो का	३६३
२६	बिमल किरतिया तोहरी	२६८
३६	बेरिया कि बेर	३१०
	भ	
७	भोर भये भिनुसार	६३
	म	
२२	मचियहि बैठी पुरखिनि	२६२
६	मचियहि बैठा है सासु	१००
१३	मलिया मौर नाही गाछै	२४६
७१	माघै कै तिथि नवमी	२०८
४०	माहे सुगहा जे मोरवैं	३१४
७२	मेरी लाडो सोवे	३५८
१८	मै तो पहले जनौगी	१११
२३	मैया दिया है गगरी	२६४
१७	मोरे आँगन चंदन	११०
३६	मोरे पिछुवारे लौग	३१३
३३	मोरे पिछुरवाँ	३०७
३४	,, ,,	३०८
६४	मोरे पिछुवरवाँ	१८८
२६	मोरे मन बसि गये चतुर	३०१
५३	मोरे के अँगना तुलसिया	३३३